Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Jagran May-July 1932 G.K.U.

amaj Foundation Ch

omain. Gurukul

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

110530

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

RT-867

110530

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जागरण

साहित्यिक पाक्षिक पत्र

110530

प्रकाशित हो गया ! प्रकाशित हो गया !!

नर-पशु

पुस्तक-मंदिर द्वारा—

मैक्सिम गोर्की-लिखित— रूसी उपन्यास

मूल्य एक रुपया

वार्षिक मूल्य ३) विदेशों के लिये ४)
छमाही ,, १॥) प्रति अंक ≈)

110530

पुस्तक-मन्दिर काशी द्वारा प्रकाशि...

वर्ष १

...क बनिये। अपने...

निवेदक—मै... पूजन कार्यालय, खंडवा, सी० पी०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्षिक मूल्य ६)] हिन्दीका श्रेष्ठ सुन्दर सचित्र मासिक पत्र [एक अंक ।।-)

'प्रताप' की राय है

"....'विशाल-भारत' शुरूसे अब तक बराबर अपने पाठकोंके सामने बहुत सुन्दर, सुरुचिपूर्ण और उनके मानस-क्षितिजको ऊँचा उठानेवाले लेखों और कविताओंको उपस्थित करनेका यत्न करता रहा है। इसमें उसे बहुत अधिक सफलता मिली है।

'विशाल-भारत' के लेखोंके चयन, श्रेष्ठ सामग्रीके संकलन, गेट-अप आदिमें बराबर ही बड़ी सावधानीसे काम लिया जाता है। और यही कारण है कि पत्र इतना अच्छा निकलता है।

इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि आजकलकी हिन्दी पत्र-पत्रिकाओंमें 'विशाल-भारत' बिलकुल बेजोड़ और सर्वोत्कृष्ट पत्र है। हिन्दी-भाषा-भाषी सभी सज्जनोंसे हमारा अनुरोध है कि वे इस श्रेष्ठ पत्रको अपनाकर हर मास अनेक नई-नई बातें और ऊँचे विचार मनन करनेके सुअवसरसे लाभान्वित हों।" —'प्रताप'

हमारे यहांकी पुस्तकें

१—"कुमुदिनी" उपन्यास— रवीन्द्रनाथ ठाकुर मूल्य ३)
२—"रूसकी चिट्ठी" (सचित्र)— " " १।।)
...णी" (कहानियाँ)— " " १।।)
...र" (कहानि...)— " " १।)
५—"लम्बकर्ण" (सचित्र हास्य)—परशुराम मूल्य १।)
६—"भेड़ियाधसान"— " " " १।)
७—"क्रान्तिकारी कार्ल मार्क्स"— ... " ।)
...पन्यास)— ... " १)

"...ल-भारत" कार्या... ...लर रोड, ...कत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनता की पंचायत में एक स्वर से स्वीकृत

निर्भीक राष्ट्रीय हिंदी साप्ताहिक पत्र

रायल साइज़ के १२ से १६ पृष्ठ

स्वराज्य

वार्षिक मूल्य केवल ३) रुपये

पत्र का गठन, समाचारों का चयन, विषयों की विविधता, अग्रलेखों और टिप्पणियों की विचार-शीलता और ओजस्विता, तथा कविताओं, कहानियों और साहित्यालोचन की आकर्षकता एवं गहनता कुशल सम्पादकत्व का पूर्ण परिचय देती है। —'प्रताप' (कानपुर)

पत्र में पठनीय लेख-कविताओं का समावेश और सम्पादकीय विचार उच्च-श्रेणी के रहते हैं। समाचारों का संग्रह भी अच्छा है। —'वर्तमान'। (कानपुर)

स्वराज्य अपनी छोटीसी जिन्दगी में जिस तरह तरक्की कर रहा है, उसे देखने से इसके उज्ज्वल भविष्य का पता चलता है। पत्र का सम्पादन, छपाई, सफाई, सब सुन्दर है। —'देश' (पटना)

इस थोड़े से अर्से में इसने हिंदी-पत्र-जगत में अपना विशेष स्थान प्राप्त कर लिया है। पत्र सब तरह से सुसंपादित है। 'त्यागभूमि' (अजमेर)

पत्र का संपादन अच्छा होता है। छपाई-सफाई भी अच्छी है। —'भारत' (प्रयाग)

यह स्वतन्त्र विचारों से परिपूर्ण अत्यन्त निर्भीक पत्र है। इसका प्रकाशन वास्तव में हिन्दी-साहित्य की उत्तरोत्तर वृद्धि का द्योतक है। —'श्रीवेंकटेश्वरसमाचार' (बम्बई)

बाहरी और भीतरी दोनों दृष्टि से यह पत्र प्रशंसनीय है। 'आर्यमित्र' (आगरा)

इस पत्र में संपादकीय विचार माननीय और लेख-कविताएँ पठनीय होते हैं। —'सैनिक' (आगरा)

यह एक उच्चकोटि का समाचार पत्र और प्रौढ़ विचार-पत्र का सुन्दर समन्वय है। —'मर्री' ऊधुनखलत्र,

विषय-निर्वाचन बहुत सुन्दर और सम्पादन सफलता-पूर्वक हो रहा है। —'आर्यमहिला' (काशी)

इसने अपनी विशेषताओं के कारण यथेष्ट प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली है। —'सहेली' (प्रयाग)

पाठ्य-सामग्री और मूल्य को देखते हुए 'स्वराज्य' की गणना हिन्दी के सर्वप्रथम चार साप्ताहिकों में आसानी से हो सकती है। —'विशालभारत' (कलकत्ता)

इसने अल्पायु में ही ऊँचे दर्जे के पत्रों में अपना स्थान बना लिया है। —'चाँद' (इलाहाबाद)

'स्वराज्य' ने थोड़े ही समय में पर्याप्त प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली है। इसमें साधारण जनता से लेकर उच्चकोटि तक के साहित्यिकों के पढ़ने योग्य सामग्री रहती है। —'वीणा' (इन्दौर)

'स्वराज्य' में एक मासिक-पत्र जैसा साहित्य पढ़ने को मिल सकता है। —'हंस' (काशी)

इस विषय में सभी एकमत हैं कि

"स्वराज्य"

अपने ढंग का अकेला हिन्दी साप्ताहिक पत्र है।

आप ग्राहक बनिये। अपने मित्रों को बनाइए

निवेदक—मैनेजर, 'स्वराज्य'-कार्यालय, खंडवा, सी० पी०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी राष्ट्र

या

सूबा हिन्दुस्तान

लेखक—श्री धीरेन्द्र वर्मा, एम० ए०

पं० जवाहरलाल नेहरू—

"...हर सूरत से यू० पी० का नाम बदलना चाहिये। आपने 'सूबा हिन्दुस्तान' को कुछ छोटा रक्खा है। मैं तो समझता हूँ कि भाषा के लेहाज़ से कुछ और बढ़ सकता है।"

पं० कृष्णाकान्त मालवीय—

"मैंने पुस्तक को आज ही पढ़ भी डाला। बहुत ही सामयिक है और आपने इसे संसार के सामने रख देश की सेवा की है। विषय महत्वपूर्ण और विचारणीय है।"

दैनिक 'वर्तमान'—

"हिन्दी में आज तक जितनी उपयोगी पुस्तकें निकली हैं, यदि उन सबके ऊपर यह पुस्तक रक्खी जाय, तो शायद ही कोई समझदार हिन्दी-भक्त विरोध करेगा।"

मूल्य ॥)

पुस्तक मिलने का पता—**लीडर प्रेस, इलाहाबाद**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा-महाराजाओं के महलों से लेकर गरीबों की झोपड़ियों तक जानेवाली

एकमात्र सचित्र मासिक-पत्रिका

कविवर अयोध्यासिंहजी उपाध्याय

'वीणा' समय पर निकलती और पठनीय एवं गवेषणा-पूर्ण लेखों से सुशोभित रहती है।

साहित्याचार्य रायबहादुर जगन्नाथप्रसाद 'भानु'

'वीणा' में प्रायः सभी लेखों, कविताओं और कहानियों का चयन अच्छा होता है। सम्पादन कुशलता के साथ होता है।

वीणा

सम्पादक—
श्रीकालिकाप्रसाद दीक्षित
'कुसुमाकर'

वार्षिक मूल्य ४) एक प्रति ।≈)

साहित्याचार्य स्व० पद्मसिंहजी शर्मा

'वीणा' के प्रायः सब अंक पठनीय निकलते हैं।

सम्पादन बहुत अच्छा हो रहा है।

पं० कृष्णविहारीजी मिश्र बी० ए० एल्-एल्० बी० भू० पू० सम्पादक 'माधुरी'

'वीणा' का सम्पादन अच्छा होता है। इसमें साहित्यिक सुरुचि का अच्छा खयाल रखा जाता है।

प्रकाशक—मध्य-भारत-हिन्दी-साहित्य-समिति

मिलने का पता—मैनेजर, 'वीणा',
इन्दौर, INDORE, C. I.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हंस को अवश्य पढ़िए

'हंस' आपको अवश्य पढ़ना चाहिये; क्योंकि उसमें प्रति-मास सुरुचि-पूर्ण ७-८ कहानियाँ, कई लेख, कई कविताएँ तथा अंग्रेजी, बँगला, मराठी, गुजराती, उर्दू आदि भाषाओं के पत्रों से चुनी हुई मोतियों की तरह मूल्यवान् बड़ी आकर्षक और आवश्यक सामग्री रहती है। कहानियाँ इतनी अच्छी, आदर्श और रुचि-पूर्ण होती हैं, कि आप ब-खुशी अपनी बहू-बेटियों और बच्चों को पढ़ने के लिए दे सकते हैं। 'हंस' का प्रत्येक लेख, प्रत्येक कविता, युवकों में जान डालनेवाली, उन्हें एक उत्तम पथ बतानेवाली होती है। 'हंस' की एक-एक पंक्ति में अजीब जादू भरा होता है। उसका एक अक्षर भी व्यर्थ नहीं होता।

सम्पादक
औपन्यासिक-सम्राट्
श्रीमान् प्रेमचन्दजी

प्रतिवर्ष
दो बृहत् विशेषांक भी प्रकाशित होते हैं

अभी तक तीन विशेषांक निकल चुके हैं।

वार्षिक मूल्य ३॥) : एक अंक के ।=)

एक विशेषांक अभी-अभी 'आत्मकथा अंक' के नाम से प्रकाशित हुआ है! उसके विषय में जरा ये सम्मतियाँ पढ़ लीजिए—

'प्रताप'—
'इसे वास्तव में विशेषांक कहा जायगा। आत्मकथा-अंक निकालना दर असल एक नई सूझ है।

'वर्त्तमान'—
'यह अंक हिन्दी की एक याद रखने योग्य चीज़ हो गई और आगे के लिए इसने साहित्य के एक अंग की पूर्ति का सिलसिला पैदा कर दिया।'

'हिन्दी मिलाप'—
'आत्मकथा-अंक की जैसी चर्चा तथा प्रशंसा सुनी थी, दर्शन पर इसे उससे अधिक ही पाया। इस प्रकार का अंक निकालने का विचार ही निराला है।'

'स्वराज्य'—
'यह अंक नये लेखकों के लिए दीप-स्तंभ का काम करेगा।'

'अर्जुन'—
'यह निस्संकोच कहा जा सकता है कि आत्मकथा-अंक हिन्दी-साहित्य में अनूठा है।'

'जयाजीप्रताप'—
'आत्मकथांक हिन्दी-साहित्य की स्थायी चीज़ है, क्योंकि इसमें बहुमूल्य सामग्री है।'

'आज'—
'हमारा विश्वास है कि यह विशेषांक हिन्दी-साहित्य की 'एक चीज़' समझी जायगी।'

पता—मैनेजर, 'हंस', सरस्वती-प्रेस, काशी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जागरण —

१७ वर्ष पूर्व !

महात्माजी की हिन्दी

का

नमूना

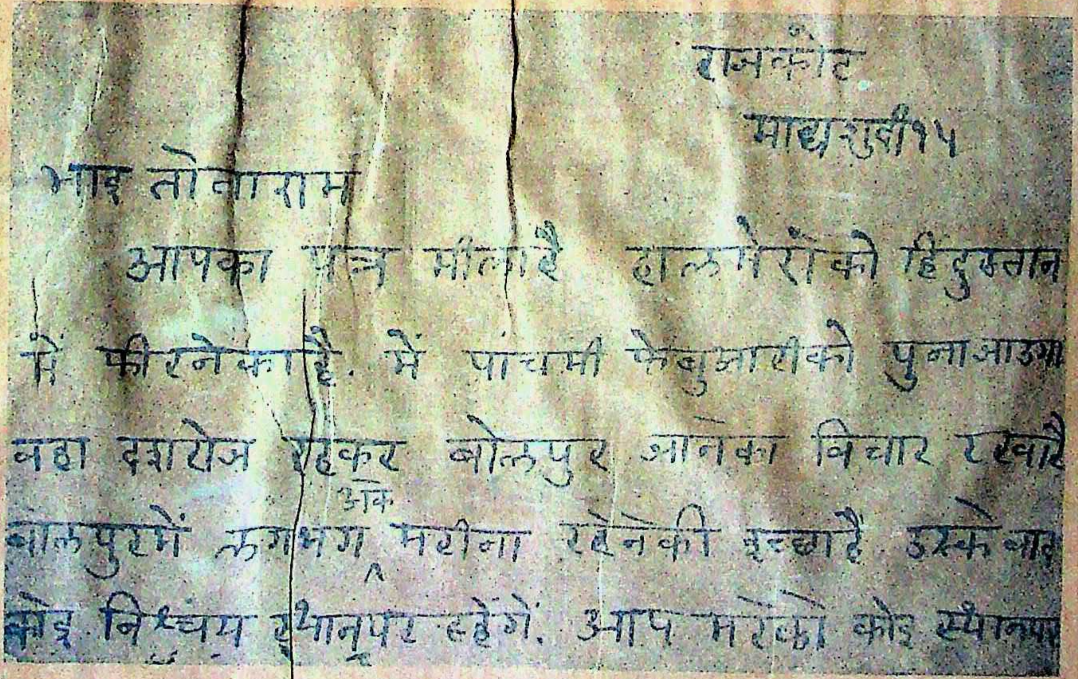

राजकोट
माघशुदी १५

भाइ तोताराम

आपका पत्र मीला है हाल मेरा को हिंदुस्तान
में फीरने का है. में पांचमी फेब्रुआरी को पुना आउंगा
वहां दशरोज रहकर बोलपुर आने का विचार रखा है
बोलपुर में लगभग एक महीना रहेने की इच्छा है. उसके बाद
कोइ निश्चय स्थान पर रहेंगे. आप मेरेको कोइ स्थान पर

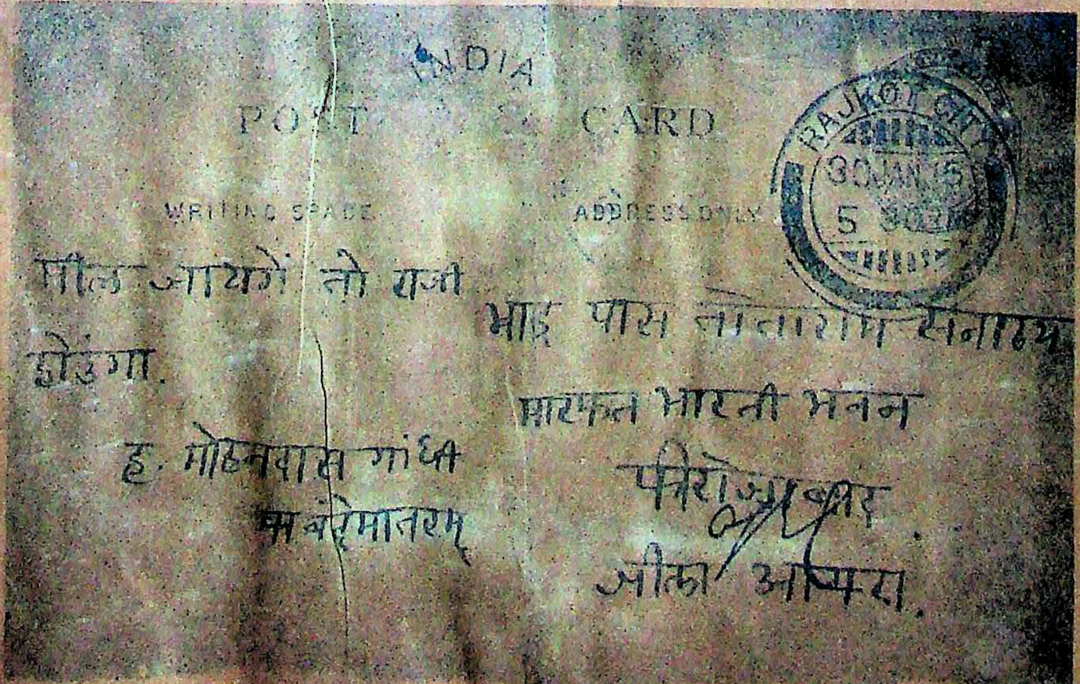

INDIA
POST CARD
WRITING SPACE ADDRESS ONLY

RAJKOT CITY 30 JAN 15

मील जायगें तो राजी
होउंगा.

ह. मोहनदास गांधी
का वंदेमातरम्

भाइ पास तोताराम सनाढ्य
मारफत भारती भवन
फीरोजाबाद
जीला आग्रा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जागरण

पूज्य आचार्य द्विवेदीजी की अड़सठवीं वर्ष गाँठ के अवसर पर

'जागरण' अत्यन्त नम्रता के साथ इस बात पर आन्तरिक सन्तोष प्रकट करता है कि आचार्य द्विवेदी जी की अड़सठवीं जयन्ती मनाने के लिये उसने जो प्रस्ताव हिन्दी-संसार के सम्मुख रक्खा, वह बहुलांश में सफल हुआ। काशी, प्रयाग, कानपुर, टीकमगढ़, आगरा और मुज़फ़्फ़रपुर में जयन्ती मनाई गई। इस अंक के छप चुकने पर यह पता लगा कि लखनऊ और लाहौर में भी जयन्ती मनाई गई है। हमें विश्वास है कि और भी कई जगहों में जयन्ती मनाई गई होगी। अगले अंक में हम शेष सब समाचारों का संकलन करेंगे। 'जागरण' अपने प्रस्ताव की इस व्यापक सफलता पर बड़ी विनय के साथ गौरव अनुभव करता है और सरस्वती, माधुरी, वीणा, गंगा, वाणी, भारत, स्वराज्य, भारतमित्र आदि सहयोगियों ने टिप्पणियाँ लिखकर इस कार्य में जो सहृदयतापूर्ण सहायता पहुँचाई है, उसके लिये 'जागरण' उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता है।

'जागरण' की सादर-सविनय शत-शत श्रद्धाञ्जलि !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष १
अंक ८
वैशाख-पूर्णिमा
सं० १९८९ वि०
२० मई १९३२

काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा में द्विवेदी-जयन्ती—

बनारस के प्रमुख साहित्यसेवियों ने, गत ता० ९ मई (वैशाख शुक्ल ४) सोमवार को, सन्ध्या समय, सभा-भवन में, बड़ी शान्ति से द्विवेदी-जयन्ती मनाई। श्रीमान् रायसाहब बाबू श्यामसुन्दरदासजी ने सभापति का आसन ग्रहण किया था। आचार्य द्विवेदीजी का भव्य तैल-चित्र फूल-मालाओं से सजाया गया था। बाबू रामचन्द्र वर्मा ने वह प्रस्ताव पढ़ सुनाया, जिसमें आचार्य द्विवेदीजी की अड़सठवीं वर्षगाँठ पर उनकी दीर्घायु-कामना की गई थी। प्रोफेसर पं० रामचन्द्र शुक्ल ने प्रस्ताव का अनुमोदन और बाबू जयशंकर 'प्रसाद' ने समर्थन किया। सर्वसम्मति से यह निश्चय हुआ कि इस प्रस्ताव की प्रतिलिपि श्रीमान् द्विवेदीजी की सेवा में भेज दी जाय और पत्रों में प्रकाशनार्थ भी। सभापतिजी ने तार द्वारा द्विवेदीजी को इस प्रस्ताव का आशय भेजने की आज्ञा दी। इसके बाद सभापतिजी और बाबू कृष्णदेवप्रसाद गौड़ एम० ए० के समयोचित भाषण हुए।

द्विवेदी-अभिनन्दन-ग्रन्थ—

काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा ने अगले साल आचार्य द्विवेदीजी को सत्तरवें वर्ष में प्रवेश करने पर जो अभिनन्दन-ग्रन्थ समर्पित करने का निश्चय किया है, उसमें रायल अठपेजी साइज़ के क़रीब साढ़े पाँच सौ पृष्ठ होंगे। तिरंगे और एकरंगे चित्रों की संख्या लगभग तीस होगी। उसके प्रत्येक पृष्ठ से मुद्रण-कला का विलक्षण चमत्कार प्रकट होगा। हिन्दी के गण्यमान्य लेखकों, कवियों, सम्पादकों और हितैषियों की सुन्दर रचनाएँ और भारत-प्रसिद्ध चित्रकारों के बनाये चित्र उसे अलंकृत करेंगे। इस प्रकार उस ग्रन्थ के प्रकाशन में सभा के हजारों रुपये खर्च होंगे। 'सभा' हिन्दी-संसार की सर्वश्रेष्ठ सार्वजनिक संस्था है। उसने अब तक हिन्दी-प्रेमियों की उदारता के बल पर ही हिन्दी की स्तुत्य सेवा की है। उसने इस महत्वपूर्ण कार्य को भी हिन्दी-प्रेमियों के भरोसे ही अपने हाथ में लिया है। विश्वास है कि हिन्दी के सभी लेखक, कवि, सम्पादक और हितैषी उदारतापूर्वक सभा की सहायता करेंगे। धनीमानी हिन्दी-प्रेमियों को अपनी उदारता और हिन्दी-प्रेम दिखाने का यह अच्छा अवसर मिला है। ईश्वर से प्रार्थना है कि सभा को इस सत्कार्य में यथेष्ट सफलता प्राप्त हो।

गीत

आओ उर के नव पुष्पों पर
हे जीवन के कर कोमलतर
खुल गये नयन, प्रस्फुट यौवन
भर गया वनों में भ्रम-गुञ्जन
चञ्चल लहरों पर भर नर्त्तन
आओ समीर, आशा हर हर
यह क्षणिक काल यों बह न जाय
अभिलषित अधूरी रह न जाय
प्रिय, विरह तुम्हारा सह न जाय
भर दो चुम्बन नव-स्मृति सुखकर
मैं जगज्जलधि की वृन्तहीन
खिल रही एक कलिका नवीन
हे विमुख, सदा मैं मुखर, पीन
आओ अपत्रिका के मरमर

—'निराला'

कलाकार और चरित्र—

जब से 'भारत' में उसके सुयोग्य सम्पादक पं० नन्ददुलारे वाजपेयी एम० ए० ने कवियों के विशेषाधिकार की चर्चा चलाई है, तब से हिन्दी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य-संसार में एक ख़ासी हलचल पैदा हो गई है। 'विशाल-भारत' के सहृदय सम्पादक पं० बनारसीदासजी चतुर्वेदी व्यक्तिगत चारित्र्य के कड़े आलोचक हैं और उनकी दृष्टि में व्यक्ति का चारित्र्य इतर गुणों से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। 'हंस'-सम्पादक श्रीमान् प्रेमचन्द्रजी भी 'तुलसी' और 'कबीर' की तो नहीं, पर 'बाल्मीकि' और 'व्यास' की दुहाई देते नज़र आते हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि कलाकार के चारित्र्य के विना क्या कला कल्याणमयी हो ही नहीं सकती? यद्यपि पवित्रतावादी लोग कुछ पाश्चात्य कलाकारों के चारित्र्य में पतन का प्रमाण पाकर यह तो स्वीकार करते हैं कि वे कलाकार अवश्य हैं; परन्तु भारत में भारतीय दृष्टि से उसे अवांछनीय समझते हैं। मालूम होता है कि इन आदर्शवादी विचारकों ने बाल्मीकि, व्यास आदि के चरित्र की प्रामाणिक परिस्थिति हृदयंगम कर ली है। कहनेवाले तो यहाँ तक कह डालते हैं कि बाल्मीकि आरम्भ में एक दुर्दान्त दस्यु थे और व्यास की जारज सन्तान ही भारतीय युद्ध का नायक थी। एक अँगरेज लेखक का कहना है कि 'अधिकतर नैतिक स्वतंत्रता की भिन्न परिस्थितियों में ही साधारणतः कला विकसित होती है और इसे प्रत्येक व्यक्ति को स्वीकार करना हीं पड़ेगा।' यद्यपि इसका स्पष्ट निर्देश तो नहीं किया जा सकता कि चारित्र्य-सम्बन्धी स्वतंत्रता साहित्यिक जीवन में बाधा-स्वरूप है या कल्याण-कारिणी, तथापि कविता में पवित्रता चाहनेवाले पं० अवध उपाध्यायजी भी कहते हैं कि "जीवन में भी इन सब अपवित्र बातों का अस्तित्व पाया ही जाता है और कविता का आधार जीवन है।" जब जीवन में अपवित्र बातों का अस्तित्व है ही, तो कला को उसका अनुवाद माननेवाले लोग केवल मुख से ही इस बात का समर्थन क्यों करते हैं—सो भी एक सिद्धान्त-विशेष की दुहाई देने के कारण—कि कवि और कलाकार को भी चरित्रवान होना ही चाहिये, जिससे उसकी कला में अपवित्रता न आने पावे। कविवर 'निराला' जी का यह कहना अत्यन्त दार्शनिक है कि "सत् के साथ असत् का और असत् के साथ सत् का बराबर रमण होता है।" परमात्मा की सृष्टि जब असत्—अपवित्र—से अछूती न रह सकी, तो साधारण कलाकारों की क्या कथा! हाँ, अपवित्रता, असत् और दुश्चारित्र्य कला का उद्देश्य न होना चाहिये। भूत, भविष्य और वर्त्तमान सुरत-संगोपना नायिकाओं की सृष्टि किस पवित्र कविचक्र द्वारा सृष्ट हुई है, सो तो आदर्शवादी ही बतला सकेंगे; किन्तु यह ठीक है कि गहरा धक्का खाकर तुलसीदास की तरह वास्तविक पश्चात्ताप करनेवाले और पवित्रता की ओर अग्रसर होनेवाले कवि विरल हैं। फिर भी उनकी नक़ल करके, भगवान से तर जाने का हुक्मनामा लेने के लिये लालायित बहुत-से कवि अपने वाक्छल में अधिक व्यस्त देखे जाते हैं। क्या उनका चरित्र ठीक है? कोई कवि कहता है कि मेरे इतने पाप हैं कि उसे लिखने में धर्मराज को कई युग लग जायँगे, और आजकल की खुदाई के प्रमाण के अनुसार भाषा और लिपि जितनी शीघ्रता से बदलती रहती है, उसे देखते हुए न्याय-काल में वह लिपि और भाषा पढ़ीं नहीं जायगी, तब न्यायाधीश परमात्मा—सन्देह का लाभ अपराधी को मिलना चाहिये—वर्तमान अदालतों की इस परिभाषा के अनुसार, अवश्य ही मुझ पापी को छोड़ देने पर बाध्य होंगे, और तब "पापिन की मण्डली अदण्ड छुट जायगी!" इस तरह से पापों के प्रचार में सहायक होनेवाले कवि जब भगवद्भक्त होने की नक़ल करते हुए देखे जाते हैं, तो इन पवित्रतावादी विचारकों का क्या कर्त्तव्य है? कहा जाता है कि रूस में 'रासपुटीन' नाम का एक प्रचारक था, वह कहा करता था कि पाप करो, जिससे तुमको पश्चात्ताप करना पड़ेगा, फिर अनायास ही भगवान तुम्हें मिल जायँगे। "भागीरथी हम दोस भरे पै भरोस यही की परोस तिहारे" के प्रचारक लोग क्या हिन्दी के 'रासपुटीन' नहीं? कवि स्वतः चरित्रवान है या नहीं, आदर्शवादी लोग उस कवि की रचना में तो इसकी झलक निकाल लेते हैं; किन्तु कला कल्याणमयी है कि नहीं, यह तो उसकी प्रचार-प्रवृत्ति से ही प्रकट होगा। प्रत्येक कलाकार आत्म-जीवनी ही लिखने बैठता है—यह एक साहित्यिक भ्रम है। यदि कोई कलाकार चारित्रिक पतन के कारण अपने व्यक्तित्व को नष्ट करके भी कला में कल्याणमयी सृष्टि कर सका है, तो उसका विशेषाधिकार मानते हुए प्रायः लोग देखे जाते हैं। कालिदास आदि के सम्बन्ध में ऐसा ही कहा जा सकता है। किन्तु इसका यह मतलब नहीं कि कलाकार को कुचरित्र होना ही चाहिये।

अमृत-कंठ से

[गीत]

तुम्हारी कैसी है यह माया
तुमको गाते-गाते तेरी भूली जाती कंचन-काया
बेसुध हूँ तेरी सुधि लेकर, अपने को खो तुमको पाया
तुम्हारी कैसी है यह माया

जीवन-पात्र रिक्त होने दो, तुमने भर-भर बहुत पिलाया
वे सब बंधन टूट रहे हैं, जिनने अबतक खूब रुलाया
बहुत मुझको भरमाया—
तुम्हारी कैसी है यह माया

आज मोह की आँधी थिर है, पाकर तेरी प्रेमल छाया
प्राण प्राण से बिंधे हुए हैं, दूर हुई है नश्वर काया
अमृत विष लुढ़काकर पाया
तुम्हारी कैसी है यह माया

उड़ा दिया ममता का पंछी, उसका सब स्वर आज भुलाया
प्राणों का पिंजरा सूना है, मुक्त हुई बंधन की छाया
तुझमें 'मैं' मिल पाया
तुम्हारी कैसी है यह माया

सस्ता-साहित्य-मण्डल, अजमेर
४ अगस्त, १९३१ ई०

— श्रीरामनाथ 'सुमन'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समन्तकूट (Adam's Peak)

श्रीराहुल सांकृत्यायन

समन्तकूट या श्रीपाद, जिसे अंगरेजी में 'ऐडम्स्-पीक' भी कहा जाता है, लंका (सीलोन) का सबसे पवित्र पर्वत-शिखर है। यह यहाँ के तीन सर्वोच्च शिखरों—पिदुरु-तला-गल (८२९६ फीट), किरि-गल-पोत (७८५७ फीट) और ऐडम्स-पीक (७३६० फीट)—में तीसरे नम्बर पर है। अधिक ऊँचा होने पर भी उन दो शिखरों के साथ वह पवित्रता का भाव नहीं पाया जाता, जो 'समन्तकूट' के साथ है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि यह चोटी बौद्धों और ब्राह्मण-धर्मियों की दृष्टि में जितनी पवित्र है, उतनी ही मुसलमानों की दृष्टि में भी! पिछली २४—२५ मार्च (१९३२) को मुझे यहाँ की सर्व-प्रथम यात्रा करनी पड़ी। 'जागरण' के पाठकों के सम्मुख आज मैं उसी यात्रा-वृत्तान्त को लेकर उपस्थित होता हूँ।

भदन्त आनन्द कौसल्यायन चार वर्ष से यहाँ आये थे। वह अब जल्दी ही स्याम और हिन्दु-चीन (Indo-China) की ओर जा रहे हैं, और इसीलिये—फिर कभी मौका मिले या न मिले, ऐसा खयाल कर—उनकी इच्छा समन्तकूट हो आने की हुई। इतने दिनों से यहाँ (सीलोन में) रहते हुए भी मैं कभी जा नहीं सका था; और यद्यपि अभी मुझे कुछ महीनों और यहाँ रहना है, तो भी यह सोचकर कि समन्तकूट की यात्रा मार्च और अप्रैल ही में सुकर होती है, अन्य मासों में वर्षा और तेज हवा के कारण यात्रा कठिन हो जाती है, मेरा भी इरादा जाने का हो गया। हमारे साथ श्री एम० एच० परेरा पहले ही से जाने को तैयार थे। दिन पक्का होने के दिन, श्री वाङ् ने भी—एक चीनी विद्वान, जो आज-कल हमारे (विद्यालंकार) कालेज ही में पढ़ रहे हैं—जाने के लिये उत्साह प्रकट किया। इस प्रकार चार आदमियों की मंडली हो गई। स्टेशन तक एक और सज्जन मिल गये। अब हम पाँच हो गये।

कोलम्बो से समन्तकूट जाने के दो रास्ते हैं—एक 'रत्नपुरा' होकर और दूसरा 'हैटन्' होकर। रत्नपुरा के रास्ते से यद्यपि खर्च कम पड़ता है, तो भी पैदल अधिक चलना पड़ता है; इसीलिये पैसेवाले क्या, अधिकांश लोग, हैटन् के रास्ते ही जाते हैं। हमारी डाक-गाड़ी ९ बजे रात को जानेवाली था। २३ मार्च को हम लोग मर्दाना (कोलम्बो) गाड़ी पर जब पहुँचे, तो देखा, वहाँ जगह ही नहीं है! आनन्दजी, मेरा और श्री परेरा का टिकट सेकण्ड क्लास का था और ईस्टर की छुट्टियों के कारण ६.८५ रुपये में आने-जाने का मिला था। गाड़ी में चढ़कर भी हम उतर आये। कुछ ही मिनटों में दूसरी स्पेशल ट्रेन आई। उसमें किसी प्रकार हम दोनों भिक्षुओं के लिये एक बेंच खाली कर दी गई।

दस बज चुके थे, जब हमारी गाड़ी रवाना हुई। हमारे डब्बे के सभी आदमी बीच में कहीं उतरने वाले न थे, अतः यह आशा न थी कि कहीं सोने का मौका मिलेगा; इसलिये बैठे-बैठे रात बिता देने को तैयार हो गये।

भारत की डाक को लेकर आने वाली गाड़ी के पहले और दूसरे दरजों में निचली सीटों के ऊपर भी एक-एक सीट रहती है, जिससे यात्री के सोने का कोई रास्ता निकल आता है; परन्तु मालूम हुआ कि इस लाइन में वह बात सिर्फ प्रथम श्रेणी ही में है।

पहले हमारा ध्यान एक कृष्णकाय अधेड़ मेम-साहेब की ओर गया, जब हमने उन्हें फर-फर अँगरेजी झाड़ते देखा। जब उनके साथ का छोटा बच्चा रोने-चिल्लाने लगा, और उसे भी उन्होंने अँगरेजी में चुप कराना शुरू किया, तो हमें मालूम हो गया कि इनका यह स्वांग बनावटी नहीं है। सीलोन में वस्तुतः ऐसे कितने ही परिवार हैं, जिनके यहाँ अंगरेजी मातृभाषा के तौर पर है। कितने ही ऐसे सिंहल परिवार यद्यपि बोलचाल को सिंहल-भाषा बोल तो लेते हैं; किन्तु लिखना-पढ़ना नहीं जानते। हम लोगों ने यह भी देखा कि मेम-साहेब की दो लड़कियाँ जहाँ कौवे से भी गोरी थीं, वहाँ सबसे छोटा बच्चा गोरे रंग और सुनहले

अनुरोध

बेध दुर्ग नीरव जड़ता का
बन्धन-मुक्त करो ये प्राण
स्वर के उच्च शिखर से, सुन्दरि
छेड़ो एक बाण-सी तान

जीवन-पथ की अमिट अमावस
बने निमिष में स्वर्ण-विहान
बिखरा दो उदार अधरों से
किरणों-सी उज्ज्वल मुसकान

एक अनिन्द्य रूप की ज्वाला
देवि, जला दो त्रिभुवन में
जिसमें अशिव, असत्य, असुन्दर
हों सब भस्म एक क्षण में

रँग दो मेरे स्वप्न, सजनि, सब
जीवन-मरण अरुण कर दो
जन्म-जन्म का शून्य पात्र यह
आज बूँद-भर में भर दो

—'मिलिन्द'

यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि कलाकार की कसौटी उसकी कला है, न कि उसका व्यक्तित्व। बाल्मीकि और व्यास का आदर्श देखते हुए तो यही कहना पड़ता है कि बिना जले हुए, विदग्ध साहित्य की सृष्टि नहीं हो सकती; और तब कलाकार अपनी कला में व्यक्तित्व को खोकर कला के ही रूप से प्रतिष्ठित होता है। उसे जनता का सम्मान मिलता ही है, चाहे आज मिले या हजारों बरस बाद। कलाकार के लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह रावण की सृष्टि करने के लिये रावण बने; किन्तु यह भी ठीक है कि रावण की सृष्टि के बिना राम की आवश्यकता ही नहीं रह जाती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालों वाला था ! लेकिन इसका समाधान हो गया, जब मालूम हुआ कि रोमन-कैथलिक ईसाइयों में, अपने पापों को क्षमा कराने के लिये, स्त्री पुरुषों को अनिवार्य रूप से अपने पादरियों के पास जाना होता है ! इन पादरियों या फ़ादर लोगों में बहुतेरे योरोपियन हैं और अविवाहित होते हैं। मालूम होता है, काले रंग और पाप का एक ही रंग है। इसीलिये जब कभी पाप की गहरी क्षमा हाथ लग जाती है, उस समय यह चमत्कार देखने में आता है कि यद्यपि उसी व्यक्ति में तो नहीं; किंतु स्त्री होने पर उसकी सन्तान में, कालिमा-रहित श्वेत-वर्ण सन्तान के रूप में, वह प्रादुर्भूत होती है।

रात को कुछ देर तक तो अखबार और पुस्तक में गुजारा। इसके बाद आनन्दजी तो कोने में होने से बैठे-बैठे झपकी लेने लगे। हम दोनों ऐसे ही समय बिताने लगे। यह जानकर सन्तोष हुआ कि कुछ स्टेशनों तक खड़े रहने के बाद, श्रीवाङ् और दूसरे सज्जन को बैठने की जगह मिल गई है। प्रायः ५२ मील तक तो हमारी गाड़ी मैदान में गई; किन्तु 'रम्बुक्कन' से पहाड़ शुरू हुआ, और वहाँ से ५६ मील हैटन् तक पहाड़ ही पहाड़ था। जाते वक्त रात में जाने से यद्यपि हम बाहर के दृश्य को देख न सके थे; किन्तु लौटते वक्त उसे अच्छी तरह देखा। पहले निचले पहाड़ों पर नारियल और रबड़ के वृक्ष बहुत-से दिखाई पड़ते थे। नारियल का भाव कुछ इधर सुधर गया है, इसलिये उनके बगीचों में साफ-सुथरापन दिखलाई पड़ता था; किन्तु रबड़ की कुछ न पूछिये, कितने ही बगीचे बरसों से नहीं पाछे गये हैं। कोई-कोई बगीचेवाले भविष्य की आशा पर कभी-कभी सुध तो लेते हैं, जिसके प्रमाण-स्वरूप वृक्ष की जड़ के पास लटकती हुई नारियल की खोपड़ी में पाछे हुए हिस्से से दूध की पतली धार गिरती दिखाई पड़ रही थी। एक पहाड़ को तो नीचे से ऊपर तक केले के बगीचे से ही ढँका देखा। किन्तु ऊँचाई के साथ नारियल और रबड़ के बाग कम होते जाते थे। डेढ़ हजार फीट से ऊपर चाय के बगीचे शुरू हो गये।

लंका का बिचला भाग पहाड़ी है, जिसे पुराने ग्रन्थों में 'मलय' कहा गया है। आजकल इस प्रदेश के बहुत-से भागों में चाय के बगीचे हैं, जिनके अधिकांश मालिक साहब लोग हैं और कुली सब-के-सब तामिल भारतीय। इन कुलियों की संख्या सात लाख से ऊपर है। यह इन्हीं की मिहनत की बरकत है कि सैकड़ों मील ये पहाड़, पैर से चोटी तक, पाँती से लगी बेला की फुलवारी-जैसे, चाय के बागों में परिणत हो गये हैं।

सबेरे छः बजे के करीब हमारी गाड़ी हैटन् पहुँची। पहले हमें यहाँ के एक सज्जन का तार मिल चुका था। किन्तु हम नियत गाड़ी से न आ सके थे; इसलिये वह स्टेशन पर न मिल सके। 'हैटन्' पहाड़ पर, समुद्रतल से ४१४१ फीट की ऊँचाई पर, बसा हुआ है। इसी लिये यहाँ गर्मी नहीं है; बल्कि यहाँ वाले तो इसे बहुत ही सर्द स्थानों में मानते हैं। लेकिन यह सर्दी हमारे बनारस की दीवाली की सर्दी से कम ही है।

सिंहल में भिक्षु, जहाँ तक हो सकता है, मठों में टिकाये जाते हैं। हमलोग भी एक मठ में लिवा ले जाये गये। मालूम हुआ, अभी स्थानपति भिक्षु सो रहे हैं। हमलोग जबतक शौच आदि से निवृत्त हुए, तब तक भिक्षु भी जाग उठे। उन्होंने कहा, सर्द जगह में निद्रा देर तक रहती है। मैंने कहा, बिल्कुल ठीक, योरप में तो नव-दस बजे तक सोना मामूली बात है। बेचारे पहले समझते थे, हम दोनों आगन्तुक भिक्षु सिंहल के हैं, किंतु उन्हें और भी अधिक प्रसन्नता हुई जब उन्हें मालूम हुआ कि हम भारतीय हैं।

मठ के निचले भाग में एक स्कूल है, जिसमें दो सौ से ऊपर लड़के पढ़ते हैं। तामिल और सिंहल के साथ स्कूललीविङ् तक की पढ़ाई होती है। आसपास सभी चाय के बगीचे हैं, जिनमें तामिल कुली काम करते हैं और बाज़ार में भी बहुत-सी दूकानें तामिलों की हैं। कुलियों की भला इतनी कहाँ सामर्थ्य जो वे अपने लड़कों को यहाँ पढ़ने के लिये भेज सकें; किंतु तामिल व्यापारियों और क्लर्कों के बहुत-से लड़के इस स्कूल में पढ़ते हैं। इस भारतीय सम्बन्ध का एक स्पष्ट प्रभाव मैंने यहाँ देखा कि हमारे ऊपर की बैठक में महात्मा गांधी और देशबंधु दास की तसवीरें लटक रही थीं।

भिक्षु को आश्चर्य हुआ, जब उन्हें मालूम हुआ कि प्रायः पाँच वर्ष से सिंहल का संबन्ध होने पर भी मैं सिंहल-भाषा बोल या समझ नहीं सकता। उन्होंने कुछ दिनों पहले सिंहली दैनिक "दिन-मिन" में छपे मेरे लेख के बारे में पूछा। मैंने कह दिया—मैं संस्कृत में बोलता जाता था, जिसे दूसरे भिक्षु ने सिंहल में उल्था किया था। पीछे आनन्दजी से उनकी सिंहल में घुटने लगी और मैं आसपास का दृश्य देखने लगा। सामने हमारे ऐडम्स-पीक-होटल था और नीचे की ओर दो-तीन पतली कतारों में बसा बाजार। पहाड़ों में जहाँ-तहाँ चाय की कोठियाँ तथा टीन से छाई नाटी-नाटी पतली कुली-लाइनें थीं। सिंहल की विशेषता—नारियल—का कहीं पता न था। इस ठंडक में उसका फूलना-फलना दर-असल हो ही नहीं सकता था।

अब हमारा जलपान तैयार था। पाव रोटी, मक्खन, पानी में उबाली चावल की नमकीन सेवइयाँ, बीच में नारियल के बुरादे-भरे चावल के चीले, ताल का गुड़—यही नाश्ता था। पानी तो दर-असल अमृत था। रात को जगे ही थे, इसलिये निद्रादेवी का बड़ा तकाजा था। खाते ही हमें सोने का कमरा बतला दिया गया और आठ से साढ़े दस बजे तक हम सोते रहे। श्रीवाङ् भी जगे थे, किन्तु उन्होंने अपना अधिक समय प्रकृति-निरीक्षण में लगाया।

दोपहर का भोजन हमें उक्त सद्गृहस्थ के घर ग्रहण करना था, इसलिये हम वहाँ पहुँचे। वहाँ मालूम हुआ, यद्यपि यह प्रदेश 'उड-रट' (उद्-राष्ट्र = ऊपरी देश) है, तो भी यहाँ के सिंहली व्यापारी अधिकतर नीचे के हैं। उनको मालूम हो गया था कि आनन्दजी मांस-मछली नहीं खाते। उनको यह भी समझा दिया गया था कि वह 'उम्बल्-कड' भी नहीं खाते, जिसपर उन्हें आश्चर्य होना स्वाभाविक ही है। जैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

110530

कोई भारतीय वैष्णव किसी मिठाई को यह कहकर छोड़ दे कि उसमें कस्तूरी पड़ी है! कस्तूरी की भाँति इस विशेष प्रकार की सूखी मछली को भी लोग मसाला की भाँति व्यवहार करते हैं और सभी भाजी-तरकारियों में डालते हैं। आज आनन्दजी के कारण जब 'उम्मल्-कड्' भी नहीं पड़ने पाई, तो मछली-मांस कहाँ से? अन्त में जौ के साथ घुन भी पीसा गया और मुझे भी उसी पर सन्तोष करना पड़ा। मुझे तो नारियल के बुरादे के दूध में बनी मिर्च से भरी यहाँ की भाजी-तरकारियाँ अच्छी लगती ही नहीं, वैसे तो मछली-मांस में भी वही बात है, तो भी कुछ कामचलाऊ हो जाती हैं।

एक बजे हमें 'मस्केलिया' के लिये लारी मिली। भिक्षु होने से हम दोनों के लिये ड्राइवर की बगल में अगली सीट मिली। सीलोन की सड़कें आम तौर से बहुत ही अच्छी हैं। यहाँ भी यह पक्की ही नहीं, बल्कि 'टार' की बनी हुई थी। लेकिन, हर बीस कदम पर घुमाव था, जो यद्यपि हम दोनों को उतना कष्टप्रद तो नहीं मालूम हुआ; किन्तु श्री वाङ् तो उससे बहुत उकता ही नहीं गये, बल्कि हर दूसरे मिनट उनको लारी के खड्ड में चले जाने का डर लगा रहता था। दस-बारह मील की यात्रा करके उन्होंने तो फ़तवा दे डाला कि ड्राइवर का मन फौलाद का था और यह भी जाहिर किया कि अब हम लारी द्वारा नहीं लौटेंगे। श्रीपरेरा के भी हाँ-में-हाँ मिलाने से उत्साहित हो, उन्होंने मुझसे भी पूछा। मैंने कहा —भाई, लारी मिल जाने पर पैदल चलना मेरे लिये असम्भव है। रही उसके खड्ड में जाने की बात, सो तो मैं चलते वक्त ही अपने नायक स्वामी को जवाब दे चुका हूँ—(जब उन्होंने कहा कि एक लारी दो ही चार दिन पूर्व खड्ड में गिर गई, और लोगों ने जान से हाथ धोया)। लारियाँ हजार में एक बार गिरा करती हैं, और अब तो वह बारी भी पूरी हो चुकी है, अब तो और डर नहीं।

तीन बजे के करीब हम मस्केलिया पहुँचे। यहाँ के एक व्यापारी के लिये पत्र था। हमने अपना फालतू सामान वहीं रख दिया। मालूम हुआ, लारी तो नहीं; किन्तु मोटरकार यहाँ से पाँच मील आगे 'डल्हौसी' तक जा सकती है। वहाँ से शिखर पाँच मील रह जाता है। पैदल के रास्ते से आठ ही मील है। मस्केलिया तक हमें आधा रुपया (५० सेंट) लारी का किराया देना पड़ा था। डल्हौसी तक आने-जाने के लिये आठ रुपये में मोटर मिली। कुछ ही देर में, चाय के बगीचों में होते हुए, हम वहाँ पहुँच गये; और फिर उतर कर पैदल चलने लगे। यहाँ मस्केलिया नदी पारकर हमारा रास्ता उसके दाहिने किनारे से ऊपर की ओर था। अब झुंड-के-झुंड यात्री भी मिलने लगे। समन्तकूट की यात्रा शुरू करते ही आदमी, रामनामी मौनियों की भाँति, "करुणा करण्ड" (करुणा करो) का एक शब्द बोलता है। यहाँ तो अब उसकी खासी भरमार थी। किसीको रास्ता देने के लिये कहना है, तो भी "करुणा करण्ड" या "करुणा करनवा"; किसी को अदरख और मिसरी बाँटनी है, तो भी "करुणा करनवा"; सोना, जागना, उठना, बैठना, खाना, पीना, सिर फूटना आदि; सभी बातों के लिये बस वही एक शब्द! बीच-बीच में 'साधु-साधु' का शब्द भी सुनाई देता था।

अभी प्रायः एक मील हमें और चाय के बगीचों से जाना पड़ा; उसके बाद दोनों ओर के पहाड़ प्राकृतिक वन से ढँके थे। कहीं-कहीं तो घासें ही दीख पड़ती थीं; किन्तु बहुत-से स्थानों पर बड़े-बड़े पेड़ों का जंगल भी था, यद्यपि वे देवदारु और चीड़-जैसे विशाल न थे। कुछ ही देर में हम 'मडम्' (मठम्) पहुँच गये।

यद्यपि बहुत-से आदमी अभी से टिकने लगे थे; तथापि हमें मालूम हो गया था कि यहीं से असल चढ़ाई शुरू होती है। तीन-पौने-चार मील की कठिन चढ़ाई, एक ही बार में, सूर्योदय से पूर्व पूरा करना आसान काम न था। इसलिये अगले और आखिरी पड़ाव 'इन्-दि-कट्टु-पान' या 'गेत्तम्-पान्' (रफू करना) पर आज ही पहुँच जाना चाहिये। अभी घंटा-सवा-घंटा दिन भी था। यहाँ श्रीपाद (समन्तकूट) के ट्रस्टी श्री विजयवर्धन भी मिल गये। उन्होंने अगले पड़ाव तथा श्रीपाद के लिये चिट्ठियाँ लिख दीं, और हम चल पड़े।

'मडम्' यहाँ द्रविड नाम है। सिंहल-भाषा में इस स्थान को 'गेंगुल-तेन्न' कहते हैं। यहाँ एक तामिल साधु रहते हैं, जिन्हें—उनके पीतल के घड़ों में चन्दा माँगने के कारण—'कल-गेडि-सामी' कहते हैं। सिंहल लोग भी इनके—यात्रियों के आराम के—कामों की बड़ी प्रशंसा करते हैं। इनके काम में सिंहलियों के अतिरिक्त चाय-बगीचे के सभी तामिल कुली सहायता करते हैं। यद्यपि यह ठीक है कि उन्हें ईसाई बनाने के लिये ईसाइयों की कुली-मिशन-जैसी संस्थाएँ अथक काम कर रही हैं। और, दूसरी ओर ये निरक्षर—अधिकतर अस्पृश्य—कुली अपने धर्म के बारे में कुछ जानने का कोई साधन नहीं पाते, तो भी पूर्वजों का धर्म बहुत आकर्षण रखता है; इसीलिये सभी ईसाई नहीं हो सकते।

'मडम्' से थोड़ा ही आगे चलने पर चढ़ाई शुरू हो गई। इस चढ़ाई में चक्कर खाता हुआ रास्ता न बनाकर सीढ़ियाँ बना दी गई हैं, जिससे चढ़ाई और कठिन हो गई है। थोड़ी ही देर में पैर भर गये, और गति मन्द ही नहीं हुई, बल्कि हर पचास कदम पर सुस्ताने की जरूरत पड़ने लगी। श्री वाङ् महाशय तो सबसे पीछे रहने लगे। मैंने कहा—वाङ् महाशय जेनरल चुने जायँ। लोगों ने उनके आगे न रह पीछे रह जाने की आपत्ति उठाई। मैंने कहा, आजकल के युद्धों में जेनरल आगे नहीं, पीछे रहा करता है। आखिर सबको स्वीकार करना पड़ा।

थोड़ी ही देर में मुझे भी सहायक जेनरल बनना पड़ा। अब वाङ् महाशय ने दुनिया की बेवकूफी पर व्याख्यान देना शुरू किया—"यह सिर से पैर तक सिर्फ बेवकूफी है। क्या फायदा इस तरह तकलीफ उठाने से? मुझे यह मालूम होता, तो मैं हरगिज न आता। अब क्या मैं विद्यालंकार छोड़कर ऐसी बेवकूफी फिर करूँगा!"

रात-भर बेचारे वाङ् महाशय जगते आये। लारी में हर वक्त जान जाने का खतरा था, और अब यह आफत! फिर कैसे रोम-रोम से दुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकल सकती है ! आज अगले पड़ाव तक यद्यपि डेढ़ घंटे की ही यात्रा थी, तथापि इसे तय करने में बड़ा लुत्फ़ रहा। अपने पाँवों के भरने से भी अधिक वाङ् महाशय की धारावाहिक टिप्पणियों में लुत्फ़ था !

जैसे-तैसे 'गेत्तम्-पान्' पहुँचे। दूकानवाले को चिट्ठी दी। उसने एक पतली बेंच-जैसा चँचरा बतला दिया। हम दोनों जाकर वहाँ बैठ गये। देखा, अभी ही सारा मकान यात्रियों से भरा पड़ा है, तो भी लोग आते ही जा रहे हैं और "करुणा करनवा" कह कर बैठने का स्थान लेते ही जा रहे हैं। अब कुछ वर्षा भी होने लगी वाङ् महाशय थके ही नहीं, भूखे भी बहुत थे। उन्होंने जा पेट-पूजा की। भिक्षुओं को तो दोपहर के बाद भोजन करना ही नहीं, इस लिये हम दोनों निश्चिन्त थे। पूछने पर कह दिया, तिब्बती चाय थोड़ी-सी पीयेंगे। कुछ रात जाने पर हमारे कथनानुसार मक्खन और नमक डालकर चाय बनाई गई; किन्तु चाय की बोतल में पहले से कुछ मीठी चाय मिली हुई थी, इसलिये एक-एक प्याले से अधिक हम पी नहीं सके—दूसरे यह भी डर था कि ज्यादा पीने पर पेशाब के लिये उठना पड़ेगा। नौ बजे के करीब दूकानदार ने अपने सोने का स्थान हमें दे दिया और हम दोनों को घर की तरह सोने का स्थान मिल गया। हमने समझा था कि हमारी पुरानी जगह साथियों को मिल जाने से उनको आराम होगा; किन्तु हमारी कोठरी में उनके जाते ही लोगों ने स्थान दखल कर लिया। इस प्रकार इस रात भी उनके सोने की नौबत न आई, और वाङ् महाशय के ऊपर तो एक के बाद दूसरी आफत-सी आती मालूम हुई ! चैत बदी तीज होने से चाँदनी रात थी; इसलिये एक बजते ही चल देने की बात तय कर हम सो गये।

यद्यपि सोने के लिये हमें अच्छी जगह मिल गई थी, तो भी नींद बीच-बीच में उचट जाती थी। लोग भी बारह बजे रात से ही चलने लगे थे। हम लोग भी एक बजे (२५ मार्च) से पहले चल पड़े। हमारे सामने चाँदनी में स्तूपाकार 'समन्तकूट' दिखलाई पड़ रहा था। चाँदनी इतनी तेज थी कि वृक्षों की घनी छाया ही में हमें बिजली की मशाल (टार्च) की आवश्यकता पड़ती थी। रात को सोने के लिये भी स्थान न मिलने से श्रीवाङ् और भी दुःखित थे। मुश्किल यह थी कि हम इच्छा रखते हुए भी कुछ नहीं कर सकते थे। इसमें सन्देह नहीं, यदि वह भिक्षु होते, तो हम अपना स्थान उन्हें दे सकते थे। अस्तु; जैसे-जैसे उनके पैर जवाब देते जाते थे, वैसे ही वैसे उनकी जबान की कड़ी टिप्पणियाँ बढ़ती जा रही थीं। बेचारे वाङ् ही क्यों, एक सिंहल यात्री भी कहता सुना गया—बुद्ध तो बड़े ज्ञानी होते हैं; किन्तु मालूम होता है, उनसे भी बेवकूफी बिलकुल छूट नहीं गई रहती, अन्यथा किसी आसानी से पहुँच जाने लायक स्थान को छोड़ इस दुर्गम शिखर पर क्यों अपना पदचिन्ह स्थापित करने आये !

मेरे पैर भी भर आये थे, किन्तु इस समय मैं पीछे रहने वाला न था। आखिर हिमालय के यात्री की लज्जा भी तो रखनी थी ! अन्त को हम उस जगह पहुँचे, जहाँ से "नारियल के वृक्ष पर चढ़ने की तरह" की चढ़ाई शुरू होती है। कई जगह सीढ़ियाँ पैर रखने भर की ही हैं, लेकिन कठिन स्थानों पर लोहे के सीकचे लगा दिये गये हैं। उस वक्त यह खयाल जरूर हुआ था कि इस वक्त रात को कुछ सीढ़ियों से अधिक देखा नहीं जा सकता और चढ़ना भी ऊपर की ओर है; दिन में उतरते वक्त डर बहुत लगेगा। रास्ते में एकाध जगह सुस्ताते हुए दो बजे के कुछ देर बाद सर्वप्रथम मैं ही श्रीपाद पहुँचा। जैसा कि पीछे कहा गया है, यह शिखर नोक-रहित स्तूप की शकल का है। ऊपर प्रायः १५ हाथ के घेरे में एक चट्टान है, जिसके चारों ओर भूमि समतल करके तीन हाथ लम्बी चहारदीवारी खींच दी गई है। इस चहारदीवारी के भीतर एक हजार आदमी खड़े हो सकते हैं ! उभड़ी शिला न गोल है न समतल। इसी शिला में एक स्वाभाविक निशान पड़ा हुआ है। आसपास उसके छः-सात अंगुल मोटा सीमेंट लगा दिया गया है, जिससे यह एक हाथ से कुछ अधिक लम्बा, गहरा, पद-चिन्ह-सा मालूम होता है। 'गया' का विष्णुपद भी इसी प्रकार का एक चिन्ह है। गया में तो बल्कि मंदिर के बाहर शिला में आधे दर्जन से अधिक ऐसे चिन्ह हैं; लेकिन सबको विष्णुपद बनने का सौभाग्य कहाँ। श्रीपाद की बगल में समन देवता की प्रतिमा है। इसी देवता की प्रार्थना पर, कहते हैं, बुद्ध ने अपने पद-चिन्ह को यहाँ छोड़ा।

पुजारी ने बतलाया, पहले-पहल राजा निःशंकमल्ल (११८७-११९६ई०) रत्नपुरा के रास्ते से यहाँ आये थे। उस समय तक यह पदचिन्ह और आसपास का सारा शिखर रत्नमय था। लेकिन राजा ने सोचा, भविष्य के लोग लालच में पड़कर चोरी करके नरकगामी होंगे, इसीलिये १८ हाथ मोटी शिला से उसे ढँक दिया, और ऊपर नया पद-चिन्ह बना दिया। इस पद-चिन्ह में भी एक ओर छिद्र था, जिससे नीचे का भी असली श्रीपाद दिखलाई पड़ता था; किंतु लोग चढ़ावे के पैसे उसमें डाल देते थे। पैसों को इस प्रकार बेकार जाते देख, यहाँ के पहले के महन्त श्रीसुमंगल महास्थविर ने, सीमेंट करवा दिया। उन्हींसे यह भी मालूम हुआ कि अगहन-पूर्णिमा को पुजारी लोग यहाँ आते हैं और वैशाख-पूर्णिमा तक रहते हैं। यात्री भी इसी बीच में आते हैं; किंतु अधिकांश लोग मार्च और अप्रैल मास में ही आते हैं।

हम जिस वक्त ऊपर पहुँचे, सौ-डेढ़ सौ आदमी वहाँ मौजूद थे। पहले पादुका के पास गये। देखा, कुछ स्त्री-पुरुषों का मत्था पैर के गड्ढे में टिकवाया जा रहा है। उस वक्त मुझे अपने बचपन की एक घटना याद आई—

उस समय जिन पंडितजी के यहाँ गाँव में मैं लघुकौमुदी पढ़ता था, वहाँ के एक विद्यार्थी बनारस में विश्वनाथजी का दर्शन करने आये। बहुत दूर था नहीं, पैदल ही चले आये थे; किन्तु आठ-दस आने पैसे बेचारे के पास थे। बदकिस्मती के मारे विश्वनाथ से वह कचौरी-गली के रास्ते चौक की ओर चल पड़े। वहाँ रास्ते में एक पंडा मिल गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और बोला, काशीकरवट बिना किये क्या विश्वनाथ के दर्शन और मणिकर्णिका के स्नान का कोई फल हो सकता है ? विद्यार्थी यद्यपि देहाती और संस्कृत का था, तो भी धर्म की बात समझने में पीछे रहनेवाला न था। वह पंडे के साथ काशी-करवट में गया। पंडे ने कुआँ दिखलाकर कहा, यह काशी-करवट है, यहाँ करवट लो। विद्यार्थी जब करवट लेकर लेट रहा; तो पंडाजी ने कहा, ऐसे नहीं; पहले चित लेटो और आँखों, नाक, मुँह और कानों पर एक-एक चवन्नी रखो। बेचारे के पास सात चवन्नियाँ न थीं। अन्त में सात इकन्नियाँ रखी गईं; फिर करवट ली। इकन्नियाँ जमीन से पंडाजी ने उठा लीं और 'यात्रा सुफल हो' कह कर पीठ ठोक दी !

यहाँ भी उसी तरह का कुछ दृश्य था। एक बित्ता ऊँचे ढालुए चबूतरे से पैर के गड्ढे में तीन-चार स्त्री-पुरुषों ने पैसे रख-रखकर सिर रक्खा था। पुजारी पाली भाषा में कुछ मंत्र बोल रहा था। कई मंत्र-वाक्यों या गाथाओं के समाप्त होने पर बेचारे सिर ऊपर करने पाते थे।

दूसरी तरफ देखा, कुछ तामिल 'हरो हर' कहकर साष्टांग दंडवत कर रहे हैं। तीसरी ओर कुछ लाल टोपीवाले और नंगे सिर मुसलमान बाबा आदम के नक़्शे-क़दम पर बत्तियाँ जला रहे हैं। पैसे के युग में पैसा चढ़ाना सभी के लिये लाजिम ही ठहरा !

यद्यपि अब हम दर्शन कर चुके थे, तथापि समन्तकूट पर चढ़कर लोग सूर्योदय के सौन्दर्य को देखना भी आवश्यक समझते हैं। सूर्योदय ६ बजकर पचीस मिनट पर होनेवाला था, इसलिये अभी हमें साढ़े तीन घंटे यहीं रहना था। प्रधान पुजारी या प्रबंधक को ट्रस्टी की चिट्ठी दी गई, जो ऊपरी चहारदीवारी के भीतर बनी हुई एक छोटी-सी कोठरी में रहता था। उसने भीतर हम दोनों भिक्षुओं के लिये आसन लगा दिया, और दूसरे साथियों के लिये चटाई पर जगह दी। इस वक्त हमने बहुत-सी बातें पूछीं, जिनका वर्णन ऊपर आ चुका है। सोते-जागते, अन्त में सबेरा हुआ। श्री परेरा महाशय ने सूर्योदय देखने के लिये बाहर चलने को कहा, देखा तो उधर का सारा आँगन खचाखच भरा हुआ है। हिन्दू, मुसलमान, बौद्ध—तीनों ही मजहब के लोग डटे हुए हैं। सभी सूर्योदय देखने के लिये उत्सुक हैं। धीरे-धीरे अँधेरे में से एक पतली-सी लाली दिखाई पड़ी। लेकिन साथ ही पूर्व में बादल के बिखरे छींटे कुछ बढ़ने लगे। यहाँ से पूर्व की ओर 'किरि-गल-पोत' शिखर पड़ता है, लेकिन अब उधर बादल था, इसलिये लोगों की नजर पूर्व-उत्तर तरफ 'पि-दु-रु-तला-गल' पर पड़ रही थी। एक पतली-सी सुनहली रेखा के धोखे में लोग साढ़े छः बजे के बाद तक उधर ही देखते रहे। अन्त में पुजारी ने बतलाया, सूर्य बहुत ऊपर चढ़ गये, आज बादल से सूर्योदय का दृश्य नहीं दिखाई पड़ा। सब लोग हताश हुए।

अब हम लोग नीचे उतरने लगे। चढ़ते वक्त दिल को दिलासा देते आये थे कि उतराई में मौज रहेगी। किंतु यहाँ तो मालूम होता था कि पैर के जोड़ ही खुल गये हैं। थोड़ी देर नीचे की ओर आकर देखा, एक गुजराती मुसलमान सज्जन हाथ-पैरों के बल मुश्किल से चढ़ रहे हैं। मैंने एक गुजराती मुसलमान से ही पूछा, भाई यहाँ क्या है ? उन्होंने उत्तर दिया, दादा के उतरने की जगह है। सिंहली पुजारी ने बतलाया था कि मुसलमान लोग यहाँ मुहम्मद साहब के उतरने का स्थान मानते हैं, जिनका एक पैर यहाँ और दूसरा मक्का में पड़ा था ! हिन्दुओं के लिये बतलाया, वे इसे शिव का पद-चिह्न मानते हैं और उनके विचारानुसार शिवजी का एक पैर यहाँ और दूसरा मक्का में है ! किसी जानकार हिन्दू से तो नहीं पूछ सका; किन्तु मुसलमानों के बारे में मालूम हुआ कि मुहम्मद साहब का पैर नहीं, बल्कि बाबा आदम का पैर है !!

बौद्ध लोग इस शिखर को 'समन्तकूट' और पद-चिन्ह को 'श्रीपाद' कहते हैं। वे कहते हैं कि शाक्य मुनि एक बार लंकाद्वीप में आये थे, उसी समय उन्होंने यहाँ धर्मोपदेश किया और आनेवाली जनता के हितार्थ अपना पदचिह्न छोड़ दिया। सारे पाली त्रिपिटक (बुद्ध वचन) में न ऐसे किसी आगमन का और न उपदेश ही का कोई जिक्र है, तो भी यहाँ के लोग इसपर परम श्रद्धालु हैं। यही नहीं, बल्कि उनके कथनानुसार बुद्ध ने तीन पद-चिह्न छोड़े हैं—एक नर्मदा-नदी में सच्चबद्धक पर्वत पर; दूसरा यहाँ और तीसरा यवनों के नगर अर्थात् मक्का में; जैसा कि इस गाथा में कहा गया है—

"यं नम्मदाय नदिया पुलिने च तीरे, यं सच्चबद्धगिरिके सुमनाचलग्गे।
यं तथ योनकपुरे मुनिनो च पादं, तं पादलांछनमहं सिरसा नमामि॥"

जिस प्रकार बदरीनारायण और पशुपति की यात्रा में लोग अनेक गीत गाते तथा जय-घोष करते चलते हैं, वैसे ही यहाँ भी। "हिम-वत्-वर्णनाव" इसी मतलब की एक पद्य-पुस्तिका ही है। (यहाँ के लोगों के लिये इतनी सर्दी भी काफ़ी है, इसीलिये इस प्रदेश का नाम ही 'हिमवत्' रख दिया गया है)। इन पद्यों में एक आरंभिक पद को एक आदमी पहले कहता है। इसके बाद सभी साथी मिलकर दूसरे हिस्से को बोलते हैं। उदाहरणार्थ—

समन देवियो (समन देवता)—पिहिट वेण्ड (प्रतिष्ठा हो)।
पाद-पद्म—अपि वँदिण्ड (हम वन्दना करते हैं)।
अपे बुदुन् (अपने बुद्ध को)—अपि वँदिण्ड।
वन्दना करके लौटते समय के कुछ पद्य ये हैं—
अपे बुदुन् अपि वेंद गन—गमट यण्ड यन वो।
(अपने बुद्ध को अपने वंदना कर)—(ग्राम को जा रहे हैं)।
समन देविंदु पिन भर-गेन—पिनट पिहिट वेन ओ।
(समन देवता की पुण्य प्रदान कर, पुण्य को प्रतिष्ठित किया)।

रास्ते में जलपान कर हम पौने दस बजे मोटर की जगह पर आये। दोपहर की गाड़ी छूट जाने का डर था। वाङ् महाशय को डर हुआ, कहीं रात की गाड़ी में आज भी जागते ही न जाना पड़े, इसलिये उन्होंने तो तुरत चलने का निश्चय कर लिया और लारी पर न चढ़ने की प्रतिज्ञा भूलकर फिर लारी ही से 'हैटन्' के लिये चल पड़े। हम लोग भोजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तूफ़ान में

श्रीगणेश पाण्डेय

एक धर्मपरायणा स्त्री ने मुझसे यह कहानी कही, जो पापियों, युवकों और नई रोशनी के लोगों के लिये चेतावनी-स्वरूप है।

स्वच्छ आकाश में यकायक काली घटा घिरने लगी। वह बादल घने और भयावने थे। पहले बहुत दूर पर दिखाई पड़े, लेकिन शीघ्र ही गाँव के ऊपर आकाश में छा गये। तेज़ हवा का एक झोंका आया और बादलों को आगे घसीट ले गया। हवा के झोंके से बादलों ने और भी भयानक रूप धारण किया। हवा बड़े प्रबल वेग से चलने लगी, जिससे धूल से भरे खूब ऊँचे-ऊँचे बबूले उठने लगे, पेड़ उखड़ने लगे और छतें नष्ट होने लगीं।

समूचे गाँव पर भय का साम्राज्य छा गया। प्रकाशवान दिन सहसा रात्रि के रूप में परिवर्तित हो गया।

बिचारे किसान अपने घर की खिड़कियों की सिटकनी बन्द कर और दरवाजों में ताले लगाकर घर में छिप रहे। पाप-दग्ध यहूदियों के गंभीर मुख और भी गंभीर हो गये। 'पश्चात्ताप के रविवार' की उदासीनता और भी ज्यादा हो गई। परमात्मा झिड़की दे रहा था। प्रार्थना गानेवालों की दर्द-भरी आवाज़ और भी हृदयद्रावक होती जाती थी।

खूब अन्धकार बढ़ने लगा। बुढ़िया 'चीने' ने चसमे के भीतर से आँखें फैलाकर सड़क की तरफ देखा और काँपते हुए हृदय से कहा — 'ऊहू' और एक ठंढी साँस ली।

कुछ देर तक वह बाहर निगाह किये बैठी रही। उसने अपना सिर हिलाया। उसकी आत्मा परमात्मा की सर्वव्यापिनी शक्ति से प्रभावित थी।

अब भी अँधेरा न घटा। बादलों के दल का अन्त न हुआ। धूल उड़ाता हुआ पवन बहता ही रहा।

वह प्रार्थना के पद को अब दुहराती न थी। उसने अपना चसमा आँखों पर से हटाया और स्त्री-प्रार्थना की मोटी जिल्द वाली पुस्तक में रख दिया। अपनी जगह पर उठ खड़ी हुई और अपनी लड़की के कमरे में गई।

क्या कहती हो तुम उस.........?

उसने अपना प्रश्न पूरा नहीं किया। उसकी लड़की वहाँ पर न थी!

उस बुढ़िया ने कमरे में चारो तरफ ध्यान से देखा, रसोई-घर में झाँका, फिर कमरे में चली आई। उसकी लड़की की टोपी उसकी जगह पर न थी। काँपते हुए हाथों से उसने कोठरी खोली। देखा, उसकी जैकट भी गायब है।

वह चली गई। उसने अपनी लड़की को कम-से-कम उस 'पश्चात्ताप के रविवार' को बाहर जाने से मना कर दिया था। उसने उसे उस दिन घर पर ही रहने को कहा था—उस नास्तिक युवक के पास जाने से सावधान कर दिया था।

उसका बुढ़ापे का चेहरा बादल से भरे आसमान की तरह काला हो गया। और, उसका हृदय इतना भयावना, जितना तूफ़ान! वह कमरे में चारों तरफ आँखें फाड़-फाड़ कर देखने लगी, मानों वह मारने के लिये कोई आदमी या तोड़ने के लिये कोई चीज़ ढूँढ़ रही है, जिसपर वह अपना गुस्सा उतार सके।

वह अपने आन्दोलित हृदय के गुब्बार को निकालती हुई गुस्से में भरकर बोली—

हाय, वह मेरी कोख से पैदा न हुई होती ··!

यह कहकर उसने आकाश की तरफ अपना हाथ उठाया।

उस पवित्र दिन को वह अपनी जिह्वा से शाप की बात कह गई, इसके लिये उसे ज़रा भी भय न मालूम हुआ। इस समय वह अपनी ज़बान से शाप देने और खूब कड़ी-कड़ी बातें निकालने के सिवा और कुछ नहीं कर रही थी। अगर वह उसे उस समय मिल जाती, तो उसका झोंटा पकड़ कर खूब मारती—उसकी अच्छी ख़बर लेती।

सहसा उसने अपने सिर पर शाल रक्खा और कमरे से बाहर निकल पड़ी।

बिजली बादलों के बीच कौंध गई। कड़कड़ाहट की ध्वनि देर तक गूँजती रही। इसके बाद कौंध-पर-कौंध और कड़कड़ाहट-पर-कड़कड़ाहट का क्रम चलने लगा, जो एक दूसरे से बढ़कर चकाचौंध और गर्जन करनेवाला था।

गाँववालों की भयातुरता और ज्यादा बढ़ चली। भला ऐसे पवित्र दिन को यह वज्र-निनाद और यह दानवी रूप! हर-एक व्यक्ति का हृदय विचलित हो गया था। सभी की आत्मा ईश्वर को पुकार रही थी।

बुढ़िया ने इस तरफ ज़रा भी ध्यान न दिया।

हवा उसकी आँखों में धूल झोंककर उसे अन्धी बना देती थी, उसके आँचल को इधर-उधर उठाती थी, और सिर की टोपी को खिसका देती थी।

वह इन सब उत्पातों को झेलती हुई आगे बढ़ती जाती थी।

वह अपने सामने न तो कुछ देखती थी और न सुनती ही थी। उसके हृदय के भीतर तूफान चल रहा था। कोई शक्ति उसे आगे बढ़ाये चली जा रही थी। उसके सामने बिलकुल अन्धेरा छाया हुआ था; क्योंकि उसकी आँखों में खून उतर आया था।

आदि से निवृत्त होकर चले, तो भी देखा कि अभी गाड़ी में कुछ देर है, और वाड महाशय वहाँ इन्तजार कर रहे हैं। उन्होंने सुनाया, आज भी एक लारी उलट गई। लेकिन और लोगों ने कहा, आज नहीं, कुछ दिन पूर्व। मालूम होता है, लारी के गिरने के स्थान को दिखाते हुए किसी ने कुछ अपनी भाषा में कहा होगा, और इन्होंने उसका आज ही गिरना समझ लिया! गाड़ी से रवाना होकर, ४५ घंटे के बाद, हम फिर कोलम्बो पहुच गये।

—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका छोटा-सा कद और भी छोटा हो चला था। वह दुगुनी चाल से जा रही थी। ऐसा जान पड़ता था कि हवा से भी तेज़ जा रही है। हवा उसके पीछे रह जाती थी। और, जब कभी हवा के साथ उसकी मुठभेड़ हो जाती, हवा उसे और आगे ढकेल देती और उसके क़दम जल्दी-जल्दी पड़ने लगते।

वह इधर-उधर नहीं देखती थी और न खिड़की से झाँकते हुए नेत्रों की ओर ही ध्यान देती थी। उसकी आत्मा प्रकृति की विकरालता के साथ एक-रस हो रही थी। उसका विचार एक अभिशाप, एक भयानक अभिशाप, था। वह शब्दों से ही प्रकट नहीं हो रहा था, बल्कि उसकी अन्तरात्मा से भी। उसके अन्दर इतना गर्जन, इतना निनाद, हो रहा था कि उसके सामने क्रुद्ध बादलों की गड़गड़ाहट भी मात थी।

वह उस नास्तिक युवक के घर में पिल पड़ी। उसने भरपूर ठोकर देकर दरवाज़ा खोला और वैसे ही उसे बन्द भी कर दिया। जो लोग उस कमरे में थे, वे उसके इस तरह यकायक टपक पड़ने से उछल पड़े। उसने उन लोगों पर विद्वेष-भरी दृष्टि डाली और एक कमरे से दूसरे कमरे में और दूसरे से तीसरे में गई। वह झटके से कमरों को खोलती और वैसे ही उन्हें बन्द भी कर देती थी, जिससे गड़गड़ाहट की आवाज़ होती थी; मानों उसमें और हवा में यह होड़ लगी थी कि कौन खिड़कियों के किवाड़ों और शीशों से अधिक कड़कड़ाहट पैदा कर सकता है। एक छोटा बच्चा डरकर चिल्लाने लगा। वह एक कमरे से दूसरे कमरे में गई, लेकिन न तो वह युवक ही मिला और न उसकी लड़की ही।

तब वह पीछे की ओर लपकी। देहली पर एक क्षण तक ठहरी। उसने अपने नेत्रों को आकाश की ओर उठाया और अपनी बाँहों को ईश्वर की ओर।

आग की लपट इस घर को खाक कर दे!—उसने तीव्र स्वर में कहा।

तब वह सड़क के किनारेवाले घरों के दरवाज़ों को झटके के साथ खोलती हुई उन्हें खुला छोड़कर आगे बढ़ने लगी। घर के लोग टकटकी लगाये खड़े थे, मानों तूफ़ान उन्हीं के घर में प्रवेश कर रहा है। अत्यन्त घबराहट के मारे लोग अपना मुँह बन्द करना तक भूल गये थे।

बादलों से—ओलों से मिली—बूँदों की बौछार होने लगी। तूफ़ान ऐसा जान पड़ने लगा, मानों एक बड़ी भारी कड़ाही में कोई चीज खौल रही है।

इस खौलते हुए तूफ़ान ने बुढ़िया के दिल में और खलबली मचा दी। कोई चीज़ उसके भीतर-ही-भीतर बहुत बुरी तरह से मथने लगी। उसे अब पाँव के नीचे की ज़मीन बिलकुल नहीं जान पड़ती थी। वह पानी की बौछारों से बिलकुल भींग गई थी, लेकिन इससे वह रुकनेवाली न थी। इसने उसकी क्रोधाग्नि को और भी बढ़ा दिया।

जिन घरों में उसने अपनी लड़की और उस नास्तिक युवक के जाने की संभावना समझी, उन सब घरों में वह गई। पर कहीं भी ठहरी नहीं और न कहीं कोई शब्द ही उच्चारण किया, बल्कि बिजली की कौंध की तरह घर के अन्दर गई और उलटे पाँव वापस आई। इस तरह वह बेचारे घर वालों को मुँह बाये, आश्चर्य-चकित, छोड़ जाती।

लेकिन वह उन लोगों को ढूँढ़े बिना दम न लेगी। उन लोगों को शाप और गालियाँ देना उसने बन्द नहीं किया।

जब वह अन्तिम घर से निकली, तो एक क्षण के लिये ठहर गई। सोचने लगी, अब कहाँ जाऊँ?

वह अपने घर की ओर लौट पड़ी। उसका दिल कह रहा था कि लड़की घर ही पर है। उसकी जिह्वा से भयानक शापों की वर्षा हो रही थी। उसका क्रोध अन्तिम सीमा को पहुँच गया था। उसे जान पड़ता था कि हवा में भी उसके शाप, उसकी गालियाँ और उसकी सौगन्दें भरी हैं।

हवा के तेज़ झोंके, बिजली की क्षणिक चमक और बादलों की घोर गड़गड़ाहट के साथ उसने कमरे में पाँव रखा।

उसकी लड़की वहाँ न थी!

वह कुर्सी पर बैठ गई और फूट-फूट कर रोने लगी।

बिजली की भयानक गड़गड़ाहट हुई। ऐसा जान पड़ा कि प्रकृति उसके शेष उत्साह को, जो क्रोध के कारण उसमें आ गया था, समाप्त कर देगी।

गाँव वाले अपने-अपने घरों में डर के मारे छिपे हुए थे। उन लोगों ने चारों तरफ़ दृष्टि डाली, फिर बाहर की ओर भी देखा—कोई दुर्घटना तो नहीं हो गई है? प्रायश्चित्त करने वाले लोग प्रार्थना की पुस्तक में पहले से अधिक ध्यानमग्न हो गये और उनकी आवाज और भी ज्यादा काँपने लगी।

वास्तव में बुढ़िया 'चेनी' ने गड़गड़ाहट को नहीं सुना। वह वैसे ही रोती रही। तब उसके गले से एक बड़ी भयावनी चीख निकली, जो उस कड़कड़ाहट से कम न थी—

अच्छा हो कि वह जीती घर वापस न आवे, लोग उसकी अर्थी को ही यहाँ पर लावें। हे परमेश्वर!

बादलों ने कड़कड़ाहट के साथ उत्तर दिया। वायु का वेग और भी बढ़ गया।

फिर सहसा वह उठी और पहले ही की तरह फुर्ती से चल पड़ी। हवा ने भी उसका पीछा किया, जो उसे पीछे से आगे की ओर बढ़ाने लगी। वह आगे-आगे स्वामिभक्त कुत्ते की तरह सब कुछ हटाती जाती थी और रास्ते की धूल उड़ाकर उसे बादल से गिरती हुई बड़ी-बड़ी बूँदों में तथा उसके नेत्रों से गिरती हुई बूँदों में मिला देती थी।

वह गाँव के बाहर की सड़क पर लपकी हुई जा रही थी।

वे सड़क पर ज़रूर टहलने के लिये गये होंगे, जहाँ पर अक्सर वे दिखाई पड़ा करते थे। वह उनको या तो रास्ते ही में पायेगी या जंगल के पास की सराय में।

गाँव के आखिरी छोर पर उसके पाँवों की आहट आँगन से कुत्तों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने सुना। उनमें कुछ घर के फाटक के पास आकर भीतर ही भूँकने लगे और बूँदों का कुछ खयाल न किया। दूसरे, जो उतने आलसी न थे, फाटक के बाहर चले आये और भूँकने लगे; लेकिन उसने न तो उन्हें देखा और न उनका भूँकना ही सुना। वह सिर्फ़ आँख फाड़-फाड़कर आगे तथा इधर-उधर देखती जाती थी।

एक कुत्ते ने उसके गाउन का छोर, जो भींगने के कारण भारी हो गया था, पकड़ लिया। उसने इसपर भी ध्यान न दिया और कुछ दूर तक उसे घसीटती हुई ले गई। यहाँ तक कि कुत्ता उस मूसलधार वृष्टि में उसके साथ चलने से थक गया। इसलिये उसने छोर को छोड़ दिया। कुछ क्षण तक उसने सोचा कि उसे फिर पकड़ूँ, लेकिन तुरंत ही गुर्राकर अपने आँगन की ओर चला गया।

सड़क पर हवा का ज़ोर और ज्यादा था। पास के जंगल से बिजली की गड़गड़ाहट की प्रतिध्वनि यहाँ तक पहुँचती थी। बुढ़िया ठीक अपने सामने बड़ी दूर तक, बूँदों की बौछार के बीच भी, देखती थी।

आँधी-तूफ़ान के कारण पेड़ों की टहनियाँ और शाखाएँ टूट-टूटकर रास्ते में पड़ी हुई थीं। कहीं-कहीं पर पेड़ भी जड़ से उखड़ कर गिरे हुए थे।

उसने बड़बड़ाते हुए कहा—हे ईश्वर, क्या कोई बिजली उनपर गिरकर उन्हें समाप्त न कर दिये होगी!

दिल के रोने से वह विक्षिप्त-सी हो रही थी। तमाम गालियों और शापों के लिये उसे एक निश्चित रूप मिल गया।

और, वह आगे बढ़ती गई।

लेकिन आगे यह क्या है?

उसके आगे कुछ ही कदम पर दो आदमी पड़े हुए थे—एक मर्द और एक औरत। उनके मुँह ऐंठे हुए थे, चेहरा झुलस कर काला हो गया था। वे दो लाशें थीं, जिनपर बिजली गिर पड़ी थी!

ज़ोरों की कड़कड़ाहट के साथ फिर बिजली चमकी। उसने उसके प्रकाश में अपनी लड़की को पहचान लिया!

लड़की की बाँह युवक की बाँह के नीचे थी। नौजवान के हाथ का खुला हुआ छाता जल गया था।

बुढ़िया चिल्लाकर उन्हें शाप देने ही को थी, और अपनी गर्जना को बिजली के गर्जन में मिला देने ही को थी कि इतने में उसकी आँखों से बिजली की तरह चमक निकली—उसके हृदय में तूफ़ान उठा।

उसने अशुभ-से-अशुभ बात कहना चाहा कि मृत कन्या ने मुँह-माँगी मुराद को पा लिया।

यकायक उसके आगे अँधेरा छा गया। उसे ऐसा जान पड़ा, मानों पिघला हुआ शीशा उसके सिर पर ढाला जा रहा है। थकावट और कँपकँपी के मारे वह वहीं पर गिर पड़ी। उसके भींगे हुए कपड़ों से यह जान पड़ने लगा कि वह ज़मीन में गड़ जायगी। उसकी आँखें मुँद गईं।

फिर आँधी का एक झोंका आया; बिजली चमकी और बादल गरज उठे।

लेकिन उस बुढ़िया के भीतर सब शान्त—अंधकारमय—था। वह अपनी लड़की की लाश के सामने घुटनों तक झुकी, उसके शरीर पर अपनी काँपती हुई भुजाओं को फैला दिया और उसकी आँखों में एक लपट-सी झिलमिला उठी।

उसकी आत्मा काँप उठी। उसके दाँत परस्पर बजने लगे। वह हाँफती हुई स्वर-रहित शब्दों में बोली—

मेरी प्यारी बेटी 'हेनी'! मेरी प्यारी!!*

---

* इङ्गिश कहानी-लेखक 'पिन्स्की' की एक कहानी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

हिन्दी-भाषा पर द्विवेदीजी का प्रभाव

पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, साहित्यरत्न

आधुनिक हिन्दी-भाषा पर फ़ोर्ट विलियम कालेज में बैठे-बैठे भाषा का स्वरूप गढ़नेवाले लल्लूजीलाल और पं० सदल मिश्र का उतना प्रभाव नहीं है, जितना उनके पश्चात् भाषा के कंटकाकीर्ण मार्ग को स्वच्छ बनानेवाले भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र और पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी का। लल्लूजीलाल जैसी भाषा गढ़ रहे थे, वह तो एकदम गद्य के स्वरूप के विरुद्ध थी। पं० सदल मिश्रजी ने भाषा का जो रूप सामने रक्खा, वह व्यावहारिक और स्वच्छ तो था; पर भाषा का जो प्रकृत प्रवाह मुंशी सदासुख लाल में देख पड़ा था, वह इस गढ़े हुए रूप में कहाँ! भारतेन्दु बाबू जब हिन्दी-क्षेत्र को गोड़ने के लिये अपनी कुदाली लेकर उतरे, तो उन्होंने उसी स्वाभाविक स्वरूप को सामने रक्खा। भारतेंदु के पहले भाषा अपने उखड़े हुए रूप में चल रही थी। उसे एक बँधे हुए रूप में चलने लायक उन्होंने भली-भाँति बना दिया। भारतेंदु के समय में और उनके अस्त होने के पश्चात् भी उनकी मित्र-मंडली उन्हीं के आदर्श पर भाषा के स्वरूप का व्यवहार करती रही। राजा शिवप्रसाद 'सितारे-हिंद' ने जो अस्वाभाविक गंगाजमुनी धारा बहाने का प्रयत्न किया था, उसमें स्नान करने की कौन कहे, उसका स्पर्श भी किसी ने नहीं किया! भारतेंदु के प्रकाश से हिंदी-जगत् उनके अस्त होने पर भी आलोकित होता रहा।

यद्यपि भाषा के रूप का विकास भारतेंदुजी के समय में भलीभाँति हो चुका था, उसकी अभिव्यंजन-शक्ति पहले से बहुत बढ़ गई थी; पर उसका शरीर अव्यवस्थित ही पड़ा रह गया। शब्द-संगठन और व्याकरण के अनुशासन द्वारा उसे व्यवस्थित करने की आकांक्षा बनी ही रही। यह कार्य द्विवेदीजी ने किया। भाषा की 'अनस्थिरता' दूर की गई और उसे व्याकरण के विधान द्वारा परिष्कृत किया गया। जिस समय द्विवेदीजी

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिंदी के क्षेत्र में अपनी कलम करनेवाली कलम लेकर उतरे, उस समय कितना वितंडावाद उठ खड़ा हुआ था, इसे हिन्दी-गद्य-साहित्य का थोड़ा-सा इतिहास जाननेवाले भी जानते हैं। कहना न होगा कि 'महावीर' जी के 'प्रसाद' से द्विवेदीजी ने इस क्षेत्र में विजय ही पाई; उन्हें कोई बेदखल नहीं कर सका। यद्यपि पं० गोविन्दनारायणजी मिश्र ऐसे प्रकांड विद्वानों ने अपनी प्रतिभा के द्वारा 'सटाऊ सिद्धांत' का भरपूर समर्थन किया, और कलकत्ते के वायुमंडल में अपना प्रभाव भी छोड़ गये; पर कौन कह सकता है कि कलकत्ते के पत्रों पर द्विवेदीजी की भाषा का प्रभाव नहीं है? मिश्रजी ने केवल अपना 'सटाऊ-सिद्धांत' ही छोड़ा है, उनकी भाषा का प्रभाव न तो कलकत्ते के वायुमंडल में है और न अन्यत्र कहीं! पर द्विवेदीजी की भाषा से सारा हिंदी-जगत् प्रभावित है। दो-चार अप-वादों की बात मैं नहीं कहता। अपनी व्यक्तिगत शैली रखनेवाले कुछ विशिष्ट शैलीकारों को भी अलग करना पड़ेगा। किन्तु शेष हिंदी-जगत् द्विवेदीजी के ही भाषा के आदर्श को लेकर आगे बढ़ा है और बढ़ रहा है।

हम यह मानने के लिये तैयार हैं कि द्विवेदीजी ने हिन्दी-भाषा पर अपना जैसा प्रभाव दिखाया, वैसा हिन्दी-साहित्य पर नहीं; पर साथ ही ऐसा कहने वालों को यह भी देखना चाहिये कि उस समय भाषा अपना स्वरूप ही स्थिर करने और उसे सुव्यवस्थित करने में लगी थी, साहित्य की ओर बढ़ने का उतना अधिक अवकाश ही नहीं था। द्विवेदी-जी तो उस समय हिन्दी-जगत को यह दिखा देना चाहते थे कि हिन्दी की अभिव्यंजन-शक्ति कम नहीं है, उससे काम लेने का ढंग आना चाहिये। यही कारण था कि उन्होंने प्रत्येक विषय पर अपनी लेखनी चलाई और उसे भलीभाँति पूर्ण किया। उस समय इसी की आवश्य-कता थी। व्यवहार में आनेवाले प्रयोजनीय संस्कृतशब्दों को ग्रहण कर अव्यावहारिक अरबी-फारसी के विदेशी शब्दों से गला छुड़ाना आवश्यक था।

हमारे उक्त कथन का अभिप्राय यह नहीं है कि द्विवेदीजी ने विदेशी शब्दों को अछूत समझा है। उन्होंने केवल अव्यावहारिक शब्दों को ग्रहण नहीं किया। हिन्दी-भाषा की रीति-नीति के कायल शब्द उनकी भाषा में बराबर प्रयुक्त हुए हैं, स्वदेशी ढाँचे में ढले हुए विदेशी शब्दों को सभी ने अपनाया है। इधर कुछ लोगों ने विदेशी के बहिष्कार और स्वदेशी के अत्यधिक प्रयोग को ही हिन्दी-भाषा का वास्तविक स्वरूप समझ लिया है। कुछ लोग तो अपरिचित संस्कृत-शब्दों का बाहुल्य दिखा कर शैलीकार बनने का भी दम भरने लगे हैं। खालिस संस्कृत-शब्दों के व्यवहार का ही नाम 'शैली' नहीं है। शैली के लिये व्यक्तिगत विशेषताएँ आवश्यक होती हैं। जो लेखक अपने को धोखा देकर बनावटी भाषा के प्रयोग द्वारा विशिष्ट लेखक बनने की हठधर्मी करते हैं, उन्हें द्विवेदीजी की भाषा का अध्ययन करना चाहिये। आधुनिक युग में भाषा सरल-से-सरल करने का उद्योग अँगरेजी-साहित्य में भी हो रहा है। इसका कारण है—भाषा में स्वाभाविकता लाने का उद्योग। इस बात को द्विवेदीजी ने आज से चालीस वर्ष पहले ही समझ लिया था और उसी सिद्धांत को सामने रखकर उन्होंने हिन्दी-भाषा के प्रासाद में मरम्मत शुरू की थी। जो लोग हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाना चाहते हैं, अथवा जिनके विचार से हिन्दी ही राष्ट्रभाषा बनने की अधिकारिणी है, उन्हें द्विवेदीजी की ही भाषा का अनुकरण करना पड़ेगा। हमारे विचार से द्विवेदीजी की और उनका अनुगमन करने वाले लेखकों की ही भाषा का यह प्रभाव है या हो सकता है कि हिंदी राष्ट्रभाषा मानी जाने लगी है।

भाषा को व्यापक बनाने के लिये उसमें प्रसाद-गुण लाना बहुत आवश्यक है। द्विवेदीजी ने गंभीर-से-गंभीर विषय को अपने प्रसाद-गुण से ही बहाया है। उनकी-सी सरल भाषा लिखने में हिंदी के अन्य शैलीकार आजतक सफल नहीं हुए हैं। भाषा का सरल स्वरूप सामने रखने के लिये शब्दों का चुनाव और शब्द-संगठन का सरल होना तो आवश्यक होता ही है, विचार-परंपरा को भी सुलझे हुए रूप में सामने रखना पड़ता है। द्विवेदीजी ने कहीं भी क्लिष्ट कल्पना और उलझी हुई विचार-परंपरा से अपने लेखों की सरलता नहीं नष्ट की। इधर सरल-से-सरल विषयों को भी कुछ लोग शब्द-जाल और उलझे हुए अस्पष्ट विचारों द्वारा क्लिष्ट बनाकर हिन्दी-जगत् में धाक जमाने की चेष्टा कर रहे हैं। यह बहुत खटके की बात है।

कुछ लोग हिन्दी को स्वतंत्र भाषा मानने में हिचकते हैं। वे संस्कृत और उर्दू के द्वारा हिन्दी को लँगड़ी बनाने की चेष्टा किया करते हैं। ऐसे लोगों को हम यह खुल्लमखुल्ला बता देना चाहते हैं कि संस्कृत में गद्य का विकास ही नहीं हुआ है। वस्तुतः हिन्दी-गद्य का विकास उसके प्रतिवर्तन में ही है। उर्दू को लोग अरबी और फारसी की सुथनी पहना कर उसे तमाशा बना रहे हैं, इसलिये उर्दू के प्रयोगों से भी हिन्दी का स्वरूप नहीं निखर सकता। हिन्दी में अपनी स्वतंत्र विशेषताएँ हैं, इसमें अपनी स्वतंत्र अभिव्यंजन-शक्ति है। धीरे-धीरे इसकी ओर लेखकों का ध्यान जा रहा है और वे अपने प्रयोगों द्वारा हिन्दी को सुसम्पन्न कर रहे हैं। द्विवेदीजी की भाषा में न तो संस्कृत का सामासिक जंगल है और न उर्दू की कलाबाजियाँ। उनकी भाषा हिन्दी का ठेठ रूप लिये हुए है। केवल शब्दों का प्रयोग ही भाषा नहीं है, वाक्यों की बनावट ही भाषा का असली रूप है। हिंदी में नई-नई उद्भावनाएँ करके द्विवेदीजी ने हिन्दी की व्यापकता को सर्वमान्य बना दिया है। जो लोग हिन्दी की स्वच्छन्दता के कायल नहीं हैं, उन्हें ठंडे दिल से द्विवेदीजी और पं० रामचंद्र शुक्ल की भाषा का मनन करना चाहिये।

केवल गद्य ही में नहीं, पद्य में भी द्विवेदीजी ने अपना प्रभाव छोड़ा है। खड़ी बोली गद्य की ही भाषा बनकर सामने आई है, इसीलिये उसमें पद्यों में प्रयुक्त होने योग्य परिपूर्ण विशेषताएँ नहीं हैं। यही कारण था कि भारतेंदु बाबू ने पद्यों में परम्परा-प्राप्त व्रजभाषा को ही स्थान दिया था। द्विवेदीजी ने खड़ी बोली को पद्य के लिये भी ग्रहण किया और कितने ही होनहार कवियों को उसमें पद्य लिखने के लिये प्रोत्साहित भी किया। अवश्य ही उस समय लोगों ने भाषा में पद्यात्मक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेषताओं के लाने का पूरा प्रयत्न नहीं किया; किन्तु धीरे-धीरे स्वतः वे विशेषताएँ आती जा रही हैं। द्विवेदीजी के संप्रदाय के लोगों ने हिन्दी के प्राचीन लाक्षणिक प्रयोगों की ओर आँख नहीं उठाई, अन्यथा खड़ी बोली को पद्य के लिये असमर्थ भाषा बतलाने की जो आवाज उठा करती है, वह उठने ही न पाती। इस ओर द्विवेदीजी के प्रभाव-साम्राज्य से बाहर के लोगों ने कुछ चेष्टा अवश्य की है—जैसे पं० अयोध्यासिंहजी उपाध्याय और पं० श्रीधर पाठक; किंतु ऐसे लोगों में लाक्षणिक प्रयोग स्वतः आ गये हैं। यदि इसके लिये थोड़ा उद्योग किया जाय, तो 'खड़ी बोली' पद्य की एक सम्पन्न भाषा बन सकती है। फिर भी द्विवेदीजी के ही उद्योग और प्रोत्साहन का यह परिणाम है कि मैथिलीशरण गुप्तजी ऐसे भारत-प्रसिद्ध कवि, बाबू गोपालशरणसिंह ऐसे सत्कवि और पं० रामचरित उपाध्याय ऐसे पंडित-कवि हिन्दी में दिखाई दे रहे हैं।

अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं। खड़ी बोली के गद्य और पद्य दोनों द्विवेदीजी के प्रभाव से प्रभावित हो चुके हैं। इधर जब से उन्होंने साहित्य-क्षेत्र से संन्यास ग्रहण कर लिया है, तब से भाषा का स्वरूप मनमाना होता जा रहा है। हिन्दी के हिमायतियों का ध्यान इस ओर आकृष्ट होना आवश्यक है। जब तक द्विवेदीजी इस क्षेत्र में डटे थे, तब तक भाषा के विषय में पर्याप्त वाद-विवाद भी चला करता था और उसका स्वरूप भी व्यवस्थित होकर ही सामने आता था। उनके अलग होते ही हिन्दी में निरंकुशता का साम्राज्य बढ़ रहा है। कोई स्वप्निल आभा, नीरव ध्वनि और अनंत की पुकार से लोगों को चौंका रहा है; तो कोई हमारी 'रोटी' छीनकर 'हलवा' खा रहा है और ऊपर से चूल्हे पर चढ़े हुए 'तवे' को ले भागने की धमकी दे रहा है। जो लोग केवल धाक जमाने के लिये एक नया ऊँट छोड़ने का हौंसला दिखा रहे हैं, उन्हें यह न समझ लेना चाहिये कि हिन्दी-संसार अंधा है। हिन्दी किसी के घर की रखेली नहीं है कि जब जी में आया, उसे झोंटा पकड़ कर बाहर निकाल दिया। वह सहस्रों व्यक्तियों के घर की महारानी है। उसने अपने बाहुबल से यह साम्राज्य स्थापित किया है, 'महावीरों' के रहते उसे इस बनावटी आँधी का भय नहीं है।*

---

* द्विवेदी-जयन्ती के अवसर पर लिखित।

सुकवि-सूक्ति

बाबू महावीरप्रसाद गहमरी

[राजतरंगिणीकार 'कल्हण']

[१] जो आदमी दूसरे की बुराई करने के लिये जो उपाय करता है, उसी से उसका भी नाश होता है। आग लोगों को अन्धा करने के लिये जो धुआँ छोड़ती है, वह धुँआ ही जल बरसा कर आग को बुझाता है। [२] दान-रूपी पौधा अगर सत्क्षेत्र में रोपा जाय, प्रिय वाक्य से उसका आलबाल बनाया जाय और निर्दोष हृदय के प्रसाद-जल से उसका सिंचन हो, तो वह बहुत छोटा होने पर भी समय पाकर दाता को अभीष्ट फल देता है। [३] दैव और मेघ की प्रसन्नता का कोई नियम नहीं है। दैव बहुत बड़ी भलाई करते-करते अचानक बुराई कर बैठता है और मेघ जल बरसाकर पेड़ों की गरमी दूर करते-करते अचानक वज्र की आग बरसा देता है। [४] जो लोग साधारण फल चाहते हैं, उनके लिये राजा की सेवा की अपेक्षा राजकर्मचारियों की सेवा करना अच्छा है। राजा से फल प्राप्त करने में बहुत कष्ट भोगना पड़ता है। जो लोग शिवजी के चरणों में लगे रहते हैं, उनको तत्काल तो भस्म ही मिलता है। पर जो लोग उनके बैल के चरणों में रहते हैं, उनका भाग्य खुलता है; वे सदा चमकता हुआ सोना पाते हैं। [५] सेवक अपनी कार्यसिद्धि के लिये जिस उपाय से स्वामी की सेवा समझता है, स्वामी उसका मतलब न समझकर उसको उसी काम के योग्य समझने लगता है। शेषनाग ने यह सोचकर कि "गरुड़ का भय दूर हो जाने पर सुख से रहूँगा" कष्ट स्वीकार कर अपने शरीर को नारायण की शय्या बना दी। नारायण ने इसमें उसकी कष्टसहिष्णुता समझकर अन्त में सदा के लिये कष्टदायक धरती का बोझ उसके सिर लाद दिया।

['शेक्सपीयर']

[१] दया बड़ा भारी गुण है। वह स्वर्ग से मर्त्यलोक में अमृत की भाँति बरसती है। इससे दोनों को सुख होता है—जो दया करता है उसको भी, और जिसपर दया की जाती है उसको भी। हम ईश्वर से दया की प्रार्थना करते हैं, इसलिये हमको भी दूसरों पर दया करनी चाहिये। [२] लोग नम्रता से ही उन्नति करते हैं; परन्तु जब उन्नति हो जाती है तब उसी नम्रता को, जिसके द्वारा वे इतने बढ़े, भूल जाते हैं। उनकी दशा ठीक एक सीढ़ी के समान है। जिस-जिस सीढ़ी पर हम चढ़ते जाते हैं, उसी की ओर पीठ करते जाते हैं। [३] जिनको अपनी शक्ति पर अविश्वास है, वे बहुधा उन कामों को भी करने से रह जाते हैं, जिनको वे अच्छी तरह कर सकते हैं। [४] हर-एक मनुष्य का अन्त देखकर उसके सदाचार का पता लगाना चाहिये। [५] हे नींद! तू टूटी खाट, धुएँ के घर और बुरे वस्त्र में उत्तमता से जाती है; परन्तु सुगन्ध-युक्त कमरे, बहुमूल्य बिस्तरे और सुरीले राग के मध्य क्यों नहीं आती? दरिद्र आदमियों के मैले-कुचैले कपड़े तुझे इतने अच्छे लगते हैं; परन्तु राजाओं के महल तुझे नहीं रुचते!

['रवीन्द्रनाथ']

[१] सभ्यता किधर से आती है? जिधर को रुपया जाता है। [२] अपराध मनुष्य के लिये जितना ही सत्यानाशी है, जेलखाना उससे कहीं अधिक सत्यानाशी है। [३] लक्ष्मी चली जाने पर भी अपना बोझ थोड़ा-बहुत छोड़ जाती है। उस समय उपाय नहीं रहता, मगर अपाय रह जाता है। आश्रय न रहने पर भी आश्रित नहीं छोड़ते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तितली

लेखक

जयशंकर 'प्रसाद'

(८)

इन्द्रदेव की कचहरी में आज कुछ असाधारण उत्तेजना थी। चिकों के भीतर स्त्रियों का समूह, बाहर पास-पड़ोस के देहातियों का जमाव था। शैला भी अपनी कुर्सी पर अलग बैठी थी।

बनजरियावाले बाबाजी अपनी कहानी सुनानेवाले थे; क्योंकि गोभी के लिये उसमें खेत बन गया था। उसी को लेकर तहसीलदार ने इन्द्रदेव को समझाया कि बनजरिया में बोने-जोतने का खेत है। उसपर एकरेज—या और भी जो कुछ कानून के वैध उपायों से देन लगाया जा सकता हो—लगना ही चाहिये। और, इस बाबा को तो यहाँ से हटाना ही होगा; क्योंकि गाँव के लोग इससे तंग आ गये हैं। यह समाजी है, लड़कों को न जाने क्या-क्या सिखाता है—ऊँची जाति के लड़के हल चलाने लगे हैं! नीचों को बराबर कलकत्ता-बम्बई कमाने जाने के लिये उकसाया करता है। इसके कारण लोगों को हलवाहों और मजूरों का मिलना असम्भव हो गया है। तिसपर भी यह बनजरिया देवनन्दन के नाम की है। वह मर गया, अब लावारिसी कानून के अनुसार यह ज़मींदार की है—इत्यादि।

इन्द्रदेव ने सब सुनकर कहा कि बुड्ढे की बात भी सुन लेनी चाहिये। उससे कह भी दिया गया है। उसको बुलवाया जाय।

आज इसीलिये रामनाथ आये हैं, और साथ में लिवाते आये हैं तितली को। तितली इस जन-समूह में संकुचित-सी, एक खंभे की आड़ में आधी छिपी हुई, बैठी है।

इन्द्रदेव का संकेत पाकर रामनाथ ने कहना आरम्भ किया—

"बार्टली साहब की नील-कोठी टूट चुकी थी। नील का काम बन्द हो चला था। जैसा आज भी दिखाई देता है, वन भी उस गुदाम के हौज और पक्की नालियाँ अपना खाली मुँह खोले पड़ी रहती थीं, जिसमें नीम की छाया में गायें बैठकर विश्राम लेती थीं। पर बार्टली साहब को वह ऊँचे टीले पर का बँगला, जिसके नीचे बड़ा-सा ताल था, बहुत ही पसन्द था। नील-गुदाम बन्द हो जाने पर भी उनका बहुत-सा रुपया दादनी में फँसा था।

किसानों को नील बोना तो बन्द कर देना पड़ा; पर रुपया देना ही पड़ता। अनाज की खेती से उतना रुपया कहाँ निकलता, इसलिये आसपास के किसानों में बड़ी हलचल मची थी। बार्टली के किसान-असामियों में एक देवनन्दन भी थे। मैं उनका आश्रित ब्राह्मण था। मुझे अन्न मिलता था और मैं काशी में जाकर पढ़ता था। काशी की उन दिनों की पंडित-मंडली में स्वामी दयानन्द के आ जाने से हलचल मची हुई थी। दुर्गाकुंड के उस शास्त्रार्थ में मैं भी अपने गुरुजी के साथ दर्शक-रूप से था, जिसमें स्वामीजी के साथ बनारसी चाल चली गई थी। ताली तो मैंने भी पीट दी थी। मैं क्वीन्स-कालेज के एंग्लो संस्कृत-विभाग में पढ़ता था। मुझे वह नाटक अच्छा न लगा। उस निर्भीक संन्यासी की ओर मेरा मन आकर्षित हो गया। वहाँ से लौटकर गुरुजी से मुझसे कहा-सुनी हो गई, और जब मैं स्वामीजी का पक्ष-समर्थन करने लगा, तो गुरुजी ने मुझे नास्तिक कहकर फटकारा।

देवनन्दन का पत्र भी मुझे मिल चुका था कि कई कारणों से अनाज देना वह बन्द करते हैं। मैं अपनी गठरी पीठ पर लादे हुए झुँझलाहट से भरा नील-गुदाम के नीचे से अपने गाँव में लौटा जा रहा था। देखा कि देवनन्दन को नील-कोठी का पियादा काले खाँ पकड़े हुए ले जा रहा है। देवनन्दन सिंहपुर के प्रमुख किसान और आप ही लोगों के जाति-बान्धव थे। उनकी यह दशा! रोम-रोम उनके अन्न से पला था। मैं भी उनके साथ बार्टली के सामने जा पहुँचा।

उस समय कुर्सियों पर बैठे हुए बार्टली और उनकी बहन जेन आपस में कुछ बातें कर रहे थे।

जेन ने कहा—भाई! इधर जब से वह चले गये हैं, मेरी चिन्ता बढ़ रही है। न जाने क्यों, मुझे उनपर सन्देह होने लगा है। मैं भी घर जाना चाहती हूँ।

तुम जानते हो कि मैंने स्मिथ का कभी अपमान नहीं किया,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और सच तो यह है कि मैं उसको प्यार करता हूँ। किन्तु क्या करूँ, उसका जैसा उग्र स्वभाव है, वह तो तुम जानती हो। मैं भला अभी काम छोड़कर कैसे चलूँगा!

जेन ने कहा—जब यह काम ही बन्द हो गया, तब यहाँ रहने का क्या काम है। देखती हूँ कि जो रुपया तुम्हारा निकल भी आता है, उसे यहाँ जमींदारी में फँसाते जा रहे हो। क्या तुम यहीं बसना चाहते हो?

तब तुम क्या चाहती हो।—बार्टली ने अन्यमनस्क भाव से पूर्व की धीरे-धीरे सूखने वाली झील को देखते हुए कहा।

नील का काम बन्द हो गया, पर अब हम लोगों को रुपये की कमी नहीं। जो कुछ हो, यहाँ से बेच कर इंगलैंड लौट चलें।

इतनी जल्दी! असम्भव, अभी बहुत रुपया बाकी पड़ा है।

मेरा प्रसव-काल समीप है। मैं गाँव के घर में ही जाकर रहना चाहती हूँ। समझा न?

ठहरो, मैं पहले इन लोगों से बात कर लूँ।

देवनन्दन ने सलाम करते हुए कुछ कहना चाहा कि बीच में ही बात काटकर काले खाँ ने कहा—सरकार, बहुत कहने पर यह आया है।

देवनन्दन ने रोष-भरे नेत्रों से काले को देखा।

बार्टली ने कहा—रुपया देते हो कि तुम्हारा दूसरा.........

जेन उठकर जाने लगी थी। बीच ही में देवनन्दन ने उसे हाथ जोड़ते हुए कहा। मेरी स्त्री को लड़का होनेवाला है, और लड़की ..

जेन आगे न सुन सकी। उसने कहा—बार्टली, जाने दो उसे, उसकी स्त्री को ....

तुम चलो चाय के कमरे में, मैं अभी आता हूँ।—कहते हुए बार्टली ने जेन को रूखी आँखों से देखा। दुखी होकर जेन चली गई।

देवनन्दन की कोई बिनती नहीं सुनी गई! बार्टली ने कहा—काले खाँ, इसको यहीं कोठरी में बन्द करो और तीन घंटे में रुपये न मिलें, तो बीस हंटर लगाकर तब मुझसे कहना।

बार्टली की ठोकर से जब देवनन्दन पृथ्वी चूमने लगे, तब वह चाय पीने चला गया।

मेरे हृदय में वह देवनन्दन का अपमान घाव कर गया।

मैं अब तक तो केवल वह दृश्य देख रहा था। किन्तु क्षण-भर में मैंने अपना कर्तव्य निर्धारित कर लिया। मैंने कहा—काले खाँ, भूलना मत, मेरा नाम है रामनाथ। आज तुमने यदि देवनन्दन का अपमान किया, तो मैं तुम्हें जीता न छोड़ूँगा। मैं रुपये ले आता हूँ।

क्रोध और आवेश में कहने को तो मैं यह कहकर गाँव में चला आया; पर रुपये कहाँ से आते। मैं उन्हीं के पट्टीदार के पास पहुँचा; पर सूद का मोल-भाव होने लगा। उनकी स्थावर सम्पत्ति पर्याप्त न थी। मैं जल उठा। मनुष्य, मनुष्य के दुख-सुख से, सौदा करने लगता है और उसका माप-दंड बन जाता है रुपया। मैंने कहा—अच्छा, धामपुर में मेरी कृष्णार्पण माफी है, उसे भी मैं रेहन कर दूँगा।

तहसीलदार साहब ने कहा है कि इस बनजरिया के नंबर पर पहले देवनन्दन का नाम था, सो ठीक है। मैंने ही उसी सम्बन्ध में रेहन करके फिर इसी माफी को देवनन्दन के नाम बेंच दिया। अब मेरे मन में गाँव से घोर घृणा हो गई थी। मैं भ्रमण के लिये निकला। गाँव पर मेरे लिये कोई बंधन नहीं रह गया। तीर्थों, नगरों और पहाड़ों में मैं घूमता था और गली, चौमुहानी, कुँओं पर, तालाबों और घाटों के किनारे, मैं व्याख्यान देने लगा। मेरा विषय था हिन्दू-जाति का उद्बोधन। मैं प्रायः उनकी धनलिप्सा, गृह-प्रेम और छोटे-से-छोटे हिन्दू गृहस्थ की राजमनोवृत्ति की निन्दा किया करता! आप देखते नहीं कि हिन्दू की छोटी-सी गृहस्थी में चक्की-जाँता से लेकर कूड़ा-करकट तक जुटा रखने की चाल है, और उनपर प्राण से बढ़कर मोह! दस-पाँच गहने, दो-चार बरतन, उनको बीसों बार रेहन करना और घर में कलह करना, यही हिन्दू-घरों में आये दिन के दृश्य हैं। जीवन का जैसे कोई लक्ष्य नहीं! पददलित रहते-रहते उनकी सामूहिक चेतना जैसे नष्ट हो गई है। अन्य जाति के लोग मिट्टी या चीनी के बरतन में उत्तम स्निग्ध भोजन करते हैं। हिन्दू चाँदी की थाली में भी सत्तू घोलकर पीता है। मेरी कटुता उत्तेजित हो जाती, तो और भी इसी तरह की बातें बकता। कभी तो पैसे मिलते और कहीं-कहीं धक्के भी। पर मेरे लिये दूसरा काम नहीं। इसी में मस्त मैं कितने बरसों तक घूमता रहा। नर्मदा के तट से घूमकर मैं उज्जैन जा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा था। अकस्मात् बिना किसी स्टेशन के गाड़ी खड़ी हो गई।

मैंने पूछा—क्या है ?

साथ के यात्री लोग भी चकित थे।

इतने में रेल के गार्ड ने कहा—भुखमरों की भीड़ रेलवे-लाइन पर खड़ी है।

मैं गाड़ी से उतर कर वह भीषण दृश्य देखने लगा।

संसार का नग्न चित्र, जिसमें पीड़ा का, दुःख का, ताँडव नृत्य था। बिना वस्त्र के सैकड़ों नर-कंकाल, इंजिन के सामने लाइन पर खड़े-पड़े और गिरे हुए, मृत्यु की आशा में टक लगाये थे। मैं रो उठा। मेरे हृदय में अभाव की भीषणता, जो चिनगारी के रूप में थी, अब ज्वाला-सी धधकने लगी।

चतुर गार्ड ने झोली में चन्दा के पैसे एकत्र करके कँगलों में बाँट दिया और वे समीप के बाजार की ओर दौड़ पड़े। हाँ, दौड़े। उन अभागों को रोटी की आशा ने बल दिया। वे गिरते-पड़ते चले। मैं भी चला! उनके पीछे-पीछे यह देखता जाता था कि पेड़ों में पत्तियाँ नहीं बची हैं। टिड्डियाँ भी इस तरह उन्हें नहीं खा सकतीं; वे तो नसें छोड़ देती हैं।

मैंने देखा कि वे मरभुखे बाजार में घुसे; किन्तु मैं नहीं जा सका। बाजार के बाहर ही एक वृक्ष की बिना पत्तोंवाली डालों के नीचे एक व्यक्ति पड़ा हुआ अपना हाथ मुँह तक ले जाता है और उसे चाटकर हटा लेता है! पास ही एक छोटा-सा जीव और भी निस्तब्ध पड़ा है। मैं दौड़ कर अपने लोटे में दूध मोल ले आया। उसके गले में धीरे-धीरे टपकाने लगा। वह आँख खोलकर पास ही पड़े हुए शिशु को देखने लगा। शिशु की ओर मेरा ध्यान नहीं गया था। मैं उसे दूध पिलाने लगा।"

कहकर बुड्ढा रामनाथ एक बार ठहर गया। उसने चारों ओर देखकर अपनी आँखों को उस खंभे की आड़ में ठहरा दिया, जहाँ तितली बैठी थी।

शैला रूमाल से अपनी आँखें पोंछ रही थी, और सुननेवाली जनता चुपचाप स्तब्ध थी।

बुड्ढे ने फिर कहना आरम्भ किया—आप लोगों को कष्ट होता है। दुख और दर्द की कहानी सुनाकर मैंने अवश्य आप लोगों का समय नष्ट किया। किन्तु करता क्या! अच्छा, जाने दीजिये, मैं अब बहुत संक्षेप में कहता हूँ—

"हाँ, तो वह व्यक्ति था देवनन्दन, जिसकी समस्त भूसम्पत्ति नीलाम हो गई। धूर-धूर बिक गई। दो संतानों का शरीरान्त हो गया। तब उस बची हुई कन्या को लेकर स्त्री के साथ वह परदेस में भीख माँगने चला था। उस अभागे को नहीं मालूम था कि वह किधर जा रहा था। उस समय अकाल था। कौन भीख देता? जिनके पास रुपया था, वह अपनी सोचते थे।

अस्तु, कुलीन वंश की सुकुमारी कुलबधू अधिक कष्ट न सह सकी, वह मर गई। तब देवनन्दन इस शिशु को लेकर घूमने लगा। वह भी मुमूर्षु हो रहा था।

उसने बड़े कष्ट से मुझे पहचान कर केवल इतना कहा—रामनाथ, मैंने सब कुछ बेच दिया; पर तुम्हारा धामपुर का खेत नहीं बेचा है, और यह तितली अब तुम्हारी शरण है। मैं तो चला।

हाँ, वह चल बसा। मैंने तितली को गोद में उठा लिया।"

आगे बुड्ढा कुछ न कह सका; क्योंकि तितली सचमुच चीत्कार करती हुई मूर्च्छित हो गई थी और शैला उसके पास पहुँच कर उसे प्रकृतिस्थ करने में लग गई थी।

इन्द्रदेव आरामकुर्सी पर लेट गये थे, और सुननेवाले धीरे-धीरे खिसकने लगे।

हृदय

हृदय, सिहर कर तनिक दिखा दो
कहाँ तुम्हारे पीड़ा होती
कसक भरी वह चाह किसी की
तुम्हें शूल-सी कहाँ चुभोती
जगती ज्वालामुखी कहाँ पर
कहाँ प्रेम का स्रोत उमगता
कितने गहरे, कहाँ डूब कर
भर लाते आँखों में मोती

—मदनमोहन मिहिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

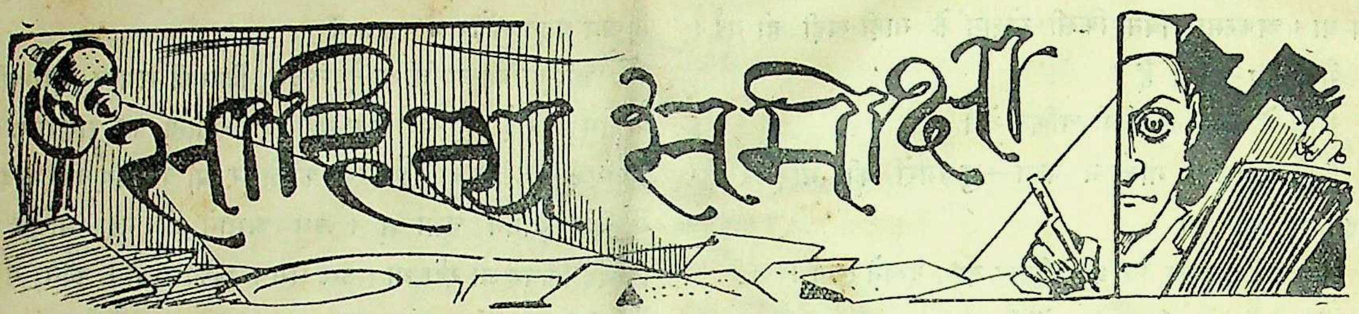

तीन नई पुस्तकें

पं० छबिनाथ पाण्डेय, बी० ए०, एल्-एल० बी०

[१] "क्रान्तिकारी कार्ल मार्क्स"—लेखक, लाला हरदयाल, एम० ए०। अनुवादक, श्री व्रजमोहन वर्मा (सहकारी सम्पादक, 'विशाल-भारत')। प्र०, विशालभारत-पुस्तकालय, १२०—२ अपर सरकुलर रोड, कलकत्ता। पृ० ७०, मूल्य ॥), छपाई और कागज सुन्दर। इस पुस्तक में साम्यवाद के विश्वव्यापी सिद्धान्तों के जनक महात्मा कार्लमार्क्स की जीवनी और उनके सिद्धान्तों तथा अनुयायियों के इतिहास का संक्षिप्त विवरण है। 'साम्यवाद' एक प्राचीन शब्द है। अरस्तू के समय से ही इसकी चर्चा होती आ रही है; पर उन्नीसवीं सदी के पहले इसको व्यापक रूप नहीं मिल सका। मार्क्स के पहले रूसो, स्पेंसर, केंट आदि ने भी इस सिद्धान्त के प्रचार का प्रयास किया; पर इन लोगों को व्यावहारिक सफलता बहुत कम मिल सकी। इसका प्रधान कारण यही था कि मार्क्स के पहले जितने साम्यवादी हुए, सभी समझते थे कि साम्यवाद एक प्रकार का वर-दान है, जो पढ़े-लिखे सुसंस्कृत व्यक्तियों द्वारा अपढ़ मज़दूरों को प्राप्त होगा। परन्तु मार्क्स ने यह सिद्धान्त स्थापित किया कि मजदूरों का उद्धार स्वयं उन्हीं के द्वारा होगा। अतः मार्क्स ने उनके अन्दर निहित शक्ति का उन्हें विश्वास दिलाया। यह अन्तर्दृष्टि केवल उन्हीं महापुरुषों को प्राप्त होती है, जो अपने सिद्धान्तों और आदर्शों के निमित्त भीषण क्लेश सहने के लिये सदा तत्पर रहते हैं। अपने जीवन में मार्क्स को जो दुःख झेलने पड़े थे और जिन भयावनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था, उनकी स्मृति मात्र से ही हृदय काँप उठता है और श्रद्धा तथा भक्ति से उस महात्मा के चरणों में सिर झुक जाता है। मार्क्स की कठोर विपत्तियों की झलक उसकी प्रियतमा पत्नी के पत्रों में मिलती है। मार्क्स धनी का लड़का था; पर अपने इन विचारों और सिद्धान्तों के लिये उसे दर-दर मारा-मारा फिरना पड़ा। किसी भी राष्ट्र ने उसे चैन से रहने नहीं दिया। भोजन और वस्त्र के लिये भी उसे असीम कष्ट सहने पड़े। अन्न और वस्त्र के अभाव में उसके अबोध बच्चे मर गये; पर वह अपने सिद्धान्त पर अटल रहा। पैसे के लोभ में पड़कर वह कभी अपने सिद्धान्त से तिल भर नहीं डिगा—यद्यपि 'बिस्मार्क' तक ने उसे प्रलोभनों के जाल में फँसाने का प्रयत्न किया, तथापि अपने जीवन की अन्तिम घड़ियों तक वह अपने सिद्धान्तों का प्रचार करता रहा। उसीका फल है कि आज वह इस संसार में नहीं है, तो भी उसके सिद्धान्तों की विजय-दुन्दुभी निराश व्यक्तियों के प्राणों में भी आशा की ज्योति जगा रही है। और, इन सब बातों को लाला हरदयाल ने इस पुस्तक में बड़ी सरलता एवं उत्तमता के साथ अंकित करने का सफल प्रयत्न किया है। साधारण पढ़ा-लिखा आदमी भी, इस पुस्तक द्वारा, ऐसे गहन विषय को भी, बड़ी सुगमता से समझ सकता है। एक तो साम्यवाद यों ही बड़ा दुरूह विषय समझा जाता है, दूसरे—मार्क्स के सिद्धान्त तो और भी जटिल माने जाते हैं। किन्तु लालाजी ने मार्क्स के जीवन और सिद्धान्तों के रहस्य को इतनी स्पष्टता से समझाया है कि साधारण व्यक्ति भी उसे सहज ही हृदयंगम कर सकता है। यही इस पुस्तक की विशेषता है। नहीं तो इस विषय की एक पुस्तक "भारती पबलिशर्स लिमिटेड, पटना" से भी निकली है, जिसे आद्यन्त पढ़कर भी हम कुछ समझ न सके—हमें बड़ी निराशा हुई; हमारे हृदय में धारणा उत्पन्न हो गई थी कि अभी हिन्दी में ऐसे गहन विषय को बोधगम्य बनानेवाले लेखक कुछ साल बाद पैदा होंगे, जो साम्यवाद के मूल सिद्धान्तों को आसानी से साधारण पढ़ी-लिखी जनता को समझा सकेंगे। परन्तु इस पुस्तक को पढ़कर बड़ा ही सन्तोष हुआ। साम्यवाद और मार्क्स के सिद्धान्तों को जो हृदयंगम करना चाहते हों, उनके लिये इससे सहज पुस्तक हिन्दी में दूसरी नहीं है। मार्क्स के बाद के कम्युनिस्टों का संक्षिप्त इतिहास देकर पुस्तक की उपयोगिता और भी बढ़ा दी गई है। अनुवाद सुन्दर हुआ है। वर्माजी ने लालाजी को भली भाँति समझा है, और जो समझा है सो समझाया भी खूब है। वर्तमान युग के दलदल से निकलने के लिये इन सिद्धान्तों के अपनाने की बड़ी आवश्यकता है, और इन्हें समझने के लिये यही पुस्तक सबसे अधिक लाभदायक होगी।

[२] "यौवन, सौन्दर्य्य और प्रेम"—लेखक, ठाकुर श्रीनाथसिंह। प्रकाशक, साहित्य-मन्दिर, दारागंज, प्रयाग। पृष्ठ-संख्या २७१, मूल्य १), सुन्दर छपाई, पुस्तक का रूप नेत्ररंजक। लेखक महाशय अध्ययनशील और मननशील जान पड़ते हैं। आपने अनेक अँगरेजी पत्र-पत्रिकाओं के विविध लेखों के आधार पर यह इतनी अच्छी पुस्तक तैयार कर डाली। इसमें आपने यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि यौवन, सौन्दर्य और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम का कैसा अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है—वे किस प्रकार स्थायी बने रह सकते हैं—हम किन कारणों से उन्हें नष्ट कर देते हैं और किन उपायों से उन्हें कायम रख सकते हैं। पुस्तक बड़ी खोज से और विचार-पूर्वक लिखी गई है। लिखने का ढंग भी मनोहर है। जैसा इसका नाम है, वैसा ही इसमें आकर्षण भी है। किन्तु एक बात खटकती है। जब ठाकुर साहब लिखने ही बैठे, तो अच्छी तरह लिखते। जैसा सुन्दर और उपयोगी विषय चुना, वैसा खुलकर लिखा नहीं; बानगी दिखाकर छोड़ दिया। जितने अच्छे ढंग से आपने पुस्तक लिखी है, उससे जान पड़ता है कि इस विषय में आपकी पूरी दिलचस्पी है। किन्तु खेद है कि पाठक को आपके इतने ही लिखने से सन्तोष नहीं प्राप्त होता। जी चाहता है, यही लेखक इसी विषय पर कम-से-कम इतना और लिखता, तो बड़ा आनन्द आता। पुस्तक पढ़कर जिज्ञासा-पिपासा बनी रह जाती है, और इसी को हम यहाँ लेखक की सफलता मानते हैं। पाठक के मन में इस महत्त्वपूर्ण विषय पर अधिकाधिक पढ़ने की इच्छा उत्पन्न कर देना ही लेखक की विशेषता है। यदि भावी संस्करण में लेखक ने इसके आकार को द्विगुणित न किया, तो उन्हें कोसने के सिवा और कोई चारा न रह जायगा। वर्त्तमान युग के उन लोगों के लिये यह पुस्तक बड़े काम की है, जो विवाह को लालसाओं की तृप्ति का एक साधन-मात्र समझते हैं—जो अपनी वासना-व्याली को सौन्दर्य का दूध पिलाकर अधिक विषैली बनाते हैं—जिनके प्रेम का सर्वस्व सौन्दर्य में ही निहित है और जो उसी में ईश्वर का भी अस्तित्व मानते हैं। किन्तु, जो पुरानी लकीर के फकीर हैं, जो अठारहवीं सदी के सनातनी हैं, वे इस पुस्तक को देखकर अवश्य ही नाक-भौं सिकोड़ेंगे—बिना लगाम के ऊँट की तरह बलबला भी उठेंगे—कहेंगे, यह सब आज-कल के नई रोशनी वाले अँगरेज़ीदाँ बाबुओं के प्रलाप हैं! पर, सच बात तो यह है कि हमारा समाज यदि इस पुस्तक की बातों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने का कष्ट करे, तो उसे स्पष्ट विदित हो जायगा कि वर्त्तमान युग में इन बातों की कितनी जरूरत है—समाज को वस्तुतः सुखी बनाने के लिये ये बातें कैसी हितकारिणी हैं—परिवारों में पति-पत्नी को सुखी रखने के लिये इन बातों की कितनी उपयोगिता है। हम तो कहते हैं कि यद्यपि पुस्तक में इस विषय पर विस्तारपूर्वक विचार नहीं किया गया है—अभी कई आवश्यक बातें अच्छी तरह प्रकाश में नहीं आई हैं, तथापि हम यह कहेंगे कि इसमें उन नुस्खों की कमी नहीं है, जिनसे समाज में प्रेम-रस की वृद्धि हो सकती है—सामाजिक शृंखला सुदृढ़ बन सकती है—गृह में शान्ति और सुव्यवस्था की स्थापना हो सकती है। हमारा निजी विचार यही है कि आधुनिक समाज यदि लेखक के इन विचारों का सदुपयोग करे, तो बहुत-सी सामाजिक विपत्तियाँ आज टल जायँ—बहुत-से पति सुखी हो जायँ—बहुत-सी स्त्रियाँ मानसिक वेदना का शिकार होने से बच जायँ—सामाजिक कोढ़ दूर ही जाय। हम अपने उपर्युक्त उपालम्भ के साथ लेखक का सहर्ष स्वागत करते हैं और हिन्दी-भाषाभिज्ञ युवक-युवतियों से अनुरोध करते हैं कि वे इसे एक बार तो अवश्य ही पढ़ें; बल्कि वे सज्जन भी इसे पढ़ने से न चूकें, जो वृद्धावस्था में भी युवक, रूपवान और सहृदय बने रहने के अभिलाषी हैं। हाँ, पुस्तक की भाषा परिमार्जित और सरस है—केवल कुछ स्थलों में नीरसता का दोष है।

[३] "त्यागमयी"—ले०, पं० भगवतीप्रसाद वाजपेयी। प्र०, उपर्युक्त 'मन्दिर'। पृ०, १२०; मूल्य एक रुपया कुछ अधिक प्रतीत होता है। जिल्द और छपाई सुन्दर है। बहुत दिनों की बात है, किसी मासिक पत्र में मैंने एक गल्प पढ़ी थी, जिसकी घटना इस सामाजिक उपन्यास की घटना से मिलती-जुलती है। नायक और नायिका के नाम तो ठीक यही थे। डूबती हुई युवती को बचाने का प्रसंग था। बस, इस उपन्यास को पढ़कर मुझे यही याद पड़ा कि लेखक ने सम्भवतः उसी कथानक को विकसित किया है। उपन्यास सुन्दर है। मानोभावों का घात-प्रतिघात बड़ी सहृदयता और सुन्दरता से निबाहा गया है। चरित्र-चित्रण में लेखक को अच्छी सफलता मिली है। पर दो-तीन बातों की कमी है। एक तो घटनावली को लेखक ने पूर्ण रूप से विकसित नहीं होने दिया है। कहीं-कहीं उसे इतना अधूरा छोड़ दिया है और पट-परिवर्तन इतनी शीघ्रता से होने दिया है कि उसके आदि-अन्त का कहीं पता नहीं चलता। जैसे—ललिता का प्रारम्भिक जीवन, उसका अचानक भागना, बंगाली की हत्या। स्थान-स्थान पर लेखक ने कितने ही ऐसे मनोभावों और हृदयोद्गारों को प्रकट किया है, जिनकी अभिव्यक्ति कहीं चरित्रों में नहीं मिलती और उनकी पुष्टि करनेवाले तर्क भी नहीं दिये गये हैं। जैसे—ललिता द्वारा उसके अपने ही मनोविकारों का समर्थन। पृष्ठ ३७ में 'विजय' का अचानक यह कहना कि "कुछ सुना, अब तो यही इच्छा होती है कि रोज़ यहाँ आया करूँ।" पृष्ठ ६७ में—"भारतीय साहित्य में भी नारी-जीवन की तेजस्विता को ऐसा दबाकर रक्खा गया है कि वह एकांगी हो गया है।......परन्तु वास्तव में हत्याएँ और षड्यंत्र के जाल में पुरुष उतने कुशल हैं ही नहीं, जितनी नारी हो सकती है।" और पुस्तक की भाषा यद्यपि अच्छी है, तथापि साहित्य-क्षेत्र में लेखक की यथोचित प्रतिष्ठा का ख़याल कर हम भाषा की विशेष प्रशंसा नहीं कर सकते—इसका स्वयं हमें खेद है। वाजपेयीजी-जैसे कुशल कहानी-लेखक से हम ख़ासी मुहावरेदार भाषा की आशा करते हैं। कारकों के प्रयोग पर उचित ध्यान नहीं दिया गया। कहीं-कहीं प्रेस के भूतों ने भी ग़बन किया है। एक-दो नमूने काफ़ी होंगे—पृ० २४, मैं तो अपने-आपसे जानती हूँ। पृ० ११८—आँसुओं के बूँद कुलबुला रहे थे। अन्त में यह भी कह देना आवश्यक है कि इस पुस्तक के प्रथम संस्करण का नाम 'मुस्कान' था, जिसे इस द्वितीय संस्करण में बदलने की कोई आवश्यकता नहीं थी; फिर भी 'त्यागमयी' नाम अनुपयुक्त नहीं है।

सूचना—अन्य प्राप्त पुस्तकों की समालोचना क्रमशः आगामी अंकों में प्रकाशित होगी।—सं०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वाध्याय-सामग्री

भिन्न भाषाओं के पत्रों में पढ़ने योग्य लेख –

[१] भारतीय कला का दृष्टिकोण (Standpoint of Indian Art), बंगाल की कला, महाराज छत्रसाल और महारानी कमलावती (काशीप्रसाद जायसवाल), स्वीडन में विद्यार्थी-महोत्सव, फ़ारस और भारत का सांस्कृतिक सम्बन्ध (Persia and India), मूर्तिपूजा (Image worship), सर एक़बाल की देशभक्तिपूर्ण कविताएँ, डाक्टर जे० टी० सण्डरलैण्ड की ९० वीं जयन्ती (कविता), नवीन फ़ारस (Modern Persia)—**'माडर्न रिव्यू'**, मई । [२] जलालउद्दीन रूमी की ५१ आध्यात्मिक कहानियाँ (A Story-Book of Spiritual Lore), पत्रकार-कला और साहित्य (Journalism and Literature)—**'इंडियन रिव्यू'**, मई । [३] साहित्य-सृष्टि (विधुशेखर भट्टाचार्य), वर्त्तमान बँगला-नाटकों के साथ संस्कृत-नाटकों का सम्बन्ध, रवीन्द्रनाथ और वैष्णव कविता, 'पद्मावत' काव्य और पद्मिनी की अनैतिहासिकता, मातृ-ऋण (कहानी, सीतादेवी), बंगाल की रस-कला-सम्पत्ति*, शिल्पी श्रीयुक्त यामिनीरंजन राय की प्रदर्शनी (सचित्र)—**'प्रवासी'**, वैशाख। [४] आधुनिक काव्य-लोक, मंचूरिया (सचित्र), बँगला-भाषा में संकेत-लिपि, हिन्दी-भाषा और कवि-समादर (सूर्यप्रसन्न वाजपेयी चौधुरी), छाया की माया (सिनेमा-सम्बन्धी, सचित्र)—**'भारतवर्ष'**, वैशाख । [५] महामहोपाध्याय महाकवि मुरारिदान, पाश्चात्य और हिन्दू-समाज में नारी का स्थान, धर्म और विज्ञान, नारी और पुरुष (कहानी), स्वामी विवेकानन्द, जीवन और साहित्य, चीनियों का एक युद्ध-संगीत (कविता), मंचूरिया (सचित्र)—मासिक **'वसुमती'**, चैत्र ।

हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओं में पढ़ने योग्य लेख—

[१] साहित्यिक आलोचना (किशोरीदास वाजपेयी), चमत्कार (कहानी, प्रेमचन्द), भमरसेन का मठ, दूरबीन का इतिहास, कबीर का काव्य (रामावतार शर्मा, एम० ए०), स्वदेशी घड़ियों के आविष्कारक जोशीजी (सचित्र, गोपीवल्लभ उपाध्याय), 'उद्धवशतक' (आलोचना, भगीरथप्रसाद दीक्षित), पुराणों के सम्बन्ध में, वार्त्तालाप की आत्मकथा—**'माधुरी'**, चैत्र । [२] श्रीरामचन्द्र (मिश्रबन्धु), आकस्मिक चोट और उसका उपचार (सचित्र, चतुरसेन शास्त्री), प्राचीन भारत का विस्तार (भगीरथप्रसाद दीक्षित), मानव-जीवन के विकास में पशु-पालन का स्थान (रमाशंकर मिश्र, एम० ए०), साहित्य का दिवाला (हनूमान शर्मा), विद्यार्थी और साहित्यसेवा, व्यक्तित्व और कला—**'सुधा'**, वैशाख । [३] प्रोफ़ेसर साहब (श्रीगोपाल नेवटिया, कहानी), लालसा (कहानी, राजेश्वरप्रसाद सिंह), सम्पादकीय सदाचार (गयाप्रसाद शास्त्री), व्यक्तिगत भ्रष्ट आक्षेप (इलाचन्द्र जोशी)—**'हंस'**, वैशाख । [४] वाल्मीकीय रामायण की कुछ सूक्तियाँ, महात्मा एकनाथजी के कुछ चरित्र, वेद और पुराण, प्रेमोन्माद—**'कल्याण'**, वैशाख । [५] पंडितराज जगन्नाथ (अक्षयवट मिश्र), बिलोचिस्तान का भ्रमण, भारतीय युद्धविद्या, संगीत और स्वास्थ्य, सूर और तुलसी के लक्ष्य, पं० पद्मसिंह शर्मा (किशोरीदास वाजपेयी), वायुयान के अनुभव ('गंगा'-सम्पादक गौरीनाथ झा), विचित्र हँसी—**'गंगा'**, वैशाख । [६] महाकवि कालिदास का नैतिक सन्देश, भारत के प्राचीन खेतिहर, नर्मदा-नदी का महत्त्व (दयाशंकर दुबे), निबन्ध का स्वरूप, बातों की चतुराई—**'वाणी'**, फ़रवरी-मार्च । [७] खेती की उपज बढ़ाने के उपाय, जानवरों का मित्र—**'सेवा'**, मई । [८] पं० पद्मसिंहजी शर्मा ('चातक'), धर्म और कला (शंकरदेव विद्यालंकार)—**'आर्यमित्र'**, २८ अप्रैल । [९] हिन्दी-भाषा की प्राचीनता (अक्षयवट मिश्र), पं० शिवनाथ शास्त्री और सत्य (महावीरप्रसाद गहमरी)—**'भारत'** ८ मई । [१०] प्राचीन भारत का राष्ट्रतंत्र, काशी पापनाशी (हरिहरनाथ, बी० ए०)—**'दै० आज'**, १४, १६ मई । [११] यू० पी० के पत्र-पत्रिकाएँ, दिल्ली-विजेता जाट-नरेश, २५५ वर्ष का बूढ़ा, अमेरिका में लकड़ी का रुपया—**'दै० अर्जुन'** १३,१४,१५ मई । [१२] लोक-गीत—**'जयाजी-प्रताप'**, २८ अप्रैल । [१३] राधारानी या डिवाइन लेडी, दही के अद्भुत गुण—**'श्रीवेंकटेश्वर-समाचार'**, ६, १३ मई ।

* यही सचित्र लेख 'The Art of Bengal के नाम से मई के 'माडर्न रिव्यू' में प्रकाशित हुआ है ।—सं०

समाचार-संकलन

[——गत २१ अप्रैल को, ७३ वर्ष की आयु में, 'भारत-सुदशा-प्रवर्त्तक' (फ़रुख़ाबाद) के भूतपूर्व सम्पादक पं० गणेशप्रसादजी शर्मा का देहान्त हो गया; आपने वैदिक सिद्धान्त-सम्बन्धी बीसियों पुस्तकें लिखी थीं और ऋषि दयानन्द के दर्शन और वार्त्तालाप से बहुत लाभ उठाया था । ——गत वैशाख-शुक्ल अक्षय तृतीया (रविवार) को प्रातःकाल पं० अम्बिकाप्रसादजी वाजपेयी के सभापतित्व में, साहित्य-सम्मेलन के निश्चयानुसार, हिन्दी-रंगमंच का उद्घाटनोत्सव, कलकत्ते में सम्पन्न हुआ ।——हिन्दी-नाट्यपरिषद (लाहौर) ने इस वर्ष मौलिक तथा सुरुचिपूर्ण नाटक लिखनेवालों को क्रमशः २५०), २००) और १५०) के तीन पुरस्कार देना निश्चित किया है; आगामी २४ जुलाई तक नाटक की कापी परिषद के मंत्री कुलभूषणजी के पास पहुँच जानी चाहिये; पुरस्कृत नाटकों को परिषद ही प्रकाशित करेगी ।—दैनिक 'जीवन' (कलकत्ता) और दैनिक 'अर्जुन' (दिल्ली) तथा साप्ताहिक 'राजस्थान-सन्देश' (अजमेर) से दो-दो हज़ार की ज़मानत माँगी गई है ।——'पंजाब-केसरी' (लाहौर) के सम्पादक पं० अमरनाथजी को आठ महीने की क़ैद और २५) जुर्माने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की सज़ा दी गई है।——गत ६ मई को बड़ी धूमधाम से 'श्रीवेंकटेश्वर-समाचार' (बम्बई) का नूतन वर्ष मनाया गया।——जबलपुर के दैनिक 'लोकमत' का सचित्र साप्ताहिक संस्करण निकालने की तैयारी हो रही है; उसमें 'भविष्य' के आकार के ५० पृष्ठ होंगे और वार्षिक मूल्य ६॥) होगा।——गत ८ मई को मिरजापुर के लाजपत-स्मारक-साहित्य-सदन का वार्षिकोत्सव कविवर हरिऔधजी के सभापतित्व में मनाया गया।—गत १२ मई को काशी में अध्यापक रामदास गौड़ एम० ए० की द्वितीय पुत्री का शुभ विवाह हुआ।——रायगढ़-निवासी भूतपूर्व 'छत्तीसगढ़'-सम्पादक पं० मनोहरप्रसाद मिश्र की ज्येष्ठा कन्या का विवाह सुपरिचित हिन्दी-कवि पं० मुकुटधर पाण्डेय के ज्येष्ठ पुत्र के साथ गत १६ मई को हो गया।——गंगा-दसहरा (१३ जून) से १॥) वार्षिक मूल्यवाला हास्यरसप्रधान साप्ताहिक "झक्कड़" बनारस-कैण्ट के विश्वभंडार प्रेस से निकलेगा।——नृसिंह-चतुर्दशी (१८ मई) को पुराने हिन्दी-पत्रकार बाबू महावीरप्रसाद गहमरी का सस्ता और मनोरंजक साप्ताहिक पत्र 'वामन' प्रकाशित होनेवाला है, जिसका वार्षिक मूल्य काशी के लिये ।॥,॥ और बाहर के लिये १॥-) होगा।——'हिन्दुस्तान रिव्यू' के सम्पादक श्रीसच्चिदानन्दसिंह बारिस्टर ने पटना-विश्वविद्यालय को १५००) का दान दिया है, जिससे हिन्दी की एम० ए०-परीक्षा में सर्वप्रथम आनेवाले विद्यार्थी को हर साल सुवर्णपदक दिया जायगा, जिसका नाम होगा (दाता की माता के नाम पर) 'श्रीमती रामकिशोरी-पदक'।——झाँसी के 'हिन्द-राजस्थान' का मूल्य मई तक ३) की जगह १॥) ही कर दिया गया है और रंग-रूप में भी परिवर्त्तन किया जा रहा है।——स्वर्गीय विद्यार्थीजी की हत्या के तीनों अभियुक्तों को कानपुर के मजिस्ट्रेट ने प्रत्यक्ष प्रमाण के अभाव में छोड़ दिया है।——'प्रताप'-सम्पादक पं० बालकृष्ण शर्मा (कानपुर) के मुकदमे में गत ता० २ मई को गवाहों के इज़हार हुए और फिर १५ दिनों के लिये मामला स्थगित कर दिया गया है।——गत वर्ष लाहौर-डिवीजन के स्कूलों के इन्सपेक्टर नूर इलाही ने जो हिन्दी-घातक सरकुलर प्रचारित किया था, उसके विरुद्ध हिन्दी-संसार ने इतनी जबरदस्त आवाज़ उठाई कि अब पंजाबी शिक्षा-विभाग ने समस्त स्कूलों में पाँचवीं श्रेणी से पूर्ववत् हिन्दी पढ़ाने का हुक्म जारी कर दिया है।—आगरा-नागरी-प्रचारिणी सभा में सम्मेलन-परीक्षार्थियों और दूसरे विद्याभिलाषियों को पढ़ाने के लिये जो हिन्दी-साहित्य-विद्यालय स्थापित है, उसमें श्रीरामचन्द्रजी श्रीवास्तव वकील बड़े ही मनोयोग-पूर्वक अध्यापन-कार्य करते हैं; इसलिये सभा ने छात्रों को लाभ उठाने की सूचना दी है।——पं० बनारसीदास चतुर्वेदी और पं० हरिशंकर शर्मा कविरत्न तथा पं० श्रीराम शर्मा बी० ए० ने हिन्दी-संसार से अपील की है कि स्व० पं० पद्मसिंहजी शर्मा के विषय में लेख और कविताएँ तथा शर्माजी की चिट्ठियाँ 'विशाल-भारत'-कार्यालय के पते से शीघ्र भेजी जायँ; क्योंकि वे लोग शर्माजी के लेखों और पत्रों तथा संस्मरणों को प्रकाशित करने जा रहे हैं।——संयुक्तप्रान्तीय सरकारी स्वास्थ्य-विभाग ने "ग्रामों में स्वास्थ्य-सम्बन्धी स्वच्छता बढ़ाने की सरल योजना" विषय पर हिन्दी में सर्वोत्तम लेख लिखनेवाले को एक स्वर्ण-पदक देने की घोषणा प्रकाशित की है; लेख की भाषा सरल और शब्दों की संख्या ३००० होनी चाहिये; आगामी १ अगस्त तक लखनऊ के पते से असिस्टेंट डाइरेक्टर अफ़ पबलिक हेल्थ के पास लेख पहुँच जाना चाहिये।——गत मास योरप में शेक्सपीयर की जयन्ती मनाई गई; उनकी जन्मभूमि स्ट्रेटफ़ोर्ड-ऑन-एवन में बड़ा समारोह रहा; 'एवन' नदी के किनारे एक नया थिएटर-घर बना है, जिसका उद्घाटन करने के लिये 'विण्डसर' से वायुयान द्वारा प्रिंस अफ़ वेल्स आये थे और लगभग ७० प्रमुख राष्ट्रों के प्रतिनिधि भी पधारे थे।

द्विवेदी-जयन्ती

[वैशाख-शुक्ल ४, सोमवार, ९ मई]

[१] हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-कार्यालय (प्रयाग) में सायंकाल ६ बजे से प्रयाग के साहित्यिकों की सभा रायबहादुर लाला सीतारामजी अवध-वासी के सभापतित्व में हुई, जिसमें आचार्य द्विवेदीजी की ६८वीं वर्ष-गाँठ का उत्सव मनाया गया। [२] श्रीवीरेन्द्र-केशव-साहित्य-परिषद (ओरछा-राज्य, टीकमगढ़) में, पंडित विन्ध्येश्वरीप्रसाद पांडेय बी० ए०, एल-एल० बी० (दीवान, ओरछा-राज्य) के सभापतित्व में बड़े समारोह से जयंती मनाई गई। द्विवेदीजी के जीवनचरित पर कई अच्छे भाषण हुए और कविताएँ पढ़ी गईं। राजा-बहादुर श्रीदेवेन्द्रसिंहजू देव, श्री एम० एन० जुतशी (प्राइवेट सेक्रेटरी), कप्तान चन्द्रसेनजी ए० डी० सी०, कविभूषण पीताम्बरजी, श्रीजयदेवजी, बख्शी जगतरामजी आनन्द बी० ए०, एल० टी०, साहित्यरत्न पंडित बालकृष्णदेवजी आदि उपस्थित थे। [३] आगरा-नागरी-प्रचारिणी सभा में संध्या के सात बजे से सभा हुई। हिन्दी-प्रेमियों और साहित्य-सेवियों की अच्छी उपस्थिति थी। सभापति थे 'आर्यमित्र'-सम्पादक पंडित हरिशंकरजी शर्मा कविरत्न। श्रीस्वरूपचन्द्रजी जैन विशारद, साहित्यरत्न श्रीरामचन्द्रजी श्रीवास्तव 'चन्द्र' बी० ए० एल-एल० बी०, काशी के पंडित रघुवरदयालजी मिश्र विशारद, पण्डित मंगलदेवजी शर्मा और सभा के मंत्री श्रीमहेन्द्रजी ने द्विवेदीजी की सर्वतोमुखी साहित्य-सेवा की चर्चा की। सभापति महोदय ने द्विवेदीजी के विषय में स्वरचित दो छन्द पढ़कर सुनाये, जिन्हें जनता ने बहुत पसन्द किया। बहुत देर तक साहित्यसेवियों में द्विवेदीजी की चर्चा होती रही। जयन्ती बड़ी शान से मनाई गई। [४] मुजफ्फरपुर (बिहार) की नवयुवक-समिति के पद्य-पाठ-परिषद्-विभाग की ओर से, ७॥ बजे रात्रि में, सैरयागंज की नई धर्म्मशाला में, बड़े समारोह से जयंती मनाई गई। वयोवृद्ध साहित्यिक श्रीचन्द्रशेखरधर मिश्र सभापति थे। उपस्थिति सन्तोषजनक थी। सभापतिजी और बा० लक्ष्मीनारायण जी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

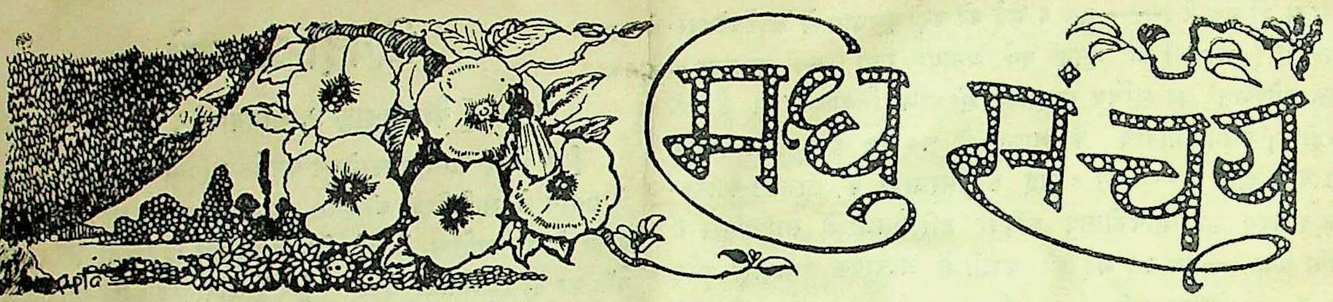

[१] सिंकलेयर लेविस—

साहित्य के "नोबेल प्राइज़" के इतिहास में यह पहला ही मौका था कि एक अमेरिकन को साहित्यिक पुरस्कार मिला। इसके पहले अमेरिका के चार राजनीतिक नेताओं को यह पुरस्कार मिल चुका है। एक अमेरिकन के लिये साहित्यिक पुरस्कार एक नई बात थी। अमेरिका के इस सम्मान से वंचित रहने का कारण यही था कि अमेरिकन लेखकों और विशेषतः उपन्यासकारों की रचनाओं पर योरोपीय साहित्य की स्पष्ट छाया पड़ी हुई थी। उनमें मौलिकता का अभाव था। यहाँ तक कि हेनरी जेम्स और विलियम हावेल सरीखे सुप्रसिद्ध विद्वान भी इस पुरस्कार को न पा सके। आखिर सिंकलेयर लेविस ने नाक रख ली और सन् १९३० में "नोबेल प्राइज़" को जीतकर सिद्ध कर दिया कि अमेरिकन लेखक भी मौलिकता में किसी राष्ट्र से पीछे नहीं। लेविस अभी पचासा के इसी तरफ हैं, और इस प्रकार 'नोबेल प्राइज़' पानेवालों की पल्टन के आप सबसे छोटे भैया हैं। आपने २२ वर्ष की उम्र में येल युनिवर्सिटी से बी० ए० की डिग्री पाई। इसके बाद आपने कुछ दिनों तक संवाद-दाता का काम किया; फिर कई अखबारों और प्रकाशन-भवनों में सम्पादन का भी कार्य किया। अपने सम्पादकीय जीवन में आपने अपना पहला उपन्यास 'आवर मि० रेन' लिखा, जो १९१४ में प्रकाशित हुआ। दूसरे उपन्यास 'ट्रेल अफ दि हाक' पर जनता की रुचि बहुत थोड़ी ही आकर्षित हुई। सन् १९२० में 'मेन स्ट्रीट' उपन्यास प्रकाशित हुआ, तब तो आपकी धूम मच गई। अमेरिकन पाठकों में इसने एक तूफानी चाव पैदा कर दिया। एक समालोचक के शब्दों में "मेन स्ट्रीट वह आइना है, जो हमारे दुर्गुणों को छोटा करके नहीं दिखाता; बल्कि उन्हें ज्यों-का-त्यों प्रतिबिम्बित होने देता है।" मेन स्ट्रीट ने अमेरिका को सोते से जगा-सा दिया। आपकी दूसरी रचना 'बैबिट' ने अमेरिकन पाठक और साहित्यिक जगत् में एक गदर पैदा कर दिया। पुस्तक ताज़ी पकौड़ियों की तरह बिकी। आपकी सर्वोत्तम रचना यही है। 'बैबिट' ने अमेरिकनों में राष्ट्रीयता के भाव जगाने का बड़ा भारी प्रयत्न किया। १९२९ में आपने 'डाड्सवर्थ' को जन्म दिया। इसके दूसरे ही वर्ष 'नोबेल प्राइज़' मिली। तब से आप साहित्य की तरफ से उदासीन-से हैं। आपकी कला का दिव्य हिस्सा आपका व्यंग और विनोद-पूर्ण चित्रण है। यह व्यङ्ग ऐसा चोखा और तीखा होता है कि बिना अपना असर दिखाये नहीं रहता। यही आपकी शैली की विशेषता है। आपको कभी-कभी अमेरिका का 'चार्ल्स-डिकन्स' कहा जाता है। आपमें व्यङ्ग अधिक हैं, तो डिकन्स में विनोद। आपमें अनुसन्धान और व्यंग की एक अच्छी प्रतिभा है और इसलिये आप सदा अमेरिका के गौरव की वस्तु बने रहेंगे।

श्रीरामाज्ञा द्विवेदी, एम० ए०] ['कर्मवीर', ७ मई

[२] स्वर्गीय पुरोहित श्रीरामप्रतापजी—

पुरोहित श्रीरामप्रतापजी के निधन से जयपुर के एक प्रसिद्ध कलाविद् और हिन्दी-साहित्य-सेवी रईस उठ गये। आपका जन्म एक प्रतिष्ठित पारीक-कुल में, सन् १८८६ में, हुआ था, और स्वर्गवास २० मार्च सन् १९३२ को मध्याह्न-काल में। आपके पितामह, जयपुर के महाराजाधिराज स्व० श्रीरामसिंहजी के मुसाहिब (प्राइम मिनिस्टर) थे। आपके पिता श्रीहरिनारायणजी, बी० ए०, विद्याभूषण, हिन्दी-साहित्य में और इतिहास में एक चिरपरिचित व्यक्ति हैं। स्व० पुरोहितजी जयपुर-राज्य के ताज़ीमी सरदार और जयपुर-कौंसिल के होम-मेम्बर थे। फोटोग्राफी सिनेमेटोग्राफ़ी और संगीत के एक बड़े जानकार थे। राजपूताना-फोटो-आर्ट स्टूडियो (स्टेशन रोड, जयपुर) आप ही का निर्माण किया हुआ है। आपने दो-एक उपन्यास भी लिखे थे। 'श्रीकृष्ण-विज्ञान' आपकी अन्तिम रचना है—गीता का सर्वश्रेष्ठ हिन्दी-पद्यानुवाद है—दूसरा संस्करण गीता प्रेस (गोरखपुर) से प्रकाशित हुआ है। आपके उत्तराधिकारी पुरोहित प्रतापनारायणजी 'कविरत्न' हैं—आपका 'नल-नरेश' नामक महाकाव्य शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाला है।

—'सुधा', वैशाख

बी०एल० एवं प० रामदेव शर्मा काव्य-सांख्य-पुराण-तीर्थ के भाषण हुए। श्रीभुवनेश्वर सिंह 'भुवन' ने श्रद्धांजलि का प्रस्ताव और ठाकुर ललितकुमार सिंह 'नटवर' ने उसका समर्थन किया। [५] उज्जैन की हिन्दी-प्रचारिणी सभा में भी रात के आठ बजे श्रीसूर्यनारायण व्यास ज्योतिषाचार्य आदि के उद्योग से जयन्ती मनाई गई। [६] कानपुर की नागरी-प्रचारिणी सभा की ओर से श्रीलक्ष्मणदास-धर्मशाला (लाठी मुहाल) में सायंकाल ७ बजे जयन्ती मनाई गई। [७] काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा में संध्या समय ६ बजे रायसाहब बाबू श्यामसुन्दरदासजी बी० ए० के सभापतित्व में जयन्ती मनाई गई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३] महाराज छत्रसाल—

मध्यकालीन भारत के शूर-सामन्त महाराज छत्रसाल और महारानी कमलावती के सम्बन्ध में श्रीकाशीप्रसाद जायसवाल का जो लेख इस अंक ('माडर्न रिव्यू', मई १९३२) में प्रकाशित हुआ है, उससे पाठकों में कौतूहल उत्पन्न होने की सम्भावना है। सम्भवतः अंगरेजी भाषा में इस वीर नरेश की कोई जीवनी पुस्तक-रूप में नहीं है। हाँ, विलियम इरविन की लिखी और सर यदुनाथ सरकार की सम्पादित की हुई "Later Mughals" नामक इतिहास-पुस्तक के दूसरे खंड में महाराज छत्रसाल के विषय में जिज्ञासु पाठकों को बहुत-सी बातें मिलेंगी। बँगला में भी 'छत्रसाल' पर श्रीगोपेन्द्रलाल राय की लिखी हुई एक अच्छी पुस्तक है। इतिहासज्ञ प्रोफेसर कालिका-रंजन कानूनगो का लिखा हुआ "महाराज छत्रसाल बुन्देला" शीर्षक लेख बँगला की मासिक पत्रिका 'प्रवासी' के कार्तिक (बंगीय संवत् १३३७) वाले अंक में (आज से दो वर्ष पूर्व ?) प्रकाशित हो चुका है।

अँगरेजी से] ['माडर्न रिव्यू', मई

[४] स्वर्गीय प्रभातकुमार मुखोपाध्याय—

बँगला-कथा-साहित्य के 'मोपासाँ' प्रभातकुमार, अपनी अस्सी वर्ष की बूढ़ी माता के नयनों में अश्रुधारा बहाकर, चल बसे! गत २२ चैत्र (सोमवार) के मध्याह्न काल में उन्होंने 'बिदाई की बात' शीर्षक रचना 'वसुमती' में छपने के लिये भेजी थी; पर यह कौन जानता था कि उसी रोज़ रात को पौने दो बजे वह सदा के लिये बिदा ले लेंगे! उन्होंने क्षणिक युग-साहित्य की सृष्टि नहीं की, बल्कि सब युगों के लिये अमर साहित्य का निर्माण किया। जब तक सभ्य मानव-समाज में भाषा-साहित्य का आदर रहेगा, तब तक उनकी स्मृति बनी रहेगी। उन्होंने अपने जीवन में जो कुछ देखा था, जो कुछ भोगा था, जो कुछ पाया था, सब (कहानियों और उपन्यासों के रूप में) बंग-भाषा के चरणों में अर्पित कर दिया। बी० ए० पास करके उन्होंने टेलिग्राफ आफिस में कुछ दिन काम किया। उसी समय 'भारती' और 'प्रदीप' में उनकी कविताएँ और कहानियाँ छपती थीं। इसके बाद विलायत से बारिस्टरी पास करके स्वदेश लौटने पर पहले 'रंगपुर' (बंगाल) और पीछे 'गया' (बिहार) में वकालत की। फिर बारिस्टरी छोड़कर कलकत्ते में आये, "मानसी और मर्मवाणी" पत्रिका का सम्पादन करने लगे। वह जन्म-साहित्यिक थे। साहित्य ही उनका कर्मक्षेत्र था और साहित्य-क्षेत्र में प्रतिष्ठा-लाभ ही उनका कर्मफल था। उन्होंने अनेक उपन्यास भी लिखे हैं, पाठकों में जिनका सम्यक् आदर है। छोटी कहानियाँ लिखने में, रवीन्द्रनाथ को छोड़कर, बँगला-साहित्य में उनका कोई जोड़ नहीं।

बँगला से] ['वसुमती' और 'भारतवर्ष'

[५] 'बोधन-समिति' और 'सुनीति-संघ'—

कलकत्ता-निवासी श्रीगिरिजाभूषण मुखोपाध्याय एम० ए० ऐडवोकेट के अक्लान्त उद्योग से हाल ही में एक संस्था स्थापित हुई है, जिसका नामकरण श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर ने किया है—'बोधन-समिति'। 'बोधन' का अर्थ है जागरण'। इस समिति के द्वारा दुर्बल मस्तिष्क वाले बालकों को शिक्षा दी जायगी। जिन बालकों में मस्तिष्क-सम्बन्धी दोष पाये जायँगे, उनकी हर तरह की उन्नति के लिये प्रयत्न किया जायगा। कमज़ोर या बिगड़े दिमाग वाले लड़कों की उन्नति करना ही इस संस्था का मुख्य उद्देश्य है। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिये अनुभवी शिक्षक और धाइयाँ नियुक्त हैं, जो सदा अपनी देखरेख में बालकों का सुधार-संस्कार करते हैं। इस समिति के सभापति हैं सम्पादकाचार्य श्रीरामानन्द चटर्जी और मंत्री हैं उक्त मुखर्जी महाशय। सन् १८६० की २१वीं धारा के अनुसार इस संस्था की रजिस्टरी होनेवाली है। इसका कार्यालय सम्प्रति ६-५, विजय मुखर्जी लेन, भवानीपुर (कलकत्ता) में है। और, 'सुनीति-संघ' के कार्यालय का पता है—६ रामकृष्णदास लेन, कलकत्ता। इस संघ के भी वही सभापति हैं—श्रीरामानन्द चटर्जी। बँगला-मासिक 'भारतवर्ष' के सम्पादक रायबहादुर जलधर सेन इसके उपसभापतियों में हैं। इसकी स्थापना भी हाल ही में हुई है। दर-असल यह 'पवित्रता-संघ' है। इसमें भद्र समाज के स्त्री-पुरुष और छात्र-छात्री भी सम्मिलित हैं। इसका प्रधान उद्देश्य है अपवित्र और अश्लील साहित्य के प्रभाव और प्रचार को रोकना तथा उसका विरोध करना। कुरुचि-वर्द्धक नाटकों, नृत्यों और चित्रों के अनिष्टकारी प्रभाव से जनता को बचाना भी इस संघ का प्रधान लक्ष्य है। जनता के चरित्र को दूषित और विचार को कलुषित करने वाले चल-चित्रों (सिनेमा और टाकी की तसवीरों) पर भी यह संघ पूरा ध्यान रखेगा।

अंगरेजी से] ['माडर्न रिव्यू', मई

[६] मोहेंजोदाड़ो और स्व० राखालदास वन्द्योपाध्याय—

कुछ महीने हुए, भारतीय पुरातत्व-विभाग के भूतपूर्व डाइरेक्टर जेनरल सर जॉन मार्शल साहब द्वारा सम्पादित और अंशतः लिखित सिन्ध-प्रदेशान्तर्गत मोहेंजोदाड़ो के सम्बन्ध में एक बृहत्, सचित्र और बहुमूल्य ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है। लन्दन की आर्थर कम्पनी ने उसे प्रकाशित किया है। उसका मूल्य है १६८) रुपये। उसमें मार्शल साहब ने राखाल बाबू की पुरातत्त्व-सम्बन्धी प्रतिभा और उद्योगशीलता की बड़ी प्रशंसा लिखी है। उसके प्रथम खण्ड में आप लिखते हैं—"सिन्ध के अधिकारियों और तत्स्थानीय पुरातत्व-विभाग के अफ़सरों ने कई बार 'मोहेंजोदाड़ो' नामक स्थान का निरीक्षण किया था; किन्तु किसी ने उसके ध्वंसावशेष के प्राचीन ऐतिहासिक महत्त्व का उद्घाटन नहीं किया। जब सन् १९२२ ई० में राखाल बाबू ने वहाँ खुदाई शुरू कर दी, तब जौहर खुला। उन्होंने अपने इस आविष्कार का मूल्य खूब समझा, और समझ लेने पर फिर काम लगाने में तनिक भी देरी नहीं की। इस आविष्कार का श्रेय उन्हीं को प्राप्त है।"

बँगला से] —— ['प्रवासी', वैशाख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

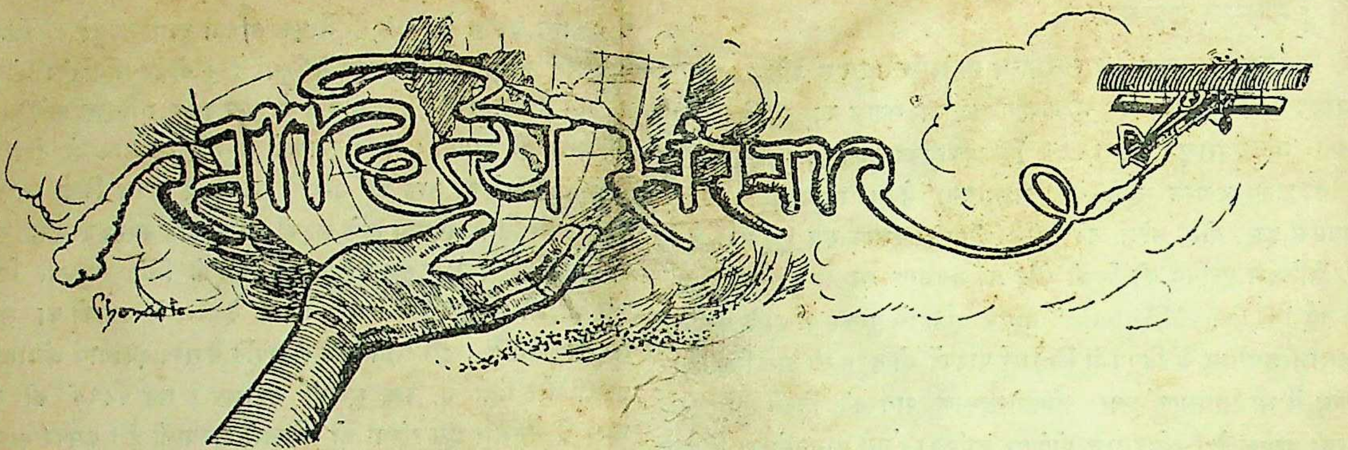

[१] 'युगान्तर', सचित्र हिन्दी-मासिक, लाहौर—

यह "जात-पाँत-तोड़क-मंडल (लाहौर) का क्रान्तिकारी मुखपत्र" है। इसके सम्पादक हैं हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक श्रीसन्तरामजी, बी० ए०। वार्षिक मूल्य २), प्रति संख्या ≡), पृष्ठ-संख्या ४०, छपाई साफ़। अब तक इसके तीन अंक निकल चुके हैं। प्रत्येक अंक सचित्र और युगान्तरकारी विचारों से पूर्ण है। सामाजिक क्रान्ति इसका प्रधान लक्ष्य है। इसके लेखों और टिप्पणियों में राष्ट्रीयता का गाढ़ा रंग है। इसके कई स्तम्भ बड़े उपयोगी हैं। 'अमृतबिन्दु' में महात्माओं के उपदेशप्रद वाक्य संकलित हैं। 'विचित्र संसार' में अनोखे और मनोरञ्जक समाचार हैं। 'फुलवाड़ी' में पत्र-पत्रिकाओं के नवयुग-सन्देश-वाहक लेखों के संकलन हैं। समाचारों के संग्रह और हँसानेवाली 'चुटकियों' में भी कहीं-कहीं युगान्तर-सूचक भाव हैं। यह अपनी नीति और उद्देश्य के पालन में बड़ा कट्टर और उग्र जान पड़ता है। हिन्दी में एक ऐसे पत्र की भी आवश्यकता थी। हिन्दू-जाति की रक्षा और भारत के अभ्युदय के लिये यह वर्णव्यवस्था का विनाश चाहता है। इसके तीन अङ्कों से यह बात प्रकट हो रही है कि इसके समर्थकों की संख्या बहुत अधिक है। युवक-सम्प्रदाय के लिये इसमें काफ़ी प्रलोभन और आकर्षण भी हैं। आशा है कि हिन्दू-समाज की वर्तमान स्थिति में इस पत्र को विशेष सफलता प्राप्त होगी।

[२] 'आरोग्य-विज्ञान', सचित्र हिन्दी-मासिक, इन्दौर—

यह वैद्यक-सम्बन्धी एक सुन्दर पत्र है। इसके प्रधान सम्पादक हैं वैद्यराज पं० ख्यालीराम द्विवेदी और वही इसके संचालक तथा संरक्षक भी हैं। गत जनवरी से यह निकलने लगा है। अब तक इसके तीन ही अंक निकले हैं। तीनों की छपाई और सजावट बहुत सुन्दर है। आज तक हिन्दी में ऐसा सुन्दर-सजीला आयुर्वेदिक पत्र नहीं निकला था। सम्पादन-शैली भी अच्छी है। किन्तु ठीक समय पर प्रकाशित न होने से यह उत्तम होने पर भी ग्राहकों को आकृष्ट न कर सकेगा। 'मुरादाबाद का पुराना वैद्य' ही हिन्दी में चिकित्सा-सम्बन्धी सर्वश्रेष्ठ पत्र कहा जाता है; किन्तु १८ वर्ष का युवक होकर भी वह ऐसा आलसी है कि उसकी श्रेष्ठता बहुत खलती है। देखने में आता है कि वैद्यक-सम्बन्धी हिन्दी-पत्रों का प्रकाशन बहुत अनियमित रीति से होता है। यदि यह पत्र अनियमितता के रोग से मुक्त हो सका, तो हिन्दी में यह अपने विषय का सर्वोत्तम पत्र होकर रहेगा। इसका दूसरा अंक 'सम्मेलनांक' है, जिसमें ग्वालियर के बाईसवें आयुर्वेद-महासम्मेलन का सम्पूर्ण कार्यविवरण प्रकाशित हुआ है। उसके अध्यक्ष के विद्वत्तापूर्ण भाषण में आयुर्वेदीय ग्रन्थ-प्रकाशन पर जो विचार प्रकट किये गये हैं, उनको कार्य-रूप में परिणत करने का उद्योग होना चाहिये। वे विचार इस प्रकार हैं—"हमारे प्राचीन आयुर्वेदीय हस्तलिखित ग्रन्थों का बड़ा संग्रह अब भी भिन्न-भिन्न पुस्तकालयों में और वैद्यों के घरों में पड़ा हुआ है। उन सभी ग्रन्थों को छपवाने से विशेष लाभ नहीं। उनसे समान विषयों का संग्रह करके संग्रह-ग्रन्थों को तैयार कराना चाहिये। ऐसे संग्रह-ग्रन्थ तैयार करने से अनेक ग्रन्थों के छपवाने का श्रम और धनव्यय बच जायगा। ऐसे संग्रह-ग्रन्थ बन जाने से आयुर्वेद के सूक्ष्म अभ्यास करनेवालों को एक विषय के लिये अनेक ग्रन्थ देखने की आवश्यकता न रहेगी, और सब बातें एक ही ग्रन्थ में देखने को मिल जायँगी।" इस सम्मेलनांक में प्रयोग-परिषद् और चिकित्सा-परिषद् का जो विवरण प्रकाशित हुआ है, उसमें भिन्न-भिन्न प्रचलित रोगों पर बड़े-बड़े अनुभवी वैद्यों के बताये नुस्खे बड़े काम के हैं। तीसरे अङ्क में "मृत्युलोक का अमृत तक्र और उसके गुण, भारतीय वनस्पति-शास्त्र का अँगरेजी साहित्य, विषदशोपचार (लेखमाला)" आदि उपयोगी लेख हैं। सम्पादकीय टिप्पणी में कई हितकर और पढ़ने योग्य बातें हैं। आवरण-पृष्ठ पर भगवान धन्वन्तरि का सुन्दर चित्र है—वही भगवान इसे अमृतत्व प्रदान करें।

सूचना—रंगभूमि, उषा, विद्यार्थी आदि पत्र-पत्रिकाओं का परिचय आगामी अंक में प्रकाशित होगा। —सं०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस बार अखिल-भारतवर्षीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का बाईसवाँ महाधिवेशन ग्वालियर में होनेवाला है। वहाँ एक शानदार स्वागत-समिति बन गई है। उसमें विशेषता यह है कि किसी साहित्यसेवी को स्थान नहीं मिला है। सम्मेलन की सफलता के लिये साहित्यसेवियों की आवश्यकता भी नहीं है; क्योंकि स्वागत समिति में ऐसे ही सज्जनों का चुनाव होना चाहिये, जिनकी बदौलत सम्मेलन के साहित्यिक प्रतिनिधियों को अच्छी सवारी, अच्छा भोजन और साफ़ टट्टी मिल सके।

× × × ×

सो अब इन तीनों बातों की चिन्ता जाती रही। चुने गये सज्जनों में कोई महाशय अस्तबल के अफ़सर हैं, कोई बमपुलीस के दारोगा हैं, कोई जंगल-महाल के अधिकारी हैं। भला इससे अच्छा चुनाव और क्या होगा? बाहर के प्रतिनिधियों को तो बस भण्डारी-कोठारीजी की ही जरूरत है; क्योंकि सच्चा साहित्य सजे हुए थाल में रहता है—साहित्य-सेवियों की खोपड़ी में नहीं।

× × × ×

ग्वालियर के रूठे हुए साहित्यसेवियों को मीठा-मीठा आश्वासन देकर लश्करी "जयाजीप्रताप" सहज ही मना लेना चाहता है। सहयोगी ने लिखा है—"यदि हम व्यावहारिक दृष्टि से देखें, तब तो चुनाव का कार्य ठीक ही हुआ है; क्योंकि स्वागत-समिति के सदस्य अन्त तक बनते रहेंगे और उनमें से अधिकांश स्वतः नहीं, बल्कि बनाने से बनते हैं। फिर भी सिद्धान्त-रूप में विरोधियों का तर्क ठीक ही माना जायगा।"—और आपका यह तर्क भी ठीक ही माना जायगा कि 'स्वागत-समिति के सदस्य अन्त तक बनते रहेंगे।' दरबारी भोज की भीड़ है, अन्त तक तो पंगत की लैन-डोरी लगी ही रहेगी।

× × × ×

सहयोगी की एक बात बड़े मार्के की है—"सम्मेलन लश्कर की हिन्दी-साहित्य-सभा की ओर से नहीं, ग्वालियर-राज्य की ओर से हो रहा है; अतः स्वागत-समिति में भी राज्य के सभी भागों के हिन्दी-प्रेमियों का आना आवश्यक है और पदाधिकारियों में भी उनका चुनाव होना चाहिये।"—अब इतने साफ़ बयान पर भी ग्वालियर के साहित्यसेवी क्या इसलिये मूँड़ मार रहे हैं कि उन्हें राज्य में पदाधिकार दिये जाएँ? सो नहीं हो सकता। राज-दरबार ठट्ठा नहीं है। वहाँ कोई खाते-खाते मरता है, कोई खाये बिना मर जाता है।

× × × ×

सहयोगी की दूसरी बात सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है—"चुनाव के सम्बन्ध में कुछ सज्जनों को असन्तोष है और उन्होंने अपना विरोध 'प्रताप', 'भारत' आदि बाहर के पत्रों में प्रकाशित कराया है। हम इस नीति को भी पसन्द नहीं करते कि स्वागत समिति से यदि कोई छोटी भी गलती हो गई, तो उसे आपस में तय करने के बजाय बाहर के पत्रों में आन्दोलन किया जाय।"—किन्तु सहयोगी ने यह बात भुला दी है कि देशी राज्यों की प्रजा सदा से बाहर के पत्रों में ही आन्दोलन करती आ रही है; क्योंकि घर के पत्रों में उनकी शिकायतों के लिये रद्दी की टोकरी भी नहीं रक्खी जाती!

× × × ×

सहयोगी 'कर्मवीर' को ग्वालियर के सेठ श्रीरामनाथ अग्रवाल ने सूचित किया है कि "यहाँ के कुछ प्रतिष्ठित साहित्यसेवियों का विचार है कि स्वागतकारिणी के २०० मेम्बर बन जाने से चुनाव-सम्बन्धी बातों पर पुनः विचार किया जायगा।"—इससे तो यही अच्छा होता कि एक साथ ही सम्मेलन के पण्डाल में ही विचार किया जाता। जल्दी क्या पड़ी है!

× × × ×

सहयोगी 'कर्मवीर' ने एक विचित्र बात लिखी है—"ग्वालियर के जिन साहित्यसेवी महारथियों के पुष्ट कन्धों पर इस बार सम्मेलन को सफल बनाने का भार डाला गया है, वे, आशा है, अपने पैरों के नीचे असन्तोष, गृह-कलह और वैमनस्य की घास न उगने देंगे।"—भला जहाँ जंगलात और अस्तबल के अफ़सर हैं, वहाँ घास कैसे उगने पायेगी महाराज? आप भी गहरी छान कर लिखने बैठते हैं!

× × × ×

चूँकि इस बार "सम्मेलन ग्वालियर-राज्य की ओर से हो रहा है," इसलिये आशा है कि शुद्ध साहित्यिक महोत्सव होगा, राष्ट्रीयता की दुम न लगने पायेगी। लेकिन यह अच्छा है कि सम्मेलन बिना दुम ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का रहे, बशर्त्ते राज्य की ओर से उसका पेट भर दिया जाय। इस दृष्टि से राज्य के पदाधिकारियों का चुनाव सब पसन्द करेंगे—वे साहित्यसेवी भी, जो आज तन कर बैठे हैं, वे कल मन कर बैठेंगे।

× × × ×

बहुत-से साहित्यिक मित्रों की शिकायत है कि 'जागरण' के सम्पादकीय विभाग से शीघ्र पत्रोत्तर नहीं मिलता। उन्हें मालूम होना चाहिये कि आज-कल लेटरबक्स ग़ायब हो रहे हैं और डाकखाने में चिट्ठियाँ जल जाती हैं!

× × × ×

प्रयाग के एक विश्वसनीय साहित्यिक को खबर मिली है कि मियाँ शौकत अली की तरह पं० रामनरेश त्रिपाठी भी एक नई विधर्मी युवती से विवाह करनेवाले हैं—उस युवती ने त्रिपाठीजी के उर्दू-प्रेम पर रीझ कर आत्मसमर्पण किया है—विवाह इसी लगन में कानपुर की शुद्धि-सभा में होनेवाला है। यदि मौलाना के सम्बन्ध में उठी हुई अफवाह की तरह कहीं यह भी सच निकली, तो कहना होगा कि त्रिपाठीजी ने एक ही ढेले में दो शिकार किया—इधर हिन्दुस्तानी एकेडमी भी फँसी, उधर नई बीबी भी मिली!

× × × ×

'हिन्दी-बंगवासी' में किसी एक 'मनमोहन' आशुकवि का 'प्रिय-मिलन' महाकाव्य धारावाहिक रूप से प्रकाशित हो रहा है। महाकाव्य की ऐसी सस्ती देखकर 'बेढब बनारसी' महाशय ने भी एक महाकाव्य लिख डाला है और उसे 'जागरण' में प्रकाशित करने के लिये दुराग्रह कर रहे हैं; पर हमने स्थानाभाव के कारण उनसे क्षमा माँग ली है; क्योंकि उसमें सत्रह सौ सतासी सर्ग हैं और इतने प्रकार के छन्द हैं कि जितने काशी-नरेश के महाभारत में भी नहीं मिलेंगे। वह महाकाव्य 'हिन्दी-बंगवासी' ही के बृहदाकार में अँट सकता है।

× × × ×

बिहार-प्रान्त के आरा नगर से 'हितैषी' नाम का एक नया पाक्षिक पत्र गत पहली अप्रैल से निकलने लगा है। रूप-रंग अच्छा है। लेख भी काम के हैं। इसमें अमन सभा की रिपोर्टें प्रायः छपा करती हैं। जन्म-तिथि का पूरा प्रभाव पड़ा है!

× × × ×

हिन्दी के सुप्रसिद्ध कहानी-लेखक श्रीसुदर्शनजी जब से उर्दू-मासिक 'चन्दन' का सम्पादन करने लगे, तब से हिन्दी-संसार में बहुत कम दर्शन देते हैं। उर्दू-बीबी के भाल पर चन्दन और हिन्दी-देवी के भाल पर राम-रज भी नहीं? बुरे फँसे!

+ + + +

चैत्र की 'माधुरी' के मुखपृष्ठ पर 'आर्यमित्र' के सम्पादक पं० हरिशंकर शर्मा कविरत्न ने 'हिन्दी का हिंडोला' लगाकर भिन्न-भाषा-भाषियों को आमंत्रित किया है कि "हिन्दी के हिंडोले में ज़रा तो बैठ जाइये"; क्योंकि इस हिंडोले में 'बिहारी' की विहार-वाटिका है, 'सूर' की कुटी है, 'केशव' की कुंज है, 'तुलसी' का मानस-सर है, 'देव' की दरी है और 'भूषण' की सेना भी है।—तो फिर वह हिंडोला है या न्यूटनिक जहाज़?

+ + + +

जेठ के 'विशालभारत' में उसके सरल-हृदय सम्पादक पं० बनारसीदासजी चतुर्वेदी ने अपने पाठकों से पूछा है कि "आत्मरक्षा के लिये व्यक्तिगत विवाद में पड़ना चाहिये या नहीं?" क्योंकि "कितने ही महानुभावों ने मौके-बेमौके 'विशालभारत' के खिलाफ लिखना अपना कर्तव्य समझ रक्खा है।"—भला पथ्य के विषय में रोगी से भी कोई सलाह पूछता है? ऐसे दिलचस्प मामलों में पाठक ही तो मज़ा लूटते हैं। वे भला कब चाहेंगे कि आप आत्मरक्षा के लिये विवाद-क्षेत्र में न कूदें? वे तो लेखकों और सम्पादकों को काजल की कोठरी में लड़ते देखकर ठहाका लड़ाने में बड़े उस्ताद हैं। आखिर हिन्दी-साहित्य-क्षेत्र में उनके लिये दूसरा तमाशगाह भी तो नहीं है! इसलिये हिन्दी की लंका में रहकर जुझाऊ डंका बजाने से न डरिये।

× × × ×

लखनवी 'माधुरी' के घर में 'चक्रपाणि', 'दण्डपाणि', 'शूलपाणि' आदि बहुत-से आक्रमणकारी इकट्ठे होते जा रहे हैं, इसलिये उसके दूरदर्शी सम्पादक को किसी 'पीयूषपाणि' की भी तलाश कर रखनी चाहिये।

× × × ×

चैत्र की 'माधुरी' से पता लगा कि हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पं० इलाचन्द्र जोशी यह देखकर बड़े अचम्भे में पड़े हुए हैं कि उनका 'कबीर और रवीन्द्रनाथ' शीर्षक पाँच वर्षों का भूला हुआ लेख 'सुधा'-सम्पादक श्रीदुलारेलालजी भार्गव के दफ्तर से उड़कर इन्दौर की 'वीणा' में श्रीसुधीन्द्र वर्मा एम० ए० के नाम से कैसे जा छपा! लेकिन इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं; आपने ऐसा 'चौराग्रगण्य' लेख लिखा ही क्यों? आपने चोर साबित किया होगा रवीन्द्रनाथ को और आपके लेख ने किया सुधीन्द्र वर्मा को। पता लगाइये, लिखनेवाली क़लम तो चोरी की नहीं थी?

× × × ×

भाषा-मर्मज्ञ लाला सीतारामजी अवधवासी की राय में 'भूषण' की कविता भटैती है! और समालोचक-प्रवर पं० किशोरीदास वाजपेयी के मतानुसार ऐसी राय सरासर लठैती है!

———

मुद्रक—बजरंगबली गुप्त 'विशारद', श्रीसीताराम प्रेस, काशी। प्रकाशक—पं० प्रमोदशंकर व्यास, पुस्तक-मन्दिर, काशी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक-मन्दिर की अपनी

दस पुस्तकें !

पेरिस का कुबड़ा—मूल लेखक—विक्टर ह्यूगो। अनुवादक—श्रीयुत दुर्गादत्त सिंह, बी० ए०, एल-एल० बी०। अत्यन्त आकर्षक एवं उपदेशपूर्ण फ्रेंच उपन्यास। ३)

आँधी—हिन्दी के परम यशस्वी कहानी-लेखक 'प्रसाद' जी की सरस-भावपूर्ण ११ कहानियाँ। २)

हिन्दी की श्रेष्ठ कहानियाँ—संग्रह-कर्त्ता—'भारत'-सम्पादक पं० नन्ददुलारे वाजपेयी, एम० ए०। हिन्दी के १३ कलाकुशल कथाकारों की चुनी हुई १३ श्रेष्ठ कहानियाँ। १।।)

एक घूँट—हिंदी के स्वनामधन्य नाटककार श्रीयुत जयशंकर 'प्रसाद'जी की एकांकी नाटिका। ।।)

नर-पशु—रूसी उपन्यास, मैक्सिम गोर्की-लिखित। प्रकाशित हो गया। १)

वे तीनों—मूल लेखक, मैक्सिम गोर्की। अनुवादक—पं० छविनाथ पाण्डेय, बी० ए०, एल-एल० बी०। अत्यन्त रोचक एवं शिक्षाप्रद रूसी उपन्यास। २)

धूप-दीप—पं० विनोदशंकर व्यास की लिखी हुई पाँच राजनीतिक कहानियाँ। ।।।)

बुढ़िया पुरान—श्री महावीरप्रसाद गहमरी-लिखित, यह पुस्तक स्त्रियों के लिए अपने विषय की अकेली है। ।।)

भूली बात—हिंदी के सिद्धहस्त कहानी-लेखक पं० विनोदशंकर व्यास की युगान्तर-कारिणी कहानियाँ। १)

शराबी—हिन्दी के बड़े मस्त और ज़बरदस्त उपन्यास-लेखक श्री 'उग्र' जी का हड़कम्पी उपन्यास। २)

प्रकाशक—पुस्तक-मन्दिर, काशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Regd. No.—A-221

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टेलीफोन नं० ८९

तार का पता—सुर्ती

स्थापित सन् १८९५

क्या आप सुर्ती-जर्दा के शौकीन हैं ? तो इसे देखिए :—

भारत के सब से प्रसिद्ध

काशी के बदलराम लक्ष्मीनारायण की दूकान से ख़रीदिए

कितनी ही प्रदर्शिनियों से सोने के पदक और प्रशंसापत्र मिले हैं

सुगन्ध और स्वाद के लिए सदैव बदलराम लक्ष्मीनारायण की प्रसिद्ध काशी की सुर्ती, जर्दा, पान-मसाला और तम्बाकू इत्यादि व्यवहार कीजिए। आप सन्तुष्ट और प्रसन्न होंगे। इन उत्तम सुर्तियों में कोई ऐसी वस्तु नहीं पड़ी है जो शरीर को हानि पहुँचा सके। यही इस कारख़ाने की विशेषता है। बड़ा सूचीपत्र मँगाकर देखिए।

ब्राञ्च— { १४४ हरिसन रोड कलकत्ता। आमपट्टी, ढाका।

निवेदक—बदलराम लक्ष्मीनारायण (गोल्ड मेडिलिस्ट) बनारस सिटी

अपने विषय की विलक्षण पुस्तक !

प्रतीक्षा कीजिए

काम-दर्शन

काम-दर्शन

काम-दर्शन

छप रहा है

प्रकाशक—पुस्तक-मन्दिर, बनारस सिटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सिर्फ कवर इंडियन प्रेस लिमिटेड, बनारस-ब्रांच में मुद्रित

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जागरण

साहित्यिक पाक्षिक पत्र

क्या आप 'जागरण' की आवश्यकता अनुभव करते हैं ?

क्या 'जागरण' से आपका कुछ मनोरंजन होता है ?

यदि हाँ, तो इसकी सहायता के लिये अब तक आपने क्या किया ?

कृपया इस पर अवश्य ही विचार कीजिये

वार्षिक मूल्य ३) | विदेशों के लिये ५)
छमाही ,, १॥) | प्रति अंक =)

वर्ष १

पुस्तक-मन्दिर काशी द्वारा प्रकाशित

सम्पादक-शिवपूजन सहाय

अंक ११

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्षिक मूल्य ६)] **हिन्दीका श्रेष्ठ सुन्दर सचित्र मासिक पत्र** [एक अंक ॥-)

'प्रताप' की राय है

"....'विशाल-भारत' शुरूसे अब तक बराबर अपने पाठकोंके सामने बहुत सुन्दर, सुरुचिपूर्ण और उनके मानस-क्षितिजको ऊँचा उठानेवाले लेखों और कविताओंको उपस्थित करनेका यत्न करता रहा है। इसमें उसे बहुत अधिक सफलता मिली है।

'विशाल-भारत' के लेखोंके चयन, श्रेष्ठ सामग्रीके संकलन, गेट-अप आदिमें बराबर ही बड़ी सावधानीसे काम लिया जाता है। और यही कारण है कि पत्र इतना अच्छा निकलता है।

इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि आजकलकी हिन्दी पत्र-पत्रिकाओंमें 'विशाल-भारत' बिलकुल बेजोड़ और सर्वोत्कृष्ट पत्र है। हिन्दी-भाषा-भाषी सभी सज्जनोंसे हमारा अनुरोध है कि वे इस श्रेष्ठ पत्रको अपनाकर हर मास अनेक नई-नई बातें और ऊँचे विचार मनन करनेके सुअवसरसे लाभान्वित हों।" —'प्रताप'

हमारे यहांकी पुस्तकें

१—"कुमुदिनी" उपन्यास— रवीन्द्रनाथ ठाकुर	मूल्य ३)	५—"लम्बकर्ण" (सचित्र हास्य)—परशुराम	मूल्य १।)
२—"रूसकी चिट्ठी" (सचित्र)— "	" १।।।)	६—"भेड़ियाधसान"— " "	" १।।)
३—"षोड़शी" (कहानियाँ)— "	" १।।।)	७—"क्रान्तिकारी कार्लमार्क्स"— ...	" ।।)
४—"गल्पगुच्छ" (कहानियाँ)— "	" १।।)	८—"प्रेम-प्रपंच" (उपन्यास)— ...	" १।)

मगानेका पता :—"विशाल-भारत" कार्यालय, १२०।२ अपर सरकूलर रोड, कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'पुस्तक-मंदिर' की नवीन पुस्तक

काम-सम्बन्धी भारतीय तथा विदेशीय ज्ञान का भंडार !

काम-दर्शन

[Eugenics—Eastern & Western]

लेखक—श्रीयुत हरिहरनाथ बी० ए०

भूमिका-लेखक—पं० बाबूराव विष्णु पराड़कर ('आज'-सम्पादक)

'In no other department of life, as much as in Sexual, we find closely associated the noblest and the basest, the Superhuman and the Subhuman; because the finest and the deepest root of our spiritual and bodily existence spring from this soil......'———**Albert Eulenburg**.

But

'Alas ! complete ignorance of that has unfortunately wrecked many a man and many a woman, while a little knowledge of the subject would have enabled people to have understood many things which they believed to be quite incomprehensible or which were not thought worthy of their consideration.'

———**Al Fournier**.

काम-सम्बन्धी घासलेटी साहित्य के बाहुल्य तथा सच्चे काम-विज्ञान की पुस्तकों के अभाव के कारण, आज दिन हम लोगों में काम-ज्ञान न केवल लज्जास्पद समझा जाने लगा है और न केवल उसके पवित्र एवं उपयोगी स्वरूप का लोप हो गया है, प्रत्युत् काम जैसे अत्यन्त अनिवार्य तथा महत्वपूर्ण विषय के अज्ञान और दुरुपयोग से हमारा दाम्पत्य-जीवन नीरस एवं सामाजिक जीवन कलुषित हो रहा है। यह पुस्तक इन्हीं दोषों को दूर करने के विचार से लिखी गई है और इसका उद्देश्य हिन्दी-संसार में उस आदर्श काम-विज्ञान को उपस्थित करने का है जिसके ही सम्बन्ध में लिखा गया है कि—

—इसके पीछे देखिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

केवल विज्ञापन के फार्म 'सरस्वती-प्रेस' काशी में मुद्रित।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'It should be studied by all, both old and young: the former will find in it real truths gathered by experience and already tested by themselves while the latter will derive the real advantage of learning things which some perhaps may otherwise never learn at all, or which they may learn only when it is too late to profit by the learning.'——**Fr. Trans.**

पुस्तक की अत्यन्त अनुपम विशेषता यह है कि इसमें दो हज़ार वर्ष पूर्व के वात्स्यायन-काम-सूत्र से लेकर कोक आदि लिखित भारतीय पुस्तकों के सम्पूर्ण विषयों का संग्रह करके उनके मर्म और रहस्य को खोलने तथा उनके उपयोग वा दुरुपयोग पर प्रकाश डालने के लिए विलायत की इंगलिश, जरमन, लैटिन आदि भाषाओं की पुस्तकों में अंकित काम-विज्ञान का भी संग्रह किया गया है। इस प्रकार यह ग्रन्थ काम-शास्त्र का ऐसा भंडार है जिसका एक-एक नोट देशी और विदेशी भाषाओं की पूरी-पूरी पुस्तकों का विषय है। अतएव उसकी उपयोगिता केवल भारतीयों के लिये नहीं वरन् विदेशियों के लिये भी है। इसके अतिरिक्त भारतीय संस्कृति को सामने रखकर लिखी जाने के कारण जनन-व्यवस्था, सन्तान-निरोध, दाम्पत्य जीवन आदि विषयों की ऐसी विवेचना की गयी है कि उसको पढ़कर उक्त विद्या का पूर्ण ज्ञान होने के साथ ही साथ उनके सम्बन्ध के निरे विलायती आदर्श पर लिखे गये लेखों और पुस्तकों की हम भारतवासियों के लिये अनुपयुक्तता प्रतीत होने लगती है।

लेखनशैली दार्शनिक है और ज्ञानवृद्धि तथा उपयोग ही ध्येय होने के कारण कामुकता को भूलकर भी स्थान नहीं मिला है। अतएव पुस्तक वर-कन्याओं के लिये भी संग्रहणीय है।

'The benefits which the unreserved scientific education of the sexual problem is able to diffuse throughout the widest circle of the population are so extensive that the consideration of any possible harm that may ensue becomes infiniti-simal in comparison.'——**A Von Schrauch Notzing.**

छपाई, सज-धज अत्यन्त मनोहारिणी—सजिल्द, पृष्ठ-संख्या लगभग ३५०.

मूल्य ३)

ध्यान दीजिये—"पुस्तक-मंदिर" और "जागरण" के ग्राहकों को यह अमूल्य पुस्तक पौने मूल्य २।) में ही मिलेगी।

आर्डर भेजिये! शीघ्रता कीजिये!

मैनेजर—पुस्तक-मंदिर, बनारस-सिटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक-मंदिर की दूसरी नवीन पुस्तक

नर-पशु

संसार-विख्यात रूसी क्रान्तकारी

मैक्सिम गोर्की

का

नया उपन्यास !

मूल्य
एक रुपया

नया उपन्यास !

टेलीफोन नं. ८५

तार का पता—सुर्ती

स्थापित सन् १८९५

क्या आप सुर्ती - जर्दा के शौकीन हैं ? तो इसे देखिए—

भारत के सबसे प्रसिद्ध

काशी के बदलराम - लक्ष्मीनारायण की दूकान से खरीदिए

कितनी ही प्रदर्शिनियों से सोने के पदक और प्रशंसापत्र मिले हैं

सुगन्ध और स्वाद के लिए सदैव बदलराम-लक्ष्मीनारायण की प्रसिद्ध काशी की सुर्ती, जर्दा, पान-मसाला और तम्बाकू इत्यादि व्यवहार कीजिए। आप सन्तुष्ट और प्रसन्न होंगे। इन उत्तम सुर्तियों में कोई ऐसी वस्तु नहीं पड़ी है जो शरीर को हानि पहुँचा सके। यही इस कारखाने की विशेषता है। बड़ा सूचीपत्र मँगाकर देखिए।

ब्राञ्च— १४४ हरिसन रोड, कलकत्ता।
आमपट्टी, ढाका।

निवेदक—बदलराम-लक्ष्मीनारायण
(गोल्डमेडलिस्ट) बनारस सिटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जागरण पर हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओं और लेखकों का क्या मत है?

दैनिक 'वर्त्तमान'—छपाई-सफ़ाई तथा विषय-बाहुल्य की दृष्टि से पत्र बहुत अच्छा निकला है। हिन्दी के अच्छे-अच्छे लेखकों और कवियों का सहयोग प्राप्त कर साहित्य-क्षेत्र में यह एक उच्च कोटि का पत्र हो जायगा, ऐसी आशा है। हिन्दी-प्रेमियों को इसका आदर करना चाहिये।

साप्ताहिक 'कर्मवीर'—अभी तक हिन्दी-जगत् में पूर्ण रूप से साहित्यिक पत्र का सर्वथा अभाव था। इस अभाव का खयाल करके 'जागरण' का प्रकाशन होने लगा है। काशी में तो हिन्दी के कलाकारों का जमघट मौजूद है और ऐसी हालत में 'जागरण' उनका सहयोग पाकर एक ऊँचे दर्जे के साहित्यिक पत्र में परिणत होने के लक्षण प्रकट कर रहा है।

'वीणा'—अभी काशी से 'जागरण' नाम का एक बहुत सुन्दर पाक्षिक पत्र प्रकाशित हुआ है। यह पत्र हिन्दी के एक विशेष अभाव की पूर्त्ति अवश्य करेगा।

'सहेली'—हमें विश्वास है कि लोग इस पत्र को बहुत पसन्द करेंगे एवं अपनावेंगे।

'चाँद'—पत्र अंग्रेज़ी के 'पञ्च' के ढंग पर निकल रहा है। शिवपूजनजी की लेखनी से निकले हुए चुटकुले बड़े सजीव और सुन्दर होते हैं।

'विशाल-भारत'—हिन्दी-प्रेमियों से हमारा हार्दिक अनुरोध है कि अधिकाधिक संख्या में इसके ग्राहक बनें। 'जागरण' का भविष्य निस्सन्देह उज्ज्वल प्रतीत होता है।

'स्वराज्य'—किसी अंश में यह 'लिटरेरी डाइजेस्ट' का काम करेगा।

दैनिक 'आज'—इसे सभी लब्ध-प्रतिष्ठ लेखकों का सहयोग प्राप्त है।

'माधुरी'—'जागरण' की सामग्री का संकलन सुरुचिपूर्ण और उपयोगी है। साहित्यसेवियों के लिये पत्र में मनोरंजन का काफ़ी मसाला रहता है।

'सुधा'—पत्र की साज-सज्जा मनोहर है।

'आर्यमित्र'—'जागरण' के पढ़ने में तबीयत लगती है और आनन्द आता है। इसमें जितनी सामग्री रहती है वह सब ही प्रायः साहित्यिक सीमा के अन्तर्गत ही होती है। यहाँ तक कि समाचार भी साहित्यिक ही दिये जाते हैं।

'अभ्युदय'—पता पेड़ पर नहीं...

'प्रयागी'प्रताप—हिन्दी-संसार में एक विशुद्ध साहित्यिक पत्र की जो कमी थी, प्रतीत होता है कि 'जागरण' उसकी पूर्ति भली प्रकार कर सकेगा। स्वाध्याय-सामग्री सचमुच उपयोगी स्तम्भ है।

पं० चन्द्रमौलि सुकुल एम० ए०—इसके छोटे, किन्तु विचार-पूर्ण लेख, उत्तम कविताओं का चुनाव, सुरुचिपूर्ण हास्य-विनोद तथा समालोचनाएँ—सभी उत्तम होती हैं। 'जागरण' के प्रकाशन से साहित्य-संसार की एक बड़ी कमी पूरी हुई।

प्रोफ़ेसर पं० बदरीनाथ भट्ट—मुझे जो आशा थी, उससे कहीं अच्छा 'जागरण' निकला। साहित्यिकों के लिये तो ख़ास चीज़ है।

कविवर पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'—'जागरण' पढ़कर तबीयत बहुत खुश हुई। शीघ्र ही पत्र की प्रतिष्ठा बढ़ जायगी, इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं। पत्र प्रथम अंक से ही आकर्षक है।

श्री० कालिदासजी कपूर, एम० ए०—सम्पादन में नवीनता है और सुचारुता भी। इसके अतिरिक्त काशी की मित्र-मंडली क्या कम है। 'विनोद' और 'प्रसाद' के सहयोग से 'जागरण' में आनन्द-ही-आनन्द रहेगा।

श्री० सुदर्शनजी—आपका यह छोटा-सा परचा अन्य बड़े-बड़े परचों से कहीं अच्छा है। इसका हर-एक पृष्ठ, हर-एक लेख, हर-एक हेडिंग पुकार-पुकार कह रहा है कि इस उद्यान का माली बड़ा चतुर है।

पं० विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक'—'जागरण' बहुत सुन्दर निकला।

श्री० दुलारेलाल भार्गव, 'सुधा'-संपादक—इतना सुन्दर पत्र निकालने के लिये बधाई।

श्री० हनुमानप्रसाद पोद्दार, 'कल्याण'-सम्पादक—बहुत अच्छा पत्र निकाला। साधुवाद।

पं० रामसेवक त्रिपाठी, 'माधुरी'-सम्पादक—पत्र का अच्छा आदर होगा और 'जागरण' हिन्दी-साहित्य-संसार में सच्ची जागृति फैलायेगा। मेरी हार्दिक बधाई।

ठाकुर श्रीनाथसिंह, 'बालसखा'-सम्पादक—'जागरण' मुझे बहुत पसन्द आया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष १
अंक ११
अमावस्या
आषाढ़ १९८९
२ जुलाई १९३२

व्रजभाषा-साहित्य के महारथी का शरीरपात !

अब लेखनी आगे नहीं बढ़ती। इन्हीं स्तम्भों में साहित्यिकों का निधन-संवाद लिखते-लिखते दिल पक गया !

उस दिन रत्नाकरजी ने बड़े हौसले से पोते का व्याह किया—बड़े ठाट का जलसा करके सब इष्ट-मित्रों और साहित्य-सेवियों का स्वागत-सत्कार किया, और उसके कुछ ही दिनों बाद अचानक सुनने में आया कि हरद्वार में गंगा-तट पर उन्होंने परलोक-यात्रा कर दी ! व्रजभाषा-साहित्य-गगन के अन्तिम छोर में जो एक परम ज्योतिष्मान् नक्षत्र जगमगा रहा था, वह अस्त हो गया—नहीं, व्रजभाषा-साहित्य का शोभाशाली सान्ध्य सूर्य रत्नाकर-विलीन हो गया !

इस समय हिन्दी के दुर्भाग्य का अन्त नहीं दीख पड़ता ! साहित्य-सागर के अन्तस्तल में पैठकर अनमोल मोती निकाल लानेवाले साहित्यिकों का ऐसा क्रमबद्ध महाप्रस्थान कदाचित् ही किसी अशुभ वर्ष ने देखा हो ! इस वर्ष के आरम्भ के साथ ही यकायक मौत की ऐसी आँधी उठी कि साहित्य-संसार में हड़कम्प-सा छा गया। जिन वयोवृद्ध साहित्य-सेवियों की बदौलत हिन्दी की प्रतिष्ठा और शोभा है, उनके लिये लोग चिन्तित हो उठे। किन्तु भवितव्य कैसे टल सकता है !

कविवर रत्नाकरजी यद्यपि पुराने राजरोगी थे, तथापि अन्तिम समय तक पूर्ण स्वस्थ की भाँति प्रसन्न रहे। उनकी महायात्रा से कुछ ही क्षण पूर्व जागरण' के मुद्रक श्रीबजरंगबलीजी उनसे मिलने गये और उस समय भी उन्हें 'सूरसागर' के सम्पादन में दत्तचित्त पाया। उधर अदृश्य रूप से सिर पर मौत मँड़रा रही थी, इधर वह 'सूरसागर' के सम्पादन में ऐसे संलग्न थे कि रुग्ण शरीर की चिन्ता छोड़कर अपने कुर्कों के साथ माथा-पच्ची कर रहे थे। जो समय ईश्वराराधन में लगना चाहिये था, वह साहित्याराधन में लग रहा था। साहित्य ही उनका आराध्य देव था। उसीके रसानन्द में वह मग्न रहते थे। यों भी उनके इष्टदेव 'व्रजराज' साहित्य की साक्षात् मूर्त्ति ही हैं। ऐसी दशा में यदि जीवन की अन्तिम घड़ी तक उनकी आत्मा साहित्य-रस-निमज्जित होती रही, तो आश्चर्य ही क्या ? अपने परलोक की चिन्ता भूलकर दूसरों के इहलोक का सुख-सम्पादन करना तो कवि का सहज स्वभाव ही है। ईश्वर ने जो उन्हें प्रतिभा की विभूति दी थी, उसके कण-कण का वितरण करके वह अपना मानव-जन्म सफल कर गये। गंगावतरण, उद्धवशतक, बिहारी-रत्नाकर—उनकी कीर्त्ति को सदा उज्ज्वल रक्खेंगे।

कविवर रत्नाकरजी के शरीर का जैसा डीलडौल था, हृदय उससे

गीत

चहकते नयनों में जो प्राण
कौन, किस सुख-जीवन का गान
झल-झल झलमल द्रुत लहरों पर
वीणा के तारों के-से स्वर
क्या मन के चलदल पत्रों पर
अविनश्वर आदान

जग-जीवन की कौन प्यास यह
शिशिर, सरित, ऋतु में विकास यह
क्या चिरकालिक ह्रास, हास यह
विस्मय सञ्चय-ज्ञान
झड़ गया बीज, फिर उगा विटप
यौवन की लिपटी लता सुतट
मिल गये उभय तज तज निज वट
ज्यों मिला ज्योति में ज्ञान

—'निराला'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहीं विशाल था। वास्तव में इन्होंने कवि का हृदय पाया था—बड़े मिलनसार, बड़े हँसमुख, बड़े मज़ाक़-पसन्द! जहाँ कहीं बैठते, व्रजभाषा के कवियों की ही चर्चा करते—'सूर' और 'बिहारी' के पदों और प्रयुक्त शब्दों की जाँच-पड़ताल में ही समय बिताते। एक-एक शब्द की छान-बीन में वह इतनी दिलचस्पी लेते कि उनकी ऊहापोह करने की लगन देखकर आश्चर्य होता। दिन-रात इसी उधेड़बुन में रहा करते कि अमुक शब्द का शुद्ध रूप क्या है—उसका प्रयोग किन-किन अर्थों में कहाँ-कहाँ मिलता है।

व्रजभाषा के पुराने कवियों का जैसा राजसी ठाटबाट सुना जाता है, ईश्वर की दया से व्रजभाषा के अन्तिम कवि माने जाने वाले रत्नाकरजी को भी वही ठाटबाट नसीब था। उनका अधिकांश जीवन अयोध्या के दरबार में ही बीता। ऐश्वर्य, प्रतिष्ठा, यश, सांसारिक सुखभोग—सबों ने मिलकर उनके कवि-जीवन को सन्तोष प्रदान किया। वह सौभाग्यशाली पुरुष थे। दुःख है कि राज-काज से अवकाश ग्रहण कर जब वह अपना सारा समय साहित्यसेवा में लगाने लगे, तब यकायक उनके जीवन-प्रदीप का निर्वाण हो गया। उनसे हिन्दी को अभी दो-चार और अच्छी चीजें मिलने की आशा थी।

जब कलकत्तावाले बीसवें सम्मेलन के वह सभापति हुए थे, तब व्रजभाषा-शब्दकोश का प्रसंग छिड़ने पर उन्होंने कहा था—"हम तो अभी व्रजभाषा का व्याकरण तैयार करने की फ़िक्र में हैं, यदि कोश का काम भी हमारे जीवन में शुरू हो जाय, तो हम उसमें सहायता देने को तैयार हैं।"

हिन्दी की स्वार्थ-सिद्धि में व्याघात पहुँचने से हम लोग उनके लिये शोक-सन्तप्त हो रहे हैं; पर उनकी आत्मा भी हिन्दी की यथेच्छ सेवा करने का समय न पा सकने के कारण चिन्तित ही होगी—ऐसा ही अविचल उनका साहित्यानुराग था। साहित्यानन्दमय भगवान् श्रीकृष्ण किसी उपाय से उनकी साहित्यिक वासना पूरी करके उनकी दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

हिन्दी-प्रचार का साधन—

अब तक हिन्दी-प्रचार के लिये जितने उपाय काम में लाये गये हैं, सबकी सफलता की सीमा अभी तक बहुत संकुचित देखी गई है। किन्तु अन्य उन्नत प्रान्तीय भाषाओं के प्रचार की प्रगति देखने से पता लगता है कि शिक्षित-समाज में जितनी उन भाषाओं की गति है उतनी हिन्दी की नहीं। हिन्दी-प्रधान प्रान्तों के शिक्षित-समाज में हिन्दी की प्रगति बढ़ाने के लिये आवश्यकता इस बात की है कि बँगला, गुजराती आदि भाषाओं ने जिस विधि से अपना विस्तार किया है, उस विधि को हम भी अपनावें। यह स्पष्ट देखने में आता है कि बँगला, गुजराती आदि भाषाओं के प्रमुख साहित्यकारों की उत्तम कृतियाँ अँगरेजी में अनुवादित होकर इतना अधिक प्रचार पाती हैं कि उन भाषाओं के शिक्षित-समाज के अतिरिक्त अँगरेजी-जैसी विश्वव्यापिनी भाषा के साहित्यिकों तक पहुँच जाती हैं। उन भाषाओं के साहित्यिक प्रायः अँगरेजी पत्रों में अपने साहित्य की कुछ-न-कुछ चर्चा किया करते हैं। उनके प्रान्त में ऐसे अँगरेजी पत्र भी हैं जिनके सम्पादकों की वही मातृभाषा है। कौन नहीं जानता कि 'माडर्न रिव्यू' के द्वारा बँगला का कितना अधिक प्रचार बढ़ा और रवीन्द्र तथा सर इक़बाल की प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा में अँगरेजी का कितना हाथ है। यदि हिन्दी की प्राचीन और नवीन उच्च कोटि की रचनाओं के अँगरेजी अनुवाद प्रकाशित किये जायँ, अँगरेजी पत्रों में हिन्दी-साहित्य-सम्बन्धी विद्वत्तापूर्ण लेख लिखे जायँ, तो हिन्दी की व्यापकता भी बढ़ सकती है। राष्ट्रभाषा की दृष्टि से हमें अपनी भाषा को संसार के अन्य साहित्य-मर्मज्ञों के सामने रखने का सम्प्रति यही एक साधन है। इसके लिये संयुक्तप्रान्त में एक सुसम्पादित और प्रभावशाली अँगरेजी मासिक पत्र की जरूरत है। यदि ऐसा साधन मिला तो वर्तमान काल के आलोचकों का फैलाया हुआ यह अप्रामाणिक भ्रम नष्ट हो जायगा कि हिन्दी की वर्तमान प्रगति नकारात्मक है। हिन्दी-प्रधान प्रान्तों के अँगरेजी पढ़े-लिखे बाबुओं से तब हिन्दी अधिक परिचित होगी।

आधुनिक कविता और संगीत—

यह देखा जाता है कि उर्दू की ग़ज़लों और शेरों में संगीत की सुगमता होने से ही जनता में उनका अधिक प्रचार है; किन्तु आधुनिक हिन्दी-कविता में संगीत का बहुत-कुछ अभाव होने से वह सर्वसाधारण जनता में अधिक प्रचार नहीं पाती। हिन्दी के उत्तम कवियों को इधर ध्यान देना चाहिये। कुछ दिनों से हिन्दी की आधुनिक कविताओं में कुछ गेय पद देखने में आ रहे हैं; पर अधिकांश कविताएँ संगीत से शून्य ही देखने में आती हैं। जनता में यदि आधुनिक कविताओं का बहुल प्रचार अभीष्ट है, तो उनमें संगीत का समावेश होना अत्यावश्यक है। संगीत के संयोग से आधुनिक कविताओं के सार्वजनिक उपयोग में जो विशेष सुविधा होगी, उससे वर्तमान युग के सन्देश का तो विस्तार होगा ही, कवियों की लोकप्रियता के साथ-साथ सामूहिक जागृति की भी वृद्धि होगी। आधुनिक काल के प्रसिद्ध कवियों के लिये यह एक प्रकार से देशसेवा का भी अच्छा मार्ग बन सकता है।

क्षमा-प्रार्थना

अकस्मात् ज्वरग्रस्त हो जाने के कारण हम इस अंक में "क्षण-भर" "साहित्य-संसार" "रंगमंच" आदि की सामग्री में प्रस्तुत न कर सके। विश्वास है, पाठक क्षमा करेंगे। श्रीमान् व्यासजी के विदेशी दैनिक पत्र वाले लेख का शेषांश भी इस अंक में छपने से रह गया; क्योंकि वह मसूरी चले गये हैं। आशा है, अगले अंक में सब सामग्री पूरी होगी।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुत्सा

श्रीयुत प्रेमचन्दजी, 'हंस'-सम्पादक

१

अपने घर में आदमी बादशाह को भी गाली देता है। एक दिन मैं अपने दो-तीन मित्रों के साथ बैठा हुआ एक राष्ट्रीय संस्था के व्यक्तियों की आलोचना कर रहा था। हमारे विचार में राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं को स्वार्थ और लोभ से ऊपर रहना चाहिये। ऊँचा और पवित्र आदर्श सामने रखकर ही राष्ट्र की सच्ची सेवा की जा सकती है। कई व्यक्तियों के आचरण ने हमें क्षुब्ध कर दिया था और हम इस समय बैठे अपने दिल का गुबार निकाल रहे थे। संभव था, उस परिस्थिति में पड़कर हम और भी गिर जाते, लेकिन उस वक्त तो हम विचारक के स्थान पर बैठे हुए थे, और विचारक उदार बनने लगे, तो न्याय कौन करे? विचारक को यह भूल जाने में विलंब नहीं होता कि उसमें भी कमज़ोरियाँ हैं और उसमें और अभियुक्त में केवल इतना ही अंतर है कि या तो विचारक महाशय उस परिस्थिति में पड़े ही नहीं, या पड़कर भी अपनी चतुराई से बेदाग़ निकल गये।

पद्मा देवी ने कहा—महाशय 'क' काम तो बड़े उत्साह से करते हैं, लेकिन अगर हिसाब देखा जाय, तो उनके ज़िम्मे एक हज़ार से कम न निकलेगा।

उर्मिला बोली—ख़ैर 'क' को तो क्षमा किया जा सकता है। उसके बाल-बच्चे हैं, आख़िर उनका पालन-पोषण कैसे करे। जब वह चौबीसों घंटे सेवा-कार्य ही में लगा रहता है, तो उसे कुछ-न-कुछ तो मिलना ही चाहिये। उस योग्यता का आदमी ५००) वेतन पर भी न मिलता। अगर इस साल भर में उसने एक हज़ार खर्च कर डाला तो बहुत नहीं है। महाशय 'ख' तो बिलकुल निहंग हैं। "जोरू न जाँता अल्लाह मियाँ से नाता"। पर उनके ज़िम्मे भी एक हज़ार से कम न होंगे। किसी को क्या अधिकार है कि वह ग़रीबों का धन मोटर की सवारी और यार-दोस्तों की दावत में उड़ा दे?

श्यामा देवी उद्दंड होकर बोलीं—महाशय 'ग' को इसका जवाब देना पड़ेगा भाई साहब। यों बचकर नहीं निकल सकते। हम लोग भिक्षा माँग-माँग कर पैसे लाते हैं, इसीलिये कि यार-दोस्तों की दावतें हों, शराबें उड़ाई जायँ और मुजरे देखे जायँ? रोज़ सिनेमा की सैर होती है। ग़रीबों का धन यों उड़ाने के लिये नहीं है। यहाँ पाई-पाई का लेखा समझाना पड़ेगा। मैं भरी सभा में रगेदूँगी। उन्हें जहाँ पाँच सौ वेतन मिलता हो, वहाँ चले जायँ। राष्ट्र के सेवक बहुतेरे निकल आवेंगे।

मैं भी एक बार इसी संस्था का मंत्री रह चुका हूँ। मुझे गर्व है कि मेरे ऊपर कभी किसी ने इस तरह का आक्षेप नहीं किया। पर न जाने क्यों लोग मेरे मंत्रीत्व से संतुष्ट नहीं थे। लोगों का ख़याल था कि मैं बहुत कम समय देता हूँ और मेरे समय में संस्था ने कोई गौरव बढ़ानेवाला कार्य नहीं किया। इस लिये मैंने रूठकर इस्तीफ़ा दे दिया था। मैं उसी पद से बेलौस रहकर भी निकाला गया। महाशय 'ग' हज़ारों हड़प करके भी उसी पद पर जमे हुए हैं। क्या यह मेरे उनसे कुनह रखने की काफी वजह न थी? मैं चतुर खिलाड़ी की भाँति ख़ुद तो कुछ न करना चाहता था, किन्तु परदे की आड़ से रस्सी खींचता रहता था।

मैंने रद्दा जमाया—देवीजी, आप अन्याय कर रही हैं। महाशय 'ग' से ज्यादा दिलेर और..............

उर्मिला ने मेरी बात काटकर कहा—मैं ऐसे आदमी को दिलेर नहीं कहती, जो छिपकर जनता के रुपये से शराब पिये। जिन शराब की दूकानों पर हम धरना देने जाते थे, उन्हीं दूकानों से उनके लिये शराब आती थी। इससे बढ़कर बेहयाई और क्या हो सकती है? मैं तो ऐसे आदमी को देश-द्रोही कहती हूँ।

मैंने रस्सी और खींची—लेकिन यह तो तुम भी मानती हो कि महाशय 'ग' केवल अपने प्रभाव से हज़ारों रुपये चंदा वसूल कर लाते हैं। विलायती कपड़े को रोकने का उन्हें जितना श्रेय दिया जाय, थोड़ा है।

उर्मिला देवी कब माननेवाली थीं। बोलीं—उन्हें चंदे इस संस्था के नाम पर मिलते हैं। व्यक्तिगत रूप से धेला भी लावें तो कहूँ। रहा विलायती कपड़ा। जनता नामों को पूजती है और महाशय की तारीफें हो रही हैं; पर सच पूछिये तो यह श्रेय हमें मिलना चाहिये। वह तो कभी किसी दूकान पर गये भी नहीं। आज सारे शहर में इस बात की चर्चा हो रही है। जहाँ चंदा माँगने जाओ, वहीं लोग यही आक्षेप करने लगते हैं। किस-किस का मुँह बंद कीजियेगा। आप बनते तो हैं जाति के सेवक, मगर आचरण ऐसे कि शोहदों का भी न होगा। देश का उद्धार ऐसे विलासियों के हाथों नहीं हो सकता। उसके लिये सच्चा त्याग होना चाहिये।

२

यही आलोचनाएँ हो रही थीं कि एक दूसरी देवी आईं—भगवती। बेचारी चंदा माँगने गई थीं। थकी-माँदी चली आ रही थीं। यहाँ जो पंचायत देखी, तो रम गईं। उनके साथ उनकी बालिका भी थी। कोई दस साल उम्र होगी। इन कामों में बराबर माँ के साथ रहती थी। उसे ज़ोर की भूख लगी हुई थी। घर की कुंजी भी भगवती देवी के पास थी। पति-देव दफ़्तर से आ गये होंगे। घर का खुलना भी ज़रूरी था। इसलिये मैंने बालिका को उसके घर पहुँचाने की सेवा स्वीकार की।

कुछ दूर चलकर बालिका ने कहा—आपको मालूम है, महाशय 'ग' शराब पीते हैं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं इस आक्षेप का समर्थन न कर सका। भोली-भाली बालिका के हृदय में कटुता, द्वेष और प्रपंच का विष बोना मेरी ईर्ष्यालु-प्रकृति को भी रुचिकर न जान पड़ा। जहाँ कोमलता और सारल्य, विश्वास और माधुर्य का राज्य होना चाहिये, वहाँ कुत्सा और क्षुद्रता का मर्यादित होना कौन पसंद करेगा; देवता के गले में काँटों की माला कौन पहनायेगा ?

मैंने पूछा—तुमसे किसने कहा कि महाशय 'ग' शराब पीते हैं ?

वाह, पीते ही हैं, आप क्या जानें !

तुम्हें कैसे मालूम हुआ ?

सारे शहर के लोग कह रहे हैं।

शहरवाले झूठ बोल रहे हैं।

बालिका ने मेरी ओर अविश्वास की आँखों से देखा। शायद वह समझी, मैं भी महाशय 'ग' के ही भाई-बंदों में हूँ।

आप कह सकते हैं, महाशय 'ग' शराब नहीं पीते ?

हाँ, वह कभी शराब नहीं पीते।

और महाशय 'क' ने जनता के रुपये भी नहीं उड़ाये ?

यह भी असत्य है।

और महाशय 'ख' मोटर पर हवा खाने नहीं जाते ?

मोटर पर हवा खाना कोई अपराध नहीं है।

अपराध नहीं है राजाओं के लिये, रईसों के लिये, अफ़सरों के लिये, जो जनता का खून चूसते हैं। देश-भक्ति का दम भरने वालों के लिये वह बहुत बड़ा अपराध है।

लेकिन यह तो सोचो, इन लोगों को कितना दौड़ना पड़ता है। पैदल कहाँ तक दौड़ें ?

पैरगाड़ी पर तो चल सकते हैं ! यह कुछ बात नहीं है। ये लोग शान दिखाना चाहते हैं, जिसमें लोग समझें, यह भी बहुत बड़े आदमी हैं। हमारी संस्था ग़रीबों की संस्था है। यहाँ मोटर पर उसी वक्त बैठना चाहिये, जब और किसी तरह काम ही न चल सके। और, शराबियों के लिये तो यहाँ स्थान ही न होना चाहिये। आप तो चंदे माँगने जाते नहीं। हमें कितना लज्जित होना पड़ता है, आपको क्या मालूम !

मैंने गंभीर होकर कह—तुम्हें लोगों से कहा देना चाहिये, यह सरासर ग़लत है। हम और तुम इस संस्था के शुभचिंतक हैं। हमें अपने कार्यकर्ताओं का अपमान करना उचित नहीं। हमें तो इतना ही देखना चाहिये कि वे हमारी कितनी सेवा करते हैं। मैं यह नहीं कहता कि 'क, ख, ग' में बुराइयाँ नहीं हैं। संसार में ऐसा कौन है जिसमें बुराइयाँ न हों ? लेकिन बुराइयों के मुक़ाबले में उनमें गुण कितने हैं, यह तो देखो। हम सभी स्वार्थ पर जान देते हैं—मकान बनाते हैं, जायदाद ख़रीदते हैं। और कुछ नहीं, तो आराम से घर में सोते हैं। ये बेचारे चौबीसों घंटे देश-हित की फ़िक्र में डूबे रहते हैं। तीनों ही साल-साल-भर की सज़ा काटकर, कई महीने हुए, लौटे हैं। तीनों ही के उद्योग से अस्पताल और पुस्तकालय खुले, इन्हीं वीरों ने आंदोलन करके किसानों का लगान कम कराया। अगर इन्हें शराब पीना और धन कमाना होता, तो इस क्षेत्र में आते ही क्यों ?

बालिका ने विचारपूर्ण दृष्टि से मुझे देखा। फिर बोली—यह बताइये, महाशय 'ग' शराब पीते हैं या नहीं ?

मैंने निश्चयपूर्वक कहा—नहीं। जो यह कहता है, वह झूठ बोलता है।

भगवती देवी का मकान आ गया। बालिका चली गई। मैं आज झूठ बोलकर जितना प्रसन्न था, उतना कभी सच बोलकर भी न हुआ था। मैंने एक बालिका के निर्मल हृदय को कुत्सा के पंक में गिरने से बचा लिया था।

आस्कर वाइल्ड

श्रीलक्ष्मीकान्त झा

आस्कर वाइल्ड की तरह बदनामी भी और तारीफ़ भी अँगरेजी के बहुत कम लेखकों की हुई है। एक ओर तो वाइल्ड की रचनाएँ चरित्र-हीन कहाती थीं, दूसरी ओर इसकी गणना इंगलैंड के सर्वश्रेष्ठ कलाकारों में होती थी। इन परस्पर-विरोधी सम्मतियों की उत्पत्ति का मूल कारण था वाइल्ड का व्यक्तित्व। जब तक वाइल्ड जीता रहा, इसके मित्र इससे ऐसा रीझ गये थे कि वे इसके कोई भी दोष नहीं देख पाते थे। दूसरी ओर वाइल्ड के शत्रु इससे इतना नाराज़ थे कि इसमें एक भी गुण नहीं देख पाते थे। इसके शत्रु थे भी बड़े प्रभावशाली। वाइल्ड की गिरफ्तारी के बाद उन्होंने इसको साहित्यिक-पद से हटाने के लिये कुछ भी उठा न रक्खा। पर उसके बाद प्रवाह ने दिशा बदली। 'डि प्रोफन्डिस' के प्रकाशन के बाद महासमर छिड़ने तक में वाइल्ड की गणना महारथियों (Classics) में होने लगी थी। उसके कठोर दण्ड के कारण जनता ने उसे शहीद का पद दिया। कुछ लोगों ने तो यहाँ तक कह डाला कि यदि वाइल्ड को सज़ा न मिलती तो लोग उसे भूल जाते।

पर आज हम वाइल्ड को निष्पक्ष दृष्टि से देख सकते हैं और देख कर यह कह सकते हैं कि वाइल्ड की दुःख-कहानी भूल जाने पर भी लोग उसकी रचनाओं को न भूलेंगे।

वाइल्ड का जन्म सन् १८५४ की १६वीं अक्तूबर को डबलिन शहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में हुआ था। इसके पिता कुछ बदनाम हो गये थे। इसकी मा कुछ लिखा करती थीं। ९ वर्ष की उम्र में आस्कर स्कूल भेजा गया। वहाँ यह परले सिरे का आलसी निकला। खेल-कूद में भी यह भाग नहीं लेता था; क्योंकि इसे "लात मारना और लात खाना दोनों नापसन्द था।" पर इसे साहित्य से प्रेम था। ग्रीक में यह बड़ा ही तेज निकला। १८७४ में इसे छात्रवृत्ति मिली और यह आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी में भर्ती हुआ। इसने प्रथम श्रेणी में ग्रीक आदि साहित्यों की परीक्षा पास की। इसकी एक रचना के लिये उसे 'न्यूडिगेट' पुरस्कार मिला।

आक्सफोर्ड छोड़ने के बाद वाइल्ड को पैसे की फिक्र पड़ी। इसकी आय इसके व्यय के लिये यथेष्ट न थी। मारिस, व्हिस्लर, इर्विन्, एलेन-टेरी आदि उस समय के सभी विख्यात व्यक्तियों से इसकी घनिष्टता हो गई, पर उनके साथ रहने के लिये पैसे की आवश्यकता और भी बढ़ी। अतः इसने एक कविता की किताब लिखी जिसमें इसने सब कवियों से प्राचीन और अर्वाचीन भाव चुराये थे। समालोचकों ने पुस्तक की बड़ी निन्दा की। पर बदनाम होने से भी नाम होता है। किताब चल निकली।

कविता-पुस्तक की बिक्री बढ़ाने के लिये वाइल्ड लन्दन की सड़कों पर विचित्र पोशाक पहन कर घूमता! सारे लन्दन में इसकी चर्चा होने लगी। इसपर कार्टून निकले, मजाक बनाये गये, थपोड़ियाँ पीटी गईं। पर इसकी किताब खूब बिकी। किताब की आमदनी समाप्त होने पर इस ने अमरीका और इंगलैंड में व्याख्यान देकर कुछ दिनों तक खर्च चलाया।

१८८४ में इसने शादी की। '८५ और '८६ में इसके एक एक लड़का भी हुआ। विवाह से इसे कुछ सम्पत्ति मिली थी। अतः शादी के तीन-चार वर्ष बाद तक इसने कुछ समालोचनाओं को छोड़ और कुछ नहीं लिखा। पर इसकी लेखनी के चुप रहने पर भी, इसका मुँह बन्द नहीं था। इसकी बातचीत को सुनने के लिये इसे लोग सदा निमन्त्रित करते थे। कारण, बातचीत करने की इसमें अद्भुत प्रतिभा थी। यह जो कुछ कहता उसे कहावत का रूप मिल जाता। लोग इसकी बातचीत से वाक्य उद्धृत करते। इसके मजाक नामी हो गये। इसके विनोद-सूत्र (Epigrams) और स्वविरोधी वाक्य (Paradox) पत्रों में प्रकाशित होने लगे। इसकी कहानियाँ घर-घर में प्रवेश कर गईं। पर, इसकी बातचीत कार्लाइल, जानसन और कालरिज की बातचीत की तरह नहीं होती थी। यह दूसरों को भी बोलने का मौका देता था। अवसर के अनुसार इसकी शैली भी बदल जाती थी। विलियम मारिस से लेकर बर्नार्ड शा तक जिन लोगों ने इसे देखा था सभी ने इसकी बातों के जादू की प्रशंसा की है। बातचीत करने में इसके बराबर शक्ति रखनेवाले दूसरे किसी का पता नहीं चलता।

कोई भी विषय हो, वाइल्ड उसे अपने व्यक्तित्व के प्रभाव से आकर्षक बना दे सकता था। उसके परम मित्र राबर्ट रास ने एक बार उसकी और शा की तुलना करते हुए कहा—"मैं एक बार बर्नार्ड शा के साथ चार्टरेस थेडूकैल में गया। शा ने मुझे वहाँ की शीशे की खिड़कियों की कारीगरी के सम्बन्ध में प्रश्न करना शुरू किया। एक घंटे तक शा को उत्तर देते-देते मैं बिल्कुल थक कर शक्ति-हीन हो गया। पर यदि आस्कर रहता तो वह मुझसे प्रश्न पूछने के बदले उसी दम उन खिड़कियों के सम्बन्ध में मनगढ़न्त कहानियाँ सुनाने लगता और दो घण्टे सुनने के बाद भी हम और कहानियाँ सुनने के लिये लालायित रहते।'

पर अपने मित्रों के दुर्भाग्य और हमारे सौभाग्य से वाइल्ड बातचीत करके ही जी नहीं सकता था। १८८७ से ८९ तक उसने "वमेन्स-वर्ल्ड" का सम्पादन किया। इधर उसने अनेक कहानियाँ भी लिखीं जिनमें 'लार्ड आर्थर सेवाइल्सक्राइम' सबसे अच्छी है। उसकी रचना 'इन्टेन्शन्स' (Intentions) भी इसी समय प्रकाशित हुई थी। इसमें वार्त्तालाप के रूप में उसने सौंदर्य, कला और आलोचना पर अपने विचार प्रकट किये हैं। इसमें आलोचकों के लिये एक नये पथ का प्रदर्शन किया गया है। अपनी बातचीत के गम्भीर और विचारपूर्ण अंशों का इसमें उसने बड़ा ही सुन्दर संकलन किया है। उसके शब्दालंकार और आडम्बरपूर्ण शैली के भीतर बड़े ही गम्भीर और उच्च विचार दिये हुए हैं। सन् १८९० में वाइल्ड का एकमात्र उपन्यास "दि पिक्चर अफ डोरियन ग्रे" (The Picture of Dorian Gray) एक पत्र में प्रकाशित हुआ। साल भर बाद इसका परिवर्धित संस्करण पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ। फिर क्या था, अँगरेज समालोचक बिगड़ खड़े हुए। वाइल्ड ने इन आलोचनाओं का उत्तर दिया—बड़ी जिंदादिली के साथ। समालोचक और बिगड़े। उन्होंने इस रचना को चरित्र-हीन समझा।

यह स्वाभाविक था। अँगरेजों में किसी नवीन वस्तु के अपनाने का साहस कभी न था। शेक्सपियर से लेकर शा तक सब पहले-पहल बहिष्कृत रहे। यह पुस्तक अगर मौलिक न होकर अनुवादित होती, अथवा वाइल्ड की न होकर किसी लब्धप्रतिष्ठ महारथी की होती तो वे चुपचाप इसे अपना लेते। पर इसे तो उन्होंने घासलेटी समझा।

खैर, अँगरेज समालोचकों की भी आँखें कुछ दिनों बाद, जब यह रचना नवीन न रही, खुली। हेस्केथ पियर्सन ने इसके सम्बन्ध में लिखा है—

"The moral is driven home with crude pulpit-punch that should satisfy a Salvationist."

बात ठीक है। इसका उपदेश इतने अनावश्यक जोर के साथ प्रकट किया गया है कि हम इसे कला की दृष्टि से दोष ही कहेंगे। नहीं तो हम इस कलापूर्ण रचना को निर्दोष कह सकते थे। इसमें लार्ड हेनरी वाटन का चित्र वाइल्ड का चित्र है। इस चरित्र-चित्रण में वाइल्ड ने अपनी वाक्-शक्ति का भी बड़ा अच्छा चित्र खींचा है। इसके सम्बन्ध में यह कह देना आवश्यक है कि इसमें जहाँ कृत्रिमता नहीं है वहाँ असलियत भी नहीं। कारण, वाइल्ड को जीवन की असली बातों का अनुभव तो पीछे जेल में जाकर हुआ। अब तक उसका जीवन कृत्रिम ही था।

सन् १८९१ में वाइल्ड की "The soul of man under socialism" 'दि फोर्टनाइटली रिव्यू' में प्रकाशित हुई। बात यह थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि एक मित्र वाइल्ड को साम्यवाद पर बर्नार्ड शा का भाषण सुनने ले गये। वाइल्ड ने साम्यवाद की टेढ़ी अर्थशास्त्र-सम्बन्धी पहेलियों के समझने का प्रयत्न न कर साम्यवाद पर यह सुन्दर निबन्ध लिखा जिसमें-राबर्ट रास के शब्दों में—"जितने विषयों पर शिक्षित मनुष्य विचार करते हैं सब पर प्रकाश डाला गया है। प्रत्येक विषय पर कोई-न-कोई महत्वपूर्ण उक्ति इसमें अवश्य ही है।"

अब वाइल्ड ने फ्रांस में रहने का निश्चय किया। उसने कहा कि अब हम इंगलैंड न लौटेंगे। उसने इसी समय फ्रेंच भाषा में Salome (सैलोमे) नाम का नाटक लिखा। इस नाटक के कारण वाइल्ड को अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हुई। जर्मनी में जितने दिनों तक इस नाटक का अभिनय हुआ उतने दिनों तक लगातार किसी अंगरेज के नाटक का अभिनय नहीं हुआ—शेक्सपियर का भी नहीं। पर यह सफलता तो पीछे १९०१ में हुई। जब यह लिखा गया उस समय सेन्सर ने इसका अभिनय पैलेस थिएटर लन्दन में न होने दिया। इससे लाभ ही हुआ। अब वाइल्ड ने इस प्रकार की रचना छोड़ प्रहसन आदि लिखना आरम्भ किया। "Lady Windermere's Fan," "A Woman of No Importance", "An Ideal Husband" तीनों नाटक क्रमशः प्रकाशित और अभिनीत हुए। तीनो को बड़ी सफलता मिली। वाइल्ड की चर्चा साहित्य-क्षेत्र में और बाजार में भी बड़े जोरों से होने लगी। पर इस सफलता से जो धन मिला उसके कारण वाइल्ड में अनेक दोष आ गये। वह दूसरों को अपने से नीचा समझने लगा और अनेक व्यसनों ने उसी समय उसे आ घेरा। उसने समालोचकों की उपेक्षा करनी शुरू की—यही, नहीं उसके नाटकों के अभिनेता भी धीरे-धीरे उससे असन्तुष्ट होने लगे।

ये तीनो नाटक जनता की रुचि तृप्ति करने के लिये लिखे गये थे। इनमें वाइल्ड ने केवल लोगों को खुश करने के लिये उनकी पसन्द के ढंग का दृश्य रक्खा था और इन्हें अपनी सूक्तियों से सुसज्जित भी किया था। पर अपने व्यक्तित्व को यथासम्भव पर्दे की ओट में ही रक्खा था। इस प्रकार अपनी रुचि से नहीं, बल्कि जनता की रुचि से नाटक लिखना वाइल्ड को कब तक गवारा हो सकता था। उसने १८९४ में The Importance of Being Earnest लिखा। यह नाटक क्या है, हँसी-खुशी के संसार से हँसी-खुशी से भरी हुई 'कठिनाइयों' का हँसाने और खुश करने-वाला चित्र है। इस ढंग का नाटक किसी भी साहित्य में कभी इतनी सफलता के साथ नहीं लिखा गया।

पर इसके बाद ही वाइल्ड के हँसी-खुशी से भरे संसार में भयंकर विपत्ति ने प्रवेश किया। वाइल्ड ने मार्किस क्वीन्सबरी से लड़ाई ठानी। फलतः सारा समाज उसका विरोधी हो गया। वाइल्ड गिरफ्तार कर लिया गया।—अस्वाभाविक व्यभिचार के अभियोग में इसपर मुकदमा चला। जुरी में मतभेद के कारण पहले मुकदमे में वाइल्ड छूट गया—पर दूसरी बार उसे दो वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड दिया गया।

वाइल्ड का यह चरित्र-दोष उसके वंश के एक पुराने परम्परागत मानसिक रोग के कारण ही उत्पन्न हुआ था। इस विषय पर विशेषज्ञों ने बहुत जाँच की है, और सबका यही मत है कि दो वर्ष का कठिन दण्ड बहुत ही कठोर था।

जेल के अठारह महीने बड़े कष्टमय रहे, क्योंकि वाइल्ड के शत्रुओं का प्रभाव जेल के अफसरों पर भी बहुत था। पर अन्तिम छः महीनों में जेलर की बदली हो जाने के कारण वाइल्ड को लिखने-पढ़ने का साधन प्राप्त हुआ।

पर वाइल्ड की गिरफ्तारी के बाद से ही लोकमत ने बिल्कुल पलटा खाया। इसकी लोक-प्रियता जाती रही। करीब-करीब सब लोग इसे और इसकी रचनाओं को भ्रष्ट और घासलेटी कहने लगे।

जेल-जीवन में वाइल्ड में कुछ धार्मिकता आ गई थी, जो उसके जेल से लिखे एक पत्र में, जो कि De Profundis के नाम से प्रकाशित हुआ है, बड़ी शक्ति के साथ प्रकट हुई है। पर जेल से छूटने के बाद उसमें फिर वही पुरानी नास्तिकता आ गई थी।

१८९८ में The Ballad of the Reading Gaol प्रकाशित हुई। फौरन इसे लोगों ने श्रेष्ठ पद प्रदान किया। इसके सम्बन्ध में जी० के० चेस्टर्टन ने लिखा है—"इसमें न्याय और भ्रातृ-भाव की जो पुकार है, वह इतनी गहरी, इतनी सच्ची है, जितनी गंभीरता और सत्यता बर्नार्ड शा के पृष्ठों में प्रकट किये साम्यवादियों के निर्भीक-से-निर्भीक उद्गारों में भी नहीं।"

वाइल्ड ने इसके अलावा जेल-जीवन के सुधार पर दो चिट्ठियाँ भी 'डेली क्रानिकल' में लिखी। पर इसके बाद—रुपया उधार लेने के समय किये गये हस्ताक्षर के सिवा—शायद ही इसने कुछ लिखा हो।

सन् १९०० में वाइल्ड का देहान्त हुआ। पर अन्त समय तक आर्थिक संकट के समय में भी, वाइल्ड हसता और हँसाता ही रहा। एक फ्रेञ्च लेखिका ने वाइल्ड से कहा—"आपको मानना पड़ेगा कि मैं फ्रांस भर में बदसूरत हूँ।"

वाइल्ड ने उत्तर दिया—"फ्रांस में नहीं, सारे संसार में आप सबसे बदसूरत हैं।"

किस्मत ने वाइल्ड के साथ बड़ा ही दुर्व्यवहार किया। एक तो उसको ऐसी तीक्ष्ण लेखनी दी, फिर फ्रांस के बजाय उसका जन्म इंगलैंड में दिया, और वह भी महारानी विक्टोरिया के समय में। नहीं तो ऐसे प्रतिभाशाली लेखक की कहानी राम-कहानी न कहाती।

आस्कर वाइल्ड की रचनाओं का अध्ययन करने के लिये ये पुस्तकें अच्छी हैं—The Picture of Dorian Gray, The Ideal Husband, The Importance of Being Earnest, The Critic as an Artist, The Soul of Man Under Socialism.❀

❀ [इन पुस्तकों का संस्करण अलग-अलग Methuen Co. द्वारा हुआ है। पर प्रधान रचनाएँ Collins Company द्वारा तथा I. M. Dent & Sons के Everyman's Library में सस्ते में एकत्र प्रकाशित हुई हैं।]—लेखक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोशाक

श्रीयुत गुलाबरायजी, एम० ए०, एल-एल० बी०

समाज में वस्त्राभरण और वेशभूषा का विशेष मूल्य है। यद्यपि समाज में विष-भरे कनक-घटों का अभाव नहीं है और बाह्य तथा अन्तर में बहुत-सा अन्तर देखा जाता है, तथापि मनुष्य की बाह्यता का बहुत कुछ प्रभाव पड़ता है। जो लोग बाह्यता का तिरस्कार करते हैं वे भी तिरस्कार को अपनी स्वतंत्रता और अपनी आत्म-निर्भरता का द्योतक मानकर बाह्य की व्यञ्जन-शक्ति को स्वीकार करते हैं। अच्छे कपड़े पहने हुए अश्वारोही पुरुष को प्रायः सभी लोग अभिवादन करते हैं (यद्यपि उसका उन लोगों से कोई सम्बन्ध भी न हो) क्योंकि इस प्रकार के वेषधारी प्रायः शासन से सम्बन्ध रखनेवाले समझे जाते हैं। तिलकछाप और माला को देखकर प्रायः सभी धार्मिक लोग उनके धारण करनेवाले को दण्डवत्-प्रणाम करने लग जाते हैं, चाहे उनका परिचय हो या न हो। क्लब में बैठे हुए न्यायाधीश से चाहे जो कोई हँसी-मज़ाक कर ले, किन्तु न्यायासन पर बैठे हुए न्यायाधीश से कोई अपनी अतिपरिचयता का परिचय नहीं देता। राममूर्ति अपने बल से अल्पवेगवाली मोटर को रोकते हैं, किन्तु पुलिस के सिपाही की श्वेत-वस्त्राच्छन्न भुजा का उठाना ही ६० मील की तेज़ी से जानेवाली मोटरकार को रोकने के लिये पर्याप्त है। फौजी वर्दी पहन कर कायर भी अपने को योद्धा समझने लग जाता है। यद्यपि बाह्य आडम्बर निन्दनीय समझा जाता है तथापि उसके अभाव के कारण बहुत से धूल भरे हुए हीरे अजान द्वारा तो पाँव से मले ही जाते हैं और कभी-कभी जानकार जौहरी भी उनको पैरों से ठुकरा देता है; किन्तु अँगूठी में जड़े हुए मखमल-केस में स्थापित हीरक-कन अपने जात्युचित सम्मान को प्राप्त होता है। यद्यपि यह बात माननी पड़ेगी कि "तावत् शोभते मूर्खो यावत्लम्बशाटपटावृतः" तथापि अलम्बशाटपटावृतः कालिदास ऐसा विद्वान् (स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान्सर्वत्र पूज्यते) एक बार तो राजा भोज के चाकरों द्वारा अपमानित हो ही जाता है। फिर चाहे भाग्यवश राजा के व्याकरण-विरुद्ध भाषण करने पर तथा उसके यह कहने पर कि "भारन्न बाधते राजन् यथा बाधति बाधते" वह अपना उचित आदर पाता है। यदि राजा व्याकरण-विरुद्ध न बोलते और कालिदास को टोकने का अवसर न मिलता तो शायद पालकी के भार से उनका कन्धा किराये के बैल की भाँति जख़्मी हो जाता और उन दिनों कोई (Cruelty to Animals Act) 'पशुओं पर बेरहमी का कानून' भी जारी न था जो उनको उस आपत्ति से छुटकारा दिलाता।

यह बात सभी लोग जानते हैं कि सिपाही लड़ते हैं न कि उनकी वर्दी। और मूँड़ मुँड़ाने से मनुष्य संन्यासी नहीं बन जाता; न भगवा कपड़ा इस बात का प्रमाण है कि इस मनुष्य के हृदय में कपट की छुरी नहीं चल रही है। बगुलाभगत की तो लोकोक्ति प्रसिद्ध ही है। माँगे हुए कपड़े चाहे दूसरों को धोखे में डाल दें; किन्तु धन-सम्पत्ति नहीं उत्पन्न कर सकते, और इसी प्रकार फटे हुए कपड़े भी मनुष्य की सम्पत्ति का नाश नहीं कर देते। राजा फटे हुए कपड़ों में भी राजा रहता है और बहुरूपिया या नाटक के पात्र उत्तम पोशाक धारण करते हुए भी राज्य श्री को नहीं प्राप्त होते। फिर समाज में बाह्यभूषा और कपड़ों का इतना आदर क्यों? क्या समाज में सत्य की अपेक्षा आडम्बर का अधिक मान है? यदि ऐसा नहीं है तो कपड़ों का इतना क्यों मूल्य?

कपड़ा मनुष्य का उचित स्थान सूचित करने की भाषा है। वर्दी शासन-कार्य में नियुक्त होने का प्रमाण-पत्र है। यद्यपि बहुत-से प्रमाण-पत्रों की भाँति ये प्रमाण-पत्र भी झूठे हो सकते हैं तथापि ये समाज में प्रवेश कराने के लिये पर्याप्त होते हैं, फिर मनुष्य की व्यक्तिगत योग्यता उन प्रमाण-पत्रों की शोभा को बढावे और चाहे लज्जित करे। यद्यपि बाह्य भ्रमात्मक होता है तथापि मनुष्य बाह्य को देख सकता है। वही मनुष्य का सहारा है। बाह्य, भाषा की भाँति, कुछ अंश में, अन्तर को तिरोहित करता है और कुछ अंश में प्रकट। जिस अंश में बाह्य अन्तर को प्रकट करने में समर्थ होता है उसी अंश में उसका महत्व है। अन्तर को प्रकट करने के लिये बाह्य की आवश्यकता रहती है। मनुष्य अन्तर की तह तक नहीं पहुँच सकता। अन्तर तक पहुँचने के लिये केवल एक बाह्य का सहारा है। हमारी पोशाक भाषा की भाँति अन्तर की द्योतक होती है। केवल अन्तर ही की द्योतक नहीं होती वरन् समाज में हमारे स्थान का परिचायक होती है। वह एक प्रकार का चिह्न है जिससे कि मनुष्य पहचाना जाता है। यद्यपि कभी-कभी धोखा हो जाता है तथापि अनेक अंश में बंगाली और पंजाबी की पहचान उसकी पोशाक से हो जाती है। नाटक के पात्र अनेक-रूप से भेष बदला करते हैं, किन्तु मनुष्य के जीवन का अधिकांश भाग नाटक नहीं है। वह सत्य है। ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य अपनी-अपनी पोशाकों से पहचान लिये जाते हैं। हर-एक पेशेवालों की पृथक्-पृथक् वेश-भूषा होती है। खानसामों की पोशाक कुलियों से भिन्न होती है और कुलियों की रेलवे-क्लर्कों से भिन्न होती है। वर्दी के कारण क्लर्क से असबाब उठाने के लिये नहीं कहते और कुली से टिकट बदलवाने या गाड़ी रिज़र्व करने के लिये नहीं प्रार्थना करते; वैसे ही न साधु को रुपया उधार देने को कहते हैं और न सेठ को भिक्षा देने के लिये पुकारते हैं। कपड़े-लत्ते का खयाल न हो तो शायद बहुत-से सेठ दान लेने के लिये तैयार हो जावें। हर-एक को वेष की लाज रखनी पड़ती है। सूट पहनकर भिक्षा माँगते अच्छा नहीं लगता। हर-एक प्रकार की पोशाक कुछ न कुछ अर्थ रखती है। संन्यासियों के गेरुआ वस्त्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनके त्याग के सूचक हैं। गेरू का सम्बन्ध मिट्टी से है। वे अपने शरीर को भी मिट्टी समझते हैं। धार्मिक लोगों की लम्बी पोशाक इस बात की द्योतक होती है कि वे आध्यात्मिक को, जिसका स्वरूप अनन्त तथा विस्तारमय है, आधिभौतिक से अधिक प्रधानता देते हैं।

विलायत की धार्मिक स्त्रियाँ (Nuns) अपने अंग को बिलकुल ढँका रखती हैं, यहाँ तक कि गला भी ढका रहता है। वह पोशाक इस बात की द्योतक है कि वे शरीर को हेय समझती हैं। आधुनिक विलायत की स्त्रियों की पोशाक स्वतंत्रता और शरीर के आदर की द्योतक हैं। वर्तमान सभ्यता की कटी-छटी पोशाक स्वतन्त्रता एवं शरीर की प्रधानता की सूचक हैं। आजकल काट ऐसी की जाती है कि शरीर अच्छा जँचे। आजकल के कपड़े शरीर को छिपाते नहीं हैं वरन् उसको अच्छा जँचाने की कोशिश करते हैं। सीधी लम्बी पोशाक में शरीर का उतार-चढ़ाव जँचता नहीं है, इसीलिये धार्मिक लोग इसे पसन्द करते हैं। इसी प्रकार सिपाही की पोशाक चुस्ती की द्योतक होती है। वह ऐसी पोशाक होती है जो बतलाती है कि यह आदमी आराम करने के लिये नहीं है, काम करने के लिये है और यह ख़तरे का सामना करेगा। इसी प्रकार न्यायाधीशों, वकीलों, बारिस्टरों का लम्बा गाउन बुद्धिमत्ता और ज्ञान का व्यञ्जक होता है। साधारण लोगों में चटकीले-भड़कीले कपड़े इस बात के द्योतक होते हैं कि पहिननेवाला और लोगों को अपनी ओर आकर्षित करना चाहता है। इसके पास और कोई गुण नहीं जिससे वह किसी को आकर्षित कर सके। भड़कीले कपड़े बालकों में उनकी प्रसन्नता और प्रफुल्लता के द्योतक होते हैं। सब चीज़ें सब काल में अच्छी नहीं लगतीं। जो बात चटकीले-भड़कीले कपड़ों की लिखी गई है वह उन्हीं कपड़ों की है जो उग्र रूप से चटकीले-भड़कीले हों। वैसे तो वातावरण के कारण पश्चिमी और पूर्वी देशों की पोशाक में रंग का अन्तर रहता है। योरपीय देशों का वातावरण प्रायः धुँधला मेघाच्छादित-सा रहता है। इसीलिये वहाँ काले, भूरे, ख़ाकी रंगों के कपड़े पहिने जाते हैं। वे वहाँ के वातावरण से मिल जाते हैं। यहाँ पर सूर्य्य की चमक से प्राकृतिक वस्तुओं के रंग-बिरंगेपन के कारण ज़रा खुलते हुए रंगों के कपड़े वातावरण के विरुद्ध नहीं मालूम होते। जिस प्रकार खद्दर में आत्मनिर्भरता और देश-भक्ति की मुहर (छाप) रहती है (इसका यह अभिप्राय नहीं कि जो खद्दर नहीं पहिनते वह देशभक्त नहीं होते), उसी प्रकार लम्बे रेशमी कुर्तों में दूर अछोर अनन्त की ओर ले जानेवाले छायावाद की झलक रहती है।

पोशाक सभ्य समाज में एक प्रकार की मूक भाषा है। वह आपकी रुचि और आदर्शों का परिचय देती है। उसके कारण सामाजिक कारबारों में बहुत कुछ सहायता मिलती है। यह सहायता तभी तक है जब तक कि वह स्वाभाविक पोशाक भ्रमात्मक परिचय नहीं देती और न मनुष्य की स्वतन्त्रता में बाधा ही डालती है।

प्रत्येक देश के वातावरण के अनुकूल वहाँ की पोशाक रहती है। हमारे देश में मोज़े और पाजामा का प्रचार न था; क्योंकि पैरों को शीत से बचाने की उतनी आवश्यकता न थी। आदत पड़ जाने से आवश्यकता प्रतीत होना दूसरी बात है। पोशाक जहाँ तक हो, ऐसी होनी चाहिये, जो हमारे जीवन के ध्येय के अनुकूल हो, जिससे हमारे आत्म-गौरव को धक्का न पहुँचे और जो हमारे लिये स्वाभाविक हो। स्वाभाविक पोशाक हमारे आत्म-गौरव की रक्षा करती हुई समाज में हमारा उचित स्थान बतलाती है, हमारी शारीरिक स्फूर्ति और मानसिक उत्साह का कारण होती है।

——श्रीमान् कविवर 'निराला' जी ने कलकत्ते के नवजात हिन्दी-साप्ताहिक 'रँगीला' का सम्पादकत्व त्याग दिया। आजकल वह अपने घर पर (गढ़ाकोला, मँगरैर, उन्नाव, यू० पी०) हैं।——स्वनामधन्य राष्ट्रभाषा-भक्त बाबू शिवप्रसाद गुप्त लखनऊ जेल से छूटकर गत १ जुलाई को मसूरी गये और वहाँ से एक पखवारे में काशी आनेवाले हैं।—बिहार के सुविख्यात राष्ट्रभाषानुरागी बाबू राजेन्द्रप्रसादजी हजारीबाग जेल से गत २४ जून को छूटकर पटना पहुँचे, आप अस्वस्थ हैं।—इसी जुलाई के अन्त में प्रयाग के "भूगोल" मासिक पत्र का "भुवन-कोषाङ्क" नामक विशेषांक निकलनेवाला है।—स्वदेशी-सम्बन्धी राष्ट्रीय कविताओं पर २५), १५) और ११) के जो तीन पुरस्कार आगरा-स्वदेशी-संघ द्वारा गत २१ जून को दिये जानेवाले थे, उनकी अवधि १५ जुलाई तक बढ़ा दी गई है। सार्वजनिक गान के योग्य सुन्दर कविताएँ आगरा-नागरी-प्रचारिणी सभा के मंत्री श्रीमहेन्द्रजी के पास निश्चित अवधि के पूर्व ही पहुँच जानी चाहिये।——गत मास में बलिया की नागरी-प्रचारिणी सभा के उत्साही कार्य-कर्त्ता और होनहार हिन्दी-लेखक ठाकुर विन्ध्येश्वरीप्रसाद सिंह 'विशारद' का देहान्त हो गया।—'प्रताप' के उत्साही संचालकों ने निश्चय किया है कि शीघ्र ही 'प्रताप' का दैनिक संस्करण पुनः प्रकाशित किया जाय। प्रबन्ध ऐसा सुन्दर किया जा रहा है कि पत्र सर्वाङ्गसुन्दर, सर्वोत्तम, सुसम्पादित और श्रेष्ठ अँगरेजी पत्रों के मुक़ाबले का हो।—'प्रताप'-सम्पादक पं० बालकृष्णशर्मा के मामले की सुनवाई गत २०, २१ और २२ जून को कानपुर में हुई। अगली सुनवाई फिर १२, १३ जुलाई को होनेवाली है।——दिल्ली के 'अर्जुन' के जीवनसर्वस्व श्रीयुत इन्द्र विद्यावाचस्पति मुलतान-जेल से छोड़ दिये गये, आजकल देहरादून में स्वास्थ्य सुधार रहे हैं।——हिन्दी के सुप्रसिद्ध नाटककार पं० नारायणप्रसाद 'बेताब' और बाबू हरिकृष्ण 'जौहर' आजकल बम्बई की रणजीत फ़िल्म कम्पनी में नई फ़िल्म-कहानियाँ लिख रहे हैं।——गत १९ जून को साहित्य-सम्मेलन की स्थायी समिति की बैठक में श्रीपथिकजी के प्रस्ताव से ग्वालियर हिं० सा० सम्मेलन के झगड़े के निबटारे के लिये चार सज्जनों की एक कमिटी बनाई गई है। गत १६ जून को ग्वालियर में आरम्भिक चुनाव का विरोध करने के लिये जो सभा हुई थी, उसमें लाठियाँ चल गईं, कई सज्जन घायल हो गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तितली

लेखक

जयशंकर 'प्रसाद'

(११)

सहसा एक दिन इन्द्रदेव को यह चेतना हुई कि वह जो कुछ पहले थे, अब नहीं रहे। उन्हें पहले से भी कुछ-कुछ ऐसा भान होता था कि परदे पर एक दूसरा चित्र तैयारी से आनेवाला है; पर इतना शीघ्र आने की सम्भावना न थी। शैला के लिये वह बार-बार सोचने लगे थे। उसकी क्या स्थिति है, यही वह अभी नहीं समझ पाते थे। कभी-कभी वह शैला के संसर्ग से अपने को मुक्त करने की भी चेष्टा करने लगते—यह भी विरक्ति के कारण नहीं, केवल उसका गौरव बनाने के लिये। उनके कुटुम्ब वालों के मन में शैला को वेश्या से अधिक समझने की कल्पना भी नहीं हो सकती थी। यह प्रच्छन्न व्यङ्ग उन्हें व्यथित कर देता।

उधर शैला भी इससे अपरिचित थी—ऐसी बात नहीं। तब भी इन्द्रदेव से अलग होने की कल्पना उसके मन में नहीं उठती थी। इसी बीच में उसने शहर में जाकर मिशनरी सोसाइटी से भी बातचीत की थी। उन लोगों ने स्कूल खोलकर शिक्षा देने के लिये उसे उकसाया। किन्तु उसने मिशनरी होना स्वीकार नहीं किया। इधर वह बाबा रामनाथ के यहाँ हितोपदेश पढ़ने भी जाती थी। अर्थात् इन्द्रदेव और शैला दोनों ही अपने को सुलझाने की चिन्ता में थे। वे इस उलझन को स्पष्ट करने के लिये क्या-क्या करने की बातें सोचते थे; पर एक दूसरे से कहने में संकुचित ही नहीं किन्तु भयभीत भी थे; क्योंकि इन्द्रदेव के परिवार में घटनाएँ बड़े वेग से विकसित हो रही थीं। किसी भी क्षण में विस्फोट होकर कलह प्रकट हो सकता था।

इमली के पेड़ के नीचे आरामकुर्सियों पर शैला और इन्द्रदेव बैठकर एक दूसरे को चुपचाप देख रहे थे। प्रभात की उजली धूप टेबल पर बिछे हुए रेशमी कपड़े पर रह-रहकर तड़प उठती थी, जिसपर धरे हुए फूलदान के गुलाबों में से एक भीनी महँक उठकर उन दोनों के वातावरण को सुगन्धपूर्ण कर रही थी।

इन्द्रदेव ने घबराकर कहा—शैला!

क्या?

तुम कुछ देख रही हो?

सब कुछ। किन्तु तुम इतने विचार-विमूढ़ क्यों हो रहे हो? यही समझ में नहीं आता।

तुम्हारी वह कल्पना सफल होती नहीं दिखाई देती। इसीका मुझे दुःख है।

किन्तु अभी हमलोगों ने उसके लिये कुछ किया भी तो नहीं।

कर नहीं सकते।

यह मैं नहीं मानती।

तुमको कुछ मालूम है कि तुम्हारे सम्बन्ध में यहाँ कैसी बातें फैलाई जा रही हैं?

हाँ! मैं रात-रात को घूमती हूँ, जो भारतीय स्त्रियों के लिये ठीक नहीं। मैं रामनाथ के यहाँ संस्कृत पढ़ने जाती हूँ। यह भी बुरा करती हूँ। और, तुमको भी बिगाड़ रही हूँ। यही सब न? अच्छा, इन बातों के किसी-किसी अंश पर देखती हूँ कि तुम भी अधिक ध्यान देने लगे हो। नहीं तो इतना सोचने-विचारने की क्या आवश्यकता थी? मैं—

इतना ही नहीं। मैं अब इसलिये चिन्तित हूँ कि अपना और तुम्हारा सम्बन्ध स्पष्ट कर दूँ। यह ओछा अपवाद अधिक सहन नहीं किया जा सकता।

किन्तु मैं अभी उस प्रश्न पर विचारने की आवश्यकता ही नहीं समझती।—शैला ने ईषत् हँसी से कहा।

क्यों?

तुम्हारे संसर्ग से जो मैंने सीखा है, उसका पहला पाठ यही है कि दूसरे मुझको क्या कहते हैं, इसपर इतना ध्यान देने की आवश्यकता नहीं। पहले मुझे ही अपने विषय में सच्ची जानकारी होनी चाहिये। मैं चाहती हूँ कि तुम्हारी जमींदारी के दातव्य विभाग से जो खर्च स्वीकृत हुआ है, उसीमें मैं अपना और औषधालय का काम चलाऊँगी। बैंक में भी कुछ काम कर सकूँ, तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उससे भी कुछ मिल जाया करेगा। और, मेरी स्वतंत्र स्थिति इन प्रवादों को स्वयं ही स्पष्ट कर देगी।

बात तो ठीक है।—इन्द्रदेव ने कुछ सोचकर धीरे से कहा।

पर इसके लिये तुमको एक प्रबन्ध कर देना पड़ेगा। पहले मैंने सोचा था कि गाँव में कई जगह कर्म-केन्द्र की सृष्टि हो सकती है। भिन्न-भिन्न शक्ति वाले अपने-अपने काम में जुट जायँगे। किन्तु अब मैं देखती हूँ कि इसमें बड़ी बाधा है, और मैं उनपर इस तरह नियंत्रण न कर सकूँगी। इसलिये बैंक और औषधालय, ग्राम-सुधार और प्रचार-विभाग, सब एक ही स्थान पर हों।

तो ठीक है। शेरकोट में ही सब विभागों के लिये कमरे बनवाने की व्यवस्था कर दो न!

किन्तु इसमें मैं एक भूल कर गई हूँ। क्या उसके सुधारने का कोई उपाय नहीं है?

भूल कैसी?

कुछ लोग ऐसे होते हैं, जो जान-बूझकर एक रहस्यपूर्ण घटना का जन्म देते हैं। स्वयं उसमें पड़ते हैं और दूसरों को भी फँसाते हैं। मैं भी शेरकोट को बैंक के लिये चुनने में कुछ इसी तरह मूर्ख बनाई गई हूँ।

इन्द्रदेव ने हँसते हुए कहा—मैं देख रहा हूँ कि तुम अधिक भावुक होती जा रही हो। यह सन्देह अच्छा नहीं। शेरकोट के लिये तो माँ ने सब प्रबन्ध कर भी दिया है। अब फिर क्या हुआ?

शेरकोट एक पुराने वंश की स्मृति है। उसे मिटा देना ठीक नहीं। अभी मधुबन नाम का एक युवक उसका मालिक है। तहसीलदार से उसकी कुछ अनबन है, इसीलिये यह......

मधुबन! अच्छा तो मैं क्या कर सकता हूँ। तुम बैंक न भी बनवाओ, तो होता क्या है। अब तो वह बेचारा उस शेरकोट से निकाला ही जायगा।

तुम एक बार माँ से कहो न। और नीलवाली कोठी ही मरम्मत करा दो, इसमें रुपये भी कम लगेंगे, और ..

नीलवाली कोठी!—आश्चर्य से इन्द्रदेव ने उसकी ओर देखा।

हाँ, क्यों?

अरे वह तो भुतही कोठी कही जाती है।

जहाँ मनुष्य नहीं रहते वहीं तो भूत रह सकेंगे? इन्द्रदेव! मैं उस कोठी को बहुत प्यार करती हूँ।

कब से शैला?—हँसते हुए इन्द्र ने उसका हाथ पकड़ लिया।

इन्द्र! तुम नहीं जानते। मेरी माँ यहीं कुछ दिनों तक रह चुकी है।

इन्द्रदेव की आँखें बड़ी हो गईं। उन्होंने कुर्सी से उठ खड़े होकर कहा—तुम क्या कह रही हो?

बैठो और सुनो। मैं वही कह रही हूँ, जिसपर मुझे सच होने का विश्वास हो रहा है। तुम इसके लिये कुछ करो। मुझे तुमसे दान लेने में तो कोई संकोच नहीं। आज तक तुम्हारे ही दान पर मैं जी रही हूँ; किन्तु मुझे वहाँ रहने देकर मुझे सबसे बड़ी प्रसन्नता तुम दे सकते हो। और, मेरी जीविका का उपाय भी कर सकते हो।

शैला की इस दीनता से घबराकर इन्द्रदेव ने कुर्सी खींचकर बैठते हुए कहा—

शैला! तुम काम-काज की इतनी बातें करने लगी हो कि मुझे आश्चर्य हो रहा है। जीवन में यह परिवर्तन सहसा होता है; किन्तु यह क्या! तुम मुझको एक बार ही कोई दूसरी व्यक्ति क्यों समझ बैठी हो? मैं तुमको दान दूँगा? कितने आश्चर्य की बात है!

यह सत्य है इन्द्रदेव! इसे छिपाने से कोई लाभ नहीं। अवस्था ऐसी है कि अब मैं तुमसे अलग होने की कल्पना करके दुखी होती हूँ, किन्तु थोड़ी दूर हटे बिना काम भी नहीं चलता। तुमको और अपने को समान अन्तर पर रखकर, कुछ दिन परीक्षा लेकर, तब मन से पूछूँगी?

क्या पूछोगी शैला?

कि वह क्या चाहता है। तब तक के लिये यही प्रबन्ध रहना ठीक होगा। मुझे काम करना पड़ेगा, और काम किये बिना यहाँ रहना मेरे लिये असम्भव है। अपनी रियासत में मुझे एक नौकरी और रहने की जगह देकर मेरे बोझ से तुम इस समय के लिये छुट्टी पा जाओ, और स्वतंत्र होकर कुछ अपने विषय में भी सोच लो।

शैला बड़ी गम्भीरता से उनकी ओर देखते हुए कहने लगी—हम लोगों के पश्चिमी जीवन का यह संस्कार है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्ति को स्वावलम्ब पर खड़े होना चाहिये। तुम्हारे भारतीय हृदय में, जो कौटुम्बिक कोमलता में पला है, परस्पर सहानुभूति की, सहायता की बड़ी आशाएँ, परंपरागत संस्कृति के कारण बलवती रहती हैं। किन्तु मेरा जीवन कैसा रहा है, उसे तुमसे अधिक कौन जान सकता है। मुझसे काम लो और बदले में कुछ दो।

यह सब मैं कर लूँगा; पर मधुबन के शेरकोट का क्या होगा, मैं नहीं कहना चाहता। माँ न जाने क्या मन में सोचेंगी। जब उन्होंने एक बार कह दिया तब उसके प्रतिकूल जाना उनकी प्रकृति के विरुद्ध है। तो भी तुम स्वयं कहकर देख लो।

यह मैं नहीं पसन्द करती इन्द्रदेव! मैं चाहती हूँ कि जो कुछ कहना हो, अपनी माताजी से तुम्हीं कहो। दूसरों से वही बात सुनने पर, जिसे कि अपनों से सुनने की आशा रहती है—मनुष्य के मन में एक ठेस लगती है। यह बात अपने घर में तुम आरम्भ न करो।

देखो शैला! वह आरम्भ हो चुकी है, अब उसे रोकने में मैं असमर्थ हूँ। तब भी तुम कहती हो, तो मैं ही कहकर देखूँगा कि क्या होता है। अच्छा तो जाओ, तुम्हारे हितोपदेश के पाठ का यही समय है न? वाह! क्या अच्छा तुमने यह स्वांग बनाया है।

शैला ने स्निग्ध दृष्टि से इन्द्रदेव को देखकर कहा—यह स्वांग नहीं है, मैं तुम्हारे समीप आने का प्रयत्न कर रही हूँ—तुम्हारी संस्कृति का अध्ययन करके।

अनवरी को आते देखकर उल्लास से इन्द्रदेव ने कहा—शैला! शेरकोट वाली बात अनवरी से ही माँ तक पहुँचाई जा सकती है।

शैला प्रतिवाद करना ही चाहती थी कि अनवरी सामने आकर खड़ी हो गई। उसने कहा—आज कई दिन से आप इधर नहीं आई हैं। बड़ी सरकार पूछ रही थीं कि......

अरे पहले बैठ तो जाइये।—कुर्सी खिसकाते हुए शैला ने कहा। मैं तो स्वयं अभी चलने के लिये तैयार ही हो रही थी।

अच्छा—

हाँ, शेरकोट के बारे में रानी साहबा से मुझे कुछ कहना था। मेरे भ्रम से एक बड़ी बुरी बात हो रही है, उसे रोकने के लिये......

क्या?

मधुबन बिचारा अपनी झोपड़ी से भी निकाल दिया जायगा। वही उसके बाप-दादों की डीह है। मैंने बिना समझे-बूझे बैंक के लिये वही जगह पसन्द की। उस भूल को सुधारने के लिये मैं अभी ही आनेवाली थी।

मधुबन! हाँ, वही न, जो उस दिन रात को आपके साथ था, जब आप नील-कोठी से आ रही थीं? उसपर तो आपको दया करनी ही चाहिये।—कहकर अनवरी ने भेद-भरी दृष्टि से इन्द्रदेव की ओर देखा।

इन्द्रदेव कुर्सी छोड़कर उठ खड़े हुए।

शैला ने निराश दृष्टि से उनकी ओर देखते हुए कहा—तो इस मेरी दया में आप की सहायता की भी आवश्यकता हो सकती है। चलिये।

(क्रमशः)

अहमदाबाद की गुजरात वर्नाक्युलर सोसाइटी

अध्यापक साँवलजी नागर

[शेषांश]

व्याकरण तथा कोष—

नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) ने सन् १९०७ से एक उत्तम व्याकरण लिखवाने का उद्योग किया था। यह उद्योग प्रायः २० वर्षों के बाद सफल हुआ और पं० कामताप्रसाद गुरु का व्याकरण हिन्दी-जगत् के सामने आया। गुजरात वर्नाक्युलर सोसाइटी ने आरंभ में ही इस ओर ध्यान दिया। इसके उत्तेजन और साहाय्य से जोसेफ़ वान सोमेरन टेलर साहब ने एक बड़ा सुन्दर व्याकरण, अँगरेजी व्याकरण के ढंग पर, तैयार किया। साहब गुजराती भाषा और साहित्य के अच्छे जानकार थे। उन्होंने आलोचनात्मक दृष्टि से, शास्त्रीय प्रणाली से, गुजराती भाषा का अध्ययन किया था। इनका लिखा 'गुजराती भाषा नु व्याकरण' तथा 'धातुकोष' सन् १८६७ ई०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में पहले-पहल प्रकाशित हुआ। इसके छोटे बड़े कई संस्करण निकल चुके हैं, जो भारतीय विश्वविद्यालयों में—गुजराती-विद्यार्थियों के लिये—पाठ्य-ग्रन्थ नियत हैं।

हिन्दी-साहित्य में ठोस काम करनेवाली संस्था काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा ने 'हिन्दी-वैज्ञानिक कोश' तथा 'हिन्दी-शब्द-सागर' प्रकाशित कर अभूतपूर्व यश प्राप्त किया है। 'हिन्दी-शब्द-सागर' के कार्य को इस निबन्ध-लेखक ने प्रत्यक्ष देखा है। मेरा विश्वास है—इस महान् कार्य में सफलता प्राप्त कर सभा ने संपूर्ण हिन्दी-जगत् को अपना ऋणी बना लिया है। इन दोनों कोशों के प्रकाशन में लगातार २८ वर्ष परिश्रम हुआ तथा प्रायः एक-डेढ़ लाख रुपये खर्च हुए।

गुजरात वर्नाक्युलर सोसाइटी ने भी लगभग १३०० पृष्ठों का एक शब्द-कोश बड़े परिश्रम से संपादित कराकर प्रकाशित किया है। इतना ही नहीं, उसने कैलासवासी रघुनाथ-भास्कर गोडबोले के सुप्रसिद्ध मराठी ग्रन्थ 'भारतवर्षीय ऐतिहासिक कोश' के ढंग पर एक अनूठा 'पौराणिक कथा-कोष' हाल ही में प्रकाशित किया है। इसमें प्रायः ११००० (ग्यारह हज़ार), व्यक्तियों का विस्तृत जीवन-वृत्तान्त है। जहाँ तक संभव हो सका, इसे ऐतिहासिक रूप देने का सुन्दर प्रयत्न किया गया है। इसके एकमात्र सम्पादक, गुजराती साहित्य के सुप्रसिद्ध कवि और लेखक, श्री डाह्याभाई पीताम्बरदास देरासरीजी हैं। ८०० पृष्ठों के इस ग्रन्थ का सम्पादन आपने जिस परिश्रम, योग्यता और धीरज के साथ किया है, उसके लिये आप गुजरातियों के 'हृदय-हार' हो गये हैं। सोसाइटी के आप सदा से पोषक और सहायक रहे हैं। इस समय आप सोसाइटी द्वारा निर्धारित 'भौगोलिक कोश' तैयार करने में व्यस्त हैं। अहमदाबाद के आप सुप्रसिद्ध बारिस्टर हैं। फिर भी आप अपना एक-एक क्षण गुजराती-साहित्य की सेवा में अर्पित करना चाहते हैं। गुजराती-भाषा को ऐसे अनेक सुपुत्रों का गौरव प्राप्त है।

इस (संयुक्त) प्रान्त में हिन्दी-उर्दू की जैसी होड़ है, वैसी कोई बात गुजरात में नहीं। चाहे ब्राह्मण हो या चमार, हिन्दू हो या मुसलमान, गुजरात में रहनेवाले प्रत्येक मनुष्य की मातृ-भाषा 'गुजराती' है। गुजराती भाषा में चाहे अरबी-फ़ारसी के शब्द बहुतायत से भले ही घुस पड़े हों; पर उसकी प्रतिद्वन्द्विनी भाषा कोई नहीं है। गुजरात के मुसलमान भाई भी गुजराती साहित्य की सेवा में अभिमान अनुभव करते हैं। गुजराती वर्नाक्युलर सोसाइटी ने गुजराती भाषा में मिश्रित अरबी-फारसी शब्दों का एक अद्भुत कोश, जनाब अमीर मियाँ हमदू मियाँ फारुकी से सम्पादित कराकर, प्रकाशित किया है। इसमें एक मुख्य विशेषता यह है कि शब्दों के उच्चारण उर्दू एवं नागरीलिपि में भी छपे हुए हैं।

यह सोसाइटी और भी एक अद्भुत कोश प्रकाशित कर रही है, जिसका सम्पादन पं० विश्वनाथ मगनलाल भट्ट महाशय कर रहे हैं। श्रीमान् आचार्य आनन्द-शंकर ध्रुव के प्रस्ताव पर वह 'पारिभाषिक शब्द-कोश' तैयार हो रहा है। इसमें मूर्त्त विज्ञान एवं अमूर्त्तविज्ञान के शब्दों का ही संग्रह किया जा रहा है। न्यायशास्त्र, मानसशास्त्र, परमार्थशास्त्र, अर्थशास्त्र, कला-शास्त्र आदि में प्रयोग किये जानेवाले शब्दों का गुजराती पर्याय संग्रहीत हो रहा है। इसके दो खंड छप चुके हैं। सबसे अधिक आश्चर्य यह है कि इन चार कोशों के प्रकाशन का प्रबंध रहते हुए भी, गुजराती-भाषाभाषियों के निःस्वार्थ साहित्य-प्रेम के कारण, सोसाइटी के 'कोषविभाग' का खर्च केवल १५००) वार्षिक के लगभग ही है।

हस्तलिखित-पुस्तक-संग्रह, काव्य-दोहन तथा प्राचीन काव्य-संशोधन—

मि० फार्बस साहब को पुरातन पदार्थों, स्मारकों तथा हस्तलिखित ग्रंथों के संग्रह का विशेष शौक था। इतिहास-प्रेमी होने के कारण गुजरात के पुराने ऐतिहासिक स्मारकों की खोज और निरीक्षण में उन्हें खास तौर से मज़ा मिलता था। इन्हीं सब पुरातन सामग्रियों के आधार पर उन्होंने 'रासमाला' नामक एक पुस्तक अँगरेजी भाषा में लिखी है, जिससे प्राचीन एवं मध्यकालीन गुजरात के इतिहास पर विशेष प्रकाश पड़ता है। उनका मोटो 'गुजराती साहित्य का विकास' था। सोसाइटी के मंत्री होते ही उन्होंने सिद्धान्त बताते हुए यह कहा था कि हमारा मुख्य काम प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों का संग्रह करना तथा अँगरेजी साहित्य अथवा अन्यान्य भाषाओं के सर्वोत्तम ग्रंथों का अनुवाद कराकर गुजराती-साहित्य को समृद्धिशाली बनाना है।

प्राचीन काव्य-ग्रंथों का नाश न हो, इस सद्भाव से प्रेरित हो, अपनी गाँठ का पैसा खर्च कर, मि० फार्बस ने प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों का संग्रह करना आरंभ किया। कहा जाता है कि 'पृथ्वीराज रासो' के प्राप्त करने में उनका लगभग १५०) केवल डाकव्यय हुआ था। सन् १८५२ में 'ईडर' में उन्होंने गुजरात के कवियों, भाटों और चारणों का एक कवि-सम्मेलन किया था। उस सम्मेलन को उन्होंने दरबार का रूप दिया था। कवियों से मिलकर वह इतने प्रसन्न हुए कि अंत में उन्होंने प्रत्येक कवि को, उसकी रचना और योग्यता के अनुसार, अपनी जेब से आर्थिक पुरस्कार देकर उत्साहित किया।

वह समय निराला था। लोग अँगरेजों को अपनी प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकें दिखाते भी न थे। अतएव जहाँ पुस्तकें मिल सकीं, वे प्राप्त कर ली गईं। जिन्होंने ग्रंथ देना स्वीकार न किया, उनके ग्रंथ की प्रतिलिपि उतरवा ली गई। सोसाइटी के प्राचीन संग्रह में ऐसी प्रतिलिपियों का ढेर संग्रहीत है। इस कार्य में—सोसाइटी के अद्वितीय पोषक, साहित्य के अनुपम महारथी, गुजरात के मिलटन—कविवर दलपतरामजी ने भी बड़ा ही उद्योग किया था। इससे सोसाइटी ने प्राचीन-संग्रह-विभाग का नाम 'कवि दलपतराम हस्त-लिखित-पुस्तक-संग्रह' कर दिया है।

कविवर दलपतरामजी ने इस संग्रह के आधार पर 'गुजराती काव्य-दोहन' तीन भागों में लिखने का कृपा की, जिसे सरकार ने प्रकाशित किया है। सोसाइटी द्वारा संग्रहीत सामग्री से ही गुजराती जनता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को पहले-पहल ऐसे ग्रंथ का दर्शन हुआ। इससे, प्राचीनतम काल से लेकर अठारहवीं शताब्दी के आरंभ तक के कवियों का संक्षिप्त तथा उनकी कविताओं का विस्तृत परिचय प्राप्त होता है।

सोसाइटी ने प्राचीन-काव्य-संशोधन का महत्वपूर्ण कार्य आरंभ किया है। 'अखा कृत काव्य-संग्रह' की अच्छी ख्याति हो रही है। '१५ मां सैकानां प्राचीन गुर्जर काव्यो', उद्धव-कृत 'रामायण', 'चेनचरित्र', 'हरिश्चन्द्राख्यान', 'हरिलीला षोडशकला' आदि अनेक ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। सोसाइटी इस कार्य में ७५०) के लगभग प्रतिवर्ष व्यय करती है।

पुस्तक-प्रकाशन—

काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा को जो स्थायी निधि प्राप्त हुई है, उससे सभा 'देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तक-माला', 'सूर्यकुमारी-पुस्तकमाला,' 'बालाबक्ष-राजपूत-चारण-पुस्तकमाला' का संचालन करती है। लगभग २० सुन्दर ग्रंथ इन पुस्तक-मालाओं द्वारा प्रकाशित हो चुके हैं। इसके सिवा सभा प्रति तीसरे वर्ष 'जोधसिंह-पुरस्कार', 'रत्नाकर-पुरस्कार', 'बटुकप्रसाद-पुरस्कार,' 'छन्नूलाल-पुरस्कार' आदि देकर लेखकों द्वारा पुस्तकें लिखवाती अथवा उत्तम लेखकों को उत्साहित करती है। इन चारों पुरस्कारों के साथ सभा एक पदक भी देती है।

गुजरात-वर्नाक्युलर-सोसाइटी द्वारा जो पुस्तक-प्रकाशन का अद्भुत कार्य हो रहा है, वह अन्य-भाषाभाषियों के लिये अनुकरणीय है। लगभग ७१०००) रुपये का स्मारक-कोष उन २० पवित्र आत्माओं के नाम पर है, जिनकी कीर्ति प्रकाशित पुस्तकों द्वारा सदा अजर-अमर बनी रहती है। इसके सिवाय लगभग १७९८२) की निधि उत्तम लेखकों को उत्साहित करने के लिये ४ सज्जनों द्वारा और जमा की गई है। इसके ब्याज से सोसाइटी ने ४२५ ग्रंथों को अब तक प्रकाशित कर गुजराती-साहित्य को भूषित किया है। ८-१० नये तथा ४-५ अप्राप्य ग्रंथों का पुनर्प्रकाशन प्रतिवर्ष होता रहता है। सोसाइटी इस विभाग में नियमित रूप से लगभग ३०००) प्रतिवर्ष व्यय करती है।

शिक्षा-प्रचार तथा स्कालरशिप की निधि—

सोसाइटी के निःस्वार्थ उद्योग का सबसे अद्भुत प्रमाण उपर्युक्त निधि है। १० सज्जनों के स्मारक-स्वरूप लगभग १३४९००) जमा है, जिसके ब्याज से सोसाइटी निर्धारित कन्या-पाठशाला, वनिता-विश्राम, संस्कृत-पाठशाला तथा अहमदाबाद-अंजुमने-इसलाम को सहायता देती है। लगभग ३,२५,७३०) की बड़ी रकम उन शिक्षा-प्रेमी गुजराती महानुभावों और देवियों के स्मारक में जमा है, जिनके विचार में शिक्षा-प्रचार ही देश की उन्नति का सबसे बड़ा साधन है—जिनको गुजरात, काठियावाड़ तथा बम्बई-प्रान्त के बालक-बालिकाओं से अगाध प्रेम है—अथवा जो गुजराती-साहित्य का अनुराग अपने बालकों में स्थापित करना चाहते हैं—अथवा जो ब्रिटिश भारत और देशी रियासतों के रहनेवालों में एक समान संस्कृति तथा शिक्षा का प्रचार चाहते हैं। इस बड़ी रकम के ब्याज से अनेक विद्यार्थियों को, सर्वप्रथम होने पर, पुरस्कार दिये जाते हैं, छात्रवृत्तियाँ दी जाती हैं। मैट्रिक से लेकर एम० ए० तक, गुजराती भाषा में सर्वाधिक नम्बर पानेवालों को पदक, वृत्ति, पुस्तकें आदि दी जाती हैं। अनेक लाइब्रेरियों को भी सहायता-स्वरूप प्रतिवर्ष कुछ रकम दी जाती है। अनेक जातीय वृत्तियाँ भी निर्धारित हैं, जो उन्हीं निर्दिष्ट कार्यों में अर्पित की जाती हैं।

समस्त भारत में इतनी सम्मान्य संस्था दूसरी नहीं है। जो कार्य इस सोसाइटी के द्वारा हो रहा है, वह अत्यन्त स्तुत्य है। सोसाइटी की इतनी धाक है कि बिना उद्योग के ही प्रतिवर्ष ट्रस्ट कायम होकर सोसाइटी के सिपुर्द होते रहते हैं। हिन्दू, मुसलमान, पारसी,—सभी जब शिक्षा-प्रचार के हेतु कुछ रकम दान करना निश्चित करते हैं, तो अपनी रकम सोसाइटी के ही सिपुर्द कर देते हैं। सबका इस सोसाइटी पर पूर्ण विश्वास है। सन् १९३० के आरंभ में सब मिलाकर ५,०९,१७६) के ट्रस्ट सोसाइटी के सिपुर्द थे; पर वर्ष के अन्त में ट्रस्ट में ५४०६१२) की रकम हो गई। इसका अर्थ यह है कि ३१४३६) के नये ट्रस्ट सोसाइटी को प्राप्त हुए।

प्रेमाभाई हॉल तथा लोकोपयोगी-व्याख्यान-माला—

सोसाइटी अपने वार्षिक अधिवेशन में 'प्रेमाभाई हॉल' के प्रबंध के लिये एक प्रबंध-समिति निश्चित कर देती है। इस हॉल में प्रायः सौ सवा सौ व्याख्यान प्रतिवर्ष होते रहते हैं। भिन्न-भिन्न संस्थाएँ इस हॉल को मँगनी लेकर अपना उत्सव करती हैं। सोसाइटी की ओर से भी, विशिष्ट विद्वानों द्वारा, साहित्य तथा विज्ञान विषय के व्याख्यान कराये जाते हैं। १९३० में दीवान बहादुर केशवलाल हर्षदराय ध्रुव ने ३, श्रीयुत रामनारायण पाठक और गगनभाई लल्लूभाई तथा श्रीमती शारदा बेन मेहता ने एक-एक व्याख्यान, साहित्य एवं स्त्री-शिक्षा पर, दिया था। गुजरात-कालेज के अध्यापक श्रीधरजी भाई फकीर भाई ने वायरलेस रेडियो और टेलिविज़न पर व्याख्यान लिख भेजा है। उनका लेख कालेज खुलते ही पढ़ा जायगा।

सोसाइटी के सभासद—

इसके चार प्रकार के सभासद होते हैं। १०००) अथवा इसके ऊपर एक-कालिक सहायता देनेवाले 'संरक्षक' चुने जाते हैं। महाराजा बड़ौदा इसके संरक्षक हैं। केवल महात्मा गांधी ही इसके आनरेरी सभासद चुने गये हैं। जो सज्जन ५०) की एक-कालिक सहायता सोसाइटी को अर्पित करते हैं, वे आजीवन सभासद हो जाते हैं। परन्तु यदि कोई अध्यापक ३०) मासिक से कम वेतन पाता हो, तो वह केवल २५) देने से ही आजीवन सभासद बना लिया जाता है। ५) वार्षिक देनेवाले वार्षिक सभासद कहे जाते हैं।

सभासदों को जो लाभ सोसाइटी द्वारा होते हैं, उन्हें देख एक बार चकित हो जाना पड़ता है। उन्हें 'बुद्धि-प्रकाश' मासिक पत्र तो मिलता ही है। 'महिला वार्षिक' तथा 'वार्षिक व्याख्यान' भी प्रकाशित होते ही उन्हें मिलते हैं। इसके सिवा बड़ा भारी लाभ यह है कि उनको एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुपया अथवा उससे कम मूल्य की पुस्तकें, जो सोसाइटी द्वारा प्रकाशित होती हैं, एक प्रति बिना मूल्य मिल जाती है। इसके सिवा एक रुपये से अधिक मूल्य की पुस्तकें १) कम देने से मिल जाती हैं। इस प्रकार एक बार आजीवन सभासद होनेवाला प्रतिवर्ष लगभग ८) की पुस्तकें पाता रहता है। साधारण अधिकार इससे परे हैं।

भारतवर्ष की भाषा-प्रचारिणी सभाओं में यह सोसाइटी सबसे प्राचीन है। इसके समान सस्ती, थोड़े पैसे में आजीवन लाभ पहुँचानेवाली, संस्था दूसरी नहीं है। इसके समान लोकप्रिय भी कदाचित ही कोई सभा हो, जिसके आजीवन सभासदों में १६ राजा-महाराजा, १२ अँगरेज, ३५३ महिलाएँ, ३१० पुरुष तथा ५६४ रजिस्टर्ड पुस्तकालय हैं।

अनेक वर्षों से दीवान बहादुर केशवलाल हर्षदराय ध्रुव इसके सभापति तथा लेडी विद्याब्हेन रमणभाई नीलकंठ मन्त्री हैं। इसके पूर्व इनके स्वर्गीय पति सर रमण भाई महीपतरामजी १६ वर्षों तक बराबर मंत्री चुने जाते रहे। इन दो सज्जनों के सिवा इसके प्रधान कार्यकर्ता—सहायक मंत्री श्री हीरालाल त्रिभुवनदास पारिख महाशय हैं। आप ही 'बुद्धि-प्रकाश' के संपादक भी हैं। हाल ही में आपने दो भागों में 'ग्रंथ अने ग्रंथकार' नामक एक ग्रंथ लिखा है। आपके अनवरत परिश्रम और उत्साह से सोसाइटी के आफ़िस का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। उत्साह देकर आपने अनेक लेखकों को गुजराती का प्रसिद्ध सेवक बना दिया है।

सच बात तो यह है कि भाषा-प्रचारिणी सभाओं में इस सोसाइटी को ऐतिहासिक महत्व प्राप्त है। इसका कार्य अवश्य ही श्लाघ्य है। यदि अन्यान्य भाषा-प्रेमियों को इसके परिचय से उत्साह प्राप्त हो, तो इस देश का महान् उपकार होगा।

हिन्दी-संग्रहालय द्वारा साहित्यिकों की स्मृति-रक्षा

श्रीकेदारनाथ शर्मा

अखिल भारतवर्षीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की ओर से जो हिन्दी-संग्रहालय बनने जा रहा है, उसका रूप कैसा होना चाहिये, यह एक महत्वपूर्ण एवं विचारणीय प्रश्न है। प्रत्येक पत्र-सम्पादक, लेखक, कवि, प्रकाशक और अमीर-गरीब हिन्दी-प्रेमी तथा हिन्दी-हितैषी को अभी से इस प्रश्न पर विचार करना चाहिये। सभा पत्रों में नियमित रूप से इसकी चर्चा होने की आवश्यकता है। इस गौरवपूर्ण कार्य की पूर्त्ति के लिये केवल अर्थ-संग्रह की ही आवश्यकता नहीं है, सबसे बड़ी आवश्यकता अमूल्य-वस्तु-संग्रह की है। रुपये तो सबसे पहले और शीघ्रातिशीघ्र चाहिये; क्योंकि भवन-निर्माण का कार्य निकट भविष्य में ही आरम्भ होनेवाला है। किन्तु केवल सुन्दर भवन ही संग्रहालय नहीं कहला सकता, उसमें संग्रहणीय पदार्थों का संचय भी होना अत्यावश्यक है। वस्तु-संग्रह का उद्योग आज ही से आरम्भ हो जाना चाहिये; क्योंकि इसी समय से चेष्टा करने पर अनेक अलभ्य वस्तुएँ प्राप्त हो जायँगी, नहीं तो फिर आगे चलकर कुछ ही दिनों में बहुत-सी वस्तुएँ सर्वथा दुर्लभ हो जायँगी—बहुत ढूँढ़ने, हैरानी-परेशानी उठाने और ख़रीदने पर भी न मिल सकेंगी। समय का वेगवान प्रवाह अनेक वस्तुओं को अपने साथ बहा ले जायगा, हम पछताते रह जायँगे। जो आज सहज ही सुलभ हैं, वे—बहुत सम्भव है—कुछ ही काल में नितान्त दुर्लभ हो जायँ। उदाहरण के तौर पर मान लीजिये कि पं० पद्मसिंहजी, रत्नाकरजी, गोस्वामीजी, शिवनन्दन-सहायजी आदि साहित्यसेवी अभी हाल ही परलोकगामी हुए हैं और इनकी चिट्ठियाँ, डायरियाँ, दैनिक व्यवहार में आई हुई वस्तुएँ, नोट-बुक आदि यदि इस समय संग्रह कर लिये जायँ, तो बहुत-सी अमूल्य सामग्री सुगमता से प्राप्त हो जायगी। उचित तो यह है कि जो साहित्य-सेवी स्वर्गवासी हो जायँ, उनके उत्तराधिकारी उनकी संग्रहणीय वस्तुओं को एकत्र कर 'संग्रहालय' में भेज दें, अथवा 'संग्रहालय' के प्रबन्धकर्त्ता ही उन प्राप्तव्य वस्तुओं के लिये पत्रव्यवहार करके अपना विश्वस्त प्रतिनिधि भेजें और सब सामान सुरक्षित रीति से मँगाकर संग्रहालय में रक्खें। इसी प्रकार, जो साहित्यसेवी बहुत पहले ही, बरसों पूर्व, स्वर्गीय हो चुके हैं, उनके वर्त्तमान वंशधरों या इष्ट-मित्रों या सम्बन्धियों से लगातार लिखापढ़ी करके जो संग्रहणीय सामग्री मिल सकती हो, सबको माँगकर या मँगवाकर संग्रहालय में सजाया जाय। पं० सदल मिश्र, राजा लक्ष्मण सिंह, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द, पं० अम्बिकादत्त व्यास, पं० रामशंकर व्यास, पं० बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', बाबू बालमुकुन्द गुप्त, पं० केशवराम भट्ट, श्रीदेवीप्रसाद पूर्ण, पं० श्रीधर पाठक, पं० बालकृष्ण भट्ट, पं० सत्यनारायण, बाबू राधाकृष्णदास, श्रीविद्यार्थीजी आदि अनेक स्वर्गीय साहित्यिकों के वंशजों से लिखापढ़ी करके यदि स्व० साहित्यिकों से सम्बन्ध रखनेवाली महत्वपूर्ण वस्तुओं के संग्रह करने का प्रयत्न किया जाय, तो संग्रहालय की सार्थकता सिद्ध हो सकती है। पत्र-पत्रिकाओं में यह घोषित कर देने की आवश्यकता है कि स्व० साहित्यिकों के वंशज, संग्रहालय के लिये, अपने पूर्वज की संग्रहणीय वस्तुएँ भेजने की कृपा करें। जिनका पता मालूम हो, उनसे पत्रव्यवहार आरम्भ कर देना चाहिये। विश्वास तो पूरा है कि सब लोग संग्रहालय की शोभा बढ़ाने के साथ-साथ अपने पूर्वज की स्मृति-रक्षा का सुयोग हाथ से न जाने देंगे।

इसी के सम्बन्ध में फिर अगली बार विचार किया जायगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

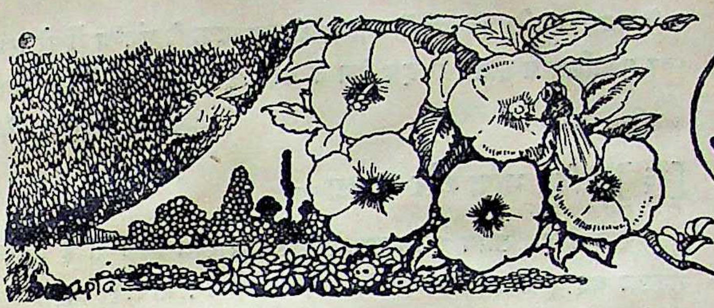

मधु संचय

[१] तरुण लेखक और संपादक

योरप के पत्र-संपादक सदैव तरुण लेखकों की खोज में रहते हैं। किसी लेखक में थोड़ी भी प्रतिभा दिखाई दी कि उसे अपनाने का वे तुरंत उद्योग करने लगे ! कुशल जौहरी की भाँति उन्हें सदैव सतर्क रहना पड़ता है कि कोई उज्ज्वल रत्न धोखे से उनके हाथ से न निकल जाय। इँगलैंड के जितने श्रेष्ठ लेखक हैं, उन सबको उनके साहित्यिक जीवन के प्रारंभिक युग में खोज निकालने एवं कीर्ति के उच्च शिखर पर बिठालने का सारा श्रेय वहाँ के संपादकों को ही प्राप्त है। एच्० जी० वेल्स का उदाहरण लीजिए। वेल्स महोदय इँगलैंड के चोटी के उपन्यासकार एवं विचारशील निबंध-लेखक हैं। यदि Saturday Review के संपादक 'फ्रेंक हैरिस' की दृष्टि उनपर न पड़ती, तो इस समय अँगरेज़ी-साहित्य-मंदिर में उनका स्थान कहाँ होता, कहना कठिन है। लॉर्ड मॉरले ने जब 'सैटर्डे रिव्यू' के संपादकत्व से अवकाश ग्रहण किया, तो फ्रेंक हैरिस उसके संपादक-पद पर नियुक्त हुए। मॉरले जब नए संपादक को कार्य-भार सौंपने लगे, तब कार्यालय के एक कमरे में रक्खे हुए बड़े-से संदूक़ की ओर इशारा करके उन्होंने कहा—"देखिए, इसमें बाहर से आए हुए बहुत-से लेख पड़े हैं। कुछ तो पुराने पड़ गए हैं, कुछ बिलकुल रद्दी हैं। उनको यथास्थान लौटा दीजिए।" फ्रेंक हैरिस ने सेक्रेटरी की सहायता से उन लेखों को सरसरी नज़र से देख डाला। सौ में निन्नानबे लेख सचमुच रद्दी थे। परँतु उस ढेर के भीतर दो लेखों ने उनका ध्यान आकृष्ट किया। एक तो कहानी थी और एक था निबंध "The Rediscovery of the unique., निबन्ध में लेखक ने यह प्रतिपादित किया था कि "प्रत्यक्ष दर्शन द्वारा किसी निष्कर्ष पर पहुँचने की प्रणाली बिलकुल भ्रम-पूर्ण है। उससे हमारी स्मृति को भले ही कुछ सहायता मिले, परन्तु सत्य तक पहुँचने में हम समर्थ नहीं हो सकते। एक ही सूत्र में हम तथ्यों की जिन गुरियों को पहना देते हैं, वे आकार-प्रकार में कभी समान नहीं होतीं। वृक्ष की कोई दो पत्तियाँ लीजिए, वे कभी एक-सी नहीं होंगी। एक ही मनुष्य के दोनों नेत्रों का रूप-रंग एक-सा नहीं होता। यहाँ तक कि नासिका के दोनों पुट भी आकार-प्रकार में एक दूसरे से बिलकुल भिन्न होते हैं। इस विश्व में प्रत्येक वस्तु विलक्षण और निराली है, और उसे सबसे अलग, सबसे विलग करके ही देखना और मनन करना चाहिए। वस्तुओं की विलक्षणता अथवा भिन्नता ही उनकी विशेषता है। वही उनकी आत्मा है। अतएव निस्संग-भाव से वस्तुओं का अध्ययन करने से ही उनका रहस्योद्घाटन किया जा सकता है।" निबंध बहुत आकर्षक था, शैली सहज और स्वाभाविक एवं स्वरूप बिलकुल निर्दोष। लेखक का नाम देखकर हैरिस आश्चर्य-चकित हुए। उन्हें किसी प्रतिष्ठित लेखक के नाम का ख्याल था। परंतु एच्० जी० वेल्स ! उन्होंने अपने सहकारी से पूछा—"तुमने वेल्स का नाम सुना है ?" उसने सिर हिलाकर अपनी असम्मति प्रकट की। हैरिस ने भविष्यद्वाणी की—"अच्छा, एक दिन उसका नाम सुनोगे। इस वक़्त मैं यह चाहता हूं कि तुम उसे एक पत्र लिखो कि किसी भी वक़्, अवकाश मिलने पर, वह मुझसे आकर मिले।" सूक्ष्मदर्शी हैरिस को धोखा नहीं हुआ। वेल्स महोदय आज अँगरेज़ी-साहित्य-भांडार के एक उज्ज्वल रत्न हैं। हिंदी-पत्रकारों को भी इस प्रकार की सूक्ष्मदर्शिता एवं सहृदयता का परिचय देना चाहिए। प्रतिभा-संपन्न नवीन एवं तरुण लेखकों को प्रोत्साहन देना प्रत्येक संपादक का विशेष गुण होना चाहिए।

—'सुधा', ज्येष्ठ

[२] देशी भाषा के समाचार-पत्र—

सामान्यतः सभी देशी भाषा के सामाचारपत्रों में संवादों और लेखों के संग्रह का उचित प्रबन्ध नहीं है। हिन्दी-भाषा के प्रायः सभी पत्र दो पैसे में बिकते हैं। विज्ञापन से उन्हें कुछ ज्यादा आमदनी नहीं है। ऐसी स्थिति में समाचारपत्र का दाम दो पैसा रखकर संवादों और लेखों आदि का बहुत अच्छा प्रबन्ध करना बहुत कठिन हो रहा है। सबसे अच्छी दुकानदारी तो यही मालूम होती है कि अच्छी-से-अच्छी चीज तैयार की जाय, चाहे उसका दाम कुछ ज्यादा ही हो। लोग अच्छी चीज ज्यादा दाम देकर भी खरीदेंगे। भारत में देशी भाषा के सदाचारपत्रों की खपत के लिये विस्तृत क्षेत्र है, इसलिये उनके संगठन की ओर उपयुक्त रूप से ध्यान देना चाहिये।

दैनिक 'आज'

[३] लंदन का 'टाइम्स' अखबार—

हिन्दुस्तान के और दूसरे देशों के अखबारों के प्रचार में ज़मीन आसमान का अन्तर है। योरप में ऐसे कई अखबार हैं जिनकी ग्राहक-संख्या एक-एक लाख से भी अधिक है। लंदन का 'टाइम्स' अखबार तो सभी से बढ़ा हुआ है। १७८५ ई० में वह निकला था और तब से अबतक उत्तरोत्तर उसकी उन्नति होती जा रही है। वह दैनिक पत्र है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और इन दिनों प्रति दिन उसकी दो लाख ५० हज़ार प्रतियाँ निकलती हैं। दिन-भर में उसके तीन-तीन संस्करण निकलते हैं। उसका एक ब्रांच आफिस पेरिस में भी है और फ्रान्स तथा इङ्गलैण्ड के अनेक स्थानों में वह हवाई जहाजों द्वारा पहुँचाया जाता है। इस अखबार के दफ्तर में सैकड़ों कर्मचारी काम करते हैं, जिनमें सिर्फ सम्पादक ही कई दर्जन हैं। यह अखबार करोड़ों की पूंजी से चल रहा है। काश! हिन्दुस्तानी भाषा में भी कोई ऐसा पत्र निकलता!

—'प्रताप'

[४] सबसे बड़ी लाइब्रेरी—

संसार में सबसे बड़ी लाइब्रेरी रूस में है, और दूसरा नम्बर है पेरिस की लाइब्रेरी का। संसार की सबसे बड़ी छ लाइब्रेरियों की तालिका यहाँ दी जाती है—लेनिनग्रेड की पब्लिक लाइब्रेरी में ४८३२९४८ पुस्तकें और ३३११०० पुस्तिकाएँ हैं। पेरिस की बिबिलियो-थेक नैशनल नामक लाइब्रेरी में ४०००००० छपी हुई पुस्तकें और ३०००००० पुस्तिकाएँ हैं। मास्को (रूस) की लेनिन लाइब्रेरी में ३९००००० पुस्तकें हैं। लन्दन की ब्रिटिश म्युजियम के सम्बन्ध में कहा जाता है कि ठीक-ठीक यह कहना कठिन है कि वहाँ कितनी पुस्तकें हैं; पर नक्शे और समाचार-पत्र आदि मिलाकर कुल छपी हुई पुस्तक-पुस्तिकाओं की संख्या ३२००००० है और हस्तलिखित की ५३६५० है। यहां प्राच्य देशों की भी छपी हुई १२०००० और हस्तलिखित १६४०० पुस्तकें हैं। बर्लिन की एक लाइब्रेरी में करीब २२८७८२१ पुस्तकें हैं। म्युनिच (जर्मनी) की लाइब्रेरी में १६७०००० पुस्तकें हैं।

—दैनिक 'वर्त्तमान'

[५] भारतीय समाचारों की उपेक्षा—

जून मास के 'माडर्न रिव्यू' में उसके संपादक ने लिखा है कि विदेशी समाचारों में बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों के भाषणों से लेकर घुड़दौड़ के समाचार तथा समाज में रौनक लानेवाली महिलाओं के कुत्तों की बीमारी तक के संवाद इस देश में भेजे जाते हैं, यद्यपि इस प्रकार के समाचारों का इस देश वालों के लिये कोई महत्त्व नहीं होता। किन्तु किसी महान-से-महान भारतीय का यदि विदेश में स्वागत-सम्मान होता है तो उसके सम्बन्ध में या तो बिलकुल ही कोई समाचार नहीं भेजे जाते अथवा भेजे भी जाते हैं तो इतना कम कि उससे उसका महत्त्व कुछ भी प्रकट नहीं होता। कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर कितने ही मुस्लिम राज्यों की सैर करके लौटे हैं। इन राज्यों में आपका स्वागत किया गया, पूरी खातिरदारी हुई; किन्तु किसी भी सम्वाद-वाहक-संस्था ने इस संबन्ध में कोई समाचार भेजने की जरूरत नहीं समझी। यदि 'लिबर्टी' में कवीन्द्र की इस यात्रा के संबन्ध में पूरे समाचार प्रकाशित न होते, तो इस देश के लोग पूरे अन्धकार में ही रहते।

—दैनिक 'भारत-मित्र'

[६] विविध भाषा और एकता—

रूस में इस समय ४९ भाषाओं में समाचारपत्र निकलते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि उस देश में कम-से-कम ४९ भाषाएँ तो जरूर ही बोली जाती होंगी। इतनी विभिन्न भाषाओं के बोलनेवालों के होते हुए भी उस देश के लोगों में एकता है और उस देश के लोग स्वराज्य के योग्य हैं! भारतीय स्वराज्य के विरोधी अक्सर कहते हैं कि भारत में अनेक भाषाएँ हैं, इसलिये यहाँ एकता और स्वराज्य होने में बड़ी रुकावट है। हमारे सामने रूस का प्रत्यक्ष उदाहरण है।

—दैनिक 'आज'

[७] प्रेम की तर्कना—

निर्झर नदियों में मिलते, नदियाँ समुद्र में गिरतीं
निशि-वासर वायु-हिलोरें आपस में हिलतीं-मिलतीं
अति प्यारी कोमल गति से
कुछ नहीं विलग है जग में, इक दिव्य निमंत्रण के बल
सब जीव परस्पर मिलते; प्रिय! तब तेरे जीवन में
अपनापन क्यों न मिला दूँ?
देखो! पर्वत की श्रेणी नभ का नित चुम्बन करतीं
जल की कल-कोमल-लहरें हिल-मिल आलिंगन भरतीं
जो कली निरादर कर दे अपने भाई फूलों का
वह क्षमा नहीं पा सकती अपनी ऐसी भूलों का
दिनकर की ज्योति जगत को अपनी बाहों में कसती
चाँदनी विमल सागर का चुम्बन ले-लेकर हँसती
पर मोल भला क्या होगा, इस सब मिठास का मुझको
यदि मैं न आह! पापाऊँ तव स्निग्ध मधुर चुम्बन को?

—राजनाथ पाण्डेय] [माया, जून

——विश्वभण्डार-प्रेस (बनारस कैण्ट) के अध्यक्ष के आदेशानुसार स्वर्गीय साहित्याचार्य पं० पद्मसिंहजी शर्मा की पुण्य-स्मृति में सभी पुस्तकालयों तथा वाचनालयों को 'कला' (मासिक-पत्रिका) आधे मूल्य में एक वर्ष तक दो जायगी। जो पुस्तकालय इस रियायत से लाभ उठाना चाहें वे १) भेज कर "कला" मँगा लें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पति की क़ब्र

श्रीमन्महाराजकुमार बाबू दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह

प्यार करना सीखो, एनी !

इससे लाभ जोसेफ़ ?

लाभ ! जीवन-मरण से क्या लाभ ? इसका भी उत्तर दे सकती हो ? नहीं।

तब प्यार करो।

क्यों प्यार के पीछे इतना पड़े हो जोसेफ़ ? यह दुःखद है, कष्टप्रद तथा कंटकाकीर्ण है।

तुमको इसका अनुभव ! नहीं, एनी, नहीं, ऐसा न कहो।

मुझको तुम अनुभव-हीन समझते हो और प्यार में रस देखते हो। मैं कहे देती हूं जोसेफ, इसका शिकार बनकर तुम स्वयं रोओगे और मुझे भी रुलाओगे।

चार्ल्स जोसेफ ने आकाश की ओर गम्भीरता-पूर्वक निहारा। चिन्ता की भंगी विद्युद्वेग से चेहरे पर दौड़ गई। बंक भौंहें तन गईं। शान्त इन्द्र-धनुष और तेज़ पड़ गया।

इधर एनी ने शिराज़ी का प्याला भरा। मद-भरी विशाल अलसीली पलकों से उसे निहारा। तृषित ओष्ठ उसपर सट गये।

जोसेफ ने गम्भीर मुद्रा से एनी के इस कृत्य को निहारते हुए कहा— प्यार में रस नहीं है, और इस मादकता में रस है ?

एनी ने मद-भरी आँखें ऊपर उठाईं, कहा—बिना नशे के जीवन चल नहीं सकता जोसेफ, नशा ही तो रस है।

जोसेफ ने गम्भीर होकर चिन्तित भाव से उत्तर दिया—प्यार को भी मादकता मान लो एनी !

एनी ने मदभरी मुस्कुराहट के साथ जोसेफ को देखा और कहा— हो सकता है। किन्तु शराब का नशा उतर सकता है, प्यार का नहीं। शराब का नशा उतरने पर थोड़े समय के लिये खुमारी रहेगी; किन्तु प्यार का नशा उतरने से जीवन भर ख़ुमारी रह जायगी। फिर जीवन को किरकिरा करने से लाभ ?

जोसेफ ने आकाश के अन्तिम छोर में टिमटिमाती हुई तारिका की ओर देखा। उसकी ज्योति मलिन थी। पर, रह-रहकर बुझते हुए प्रदीप की तरह आलोकित हो उठती थी, फिर मन्दज्योति हो जाती थी।

जोसेफ ने कहा—एनी, उधर देखो। आकाश की गोद में अस्तप्राय गत-तेज उस तारिका को निहारो। क्या बता सकती हो, किस प्यार के कारण उसका जीवन निष्प्रभा प्रतीत होता है ?

एनी की आँखें आकाश की उस क्षीणकान्ति तारिका पर जा टिकीं।

जोसेफ की आँखें इस मदपूर्ण प्रकाश-पुञ्ज पर झूम गईं। तर्क उसकी माधुरी में उलझ गया।

एनी ने कहा—निष्प्रभ प्रतीत होता है ! मैं ऐसा नहीं कह सकती।

जोसेफ के तर्क ने मादकता की ओट से झाँककर कहा—फिर प्यार से जो जीवन किरकिरा हुआ है, वह प्यार से विहीन लोगों को ही किरकिरा प्रतीत होगा, वास्तव में वह किरकिरा है नहीं—यह भी तो कहा जा सकता है एनी ?

एनी ने शिराज़ी ढालते हुए कहा—हाँ, यह कह सकते हो। किन्तु फिर प्यार से लाभ ?

जोसेफ ने 'चौप' के टुकड़े को मुँह में रखते हुए कहा—यह न कहो एनी। फिर इस जीवन-मरण से क्या लाभ ? प्यार से रहित इस संसार से या इस शुष्क आमोद-प्रमोद से ही क्या लाभ ? तब तो यह जीवन प्रपञ्चमय, निरुद्देश्य, विडम्बनामात्र होगा एनी !

एनी की आँखें घूम गईं। मद के सरोवर में किसी ने कंकड़ी फेंक दी। लहरें उठीं और किनारे से टकरा कर विलीन हो गईं। उमंग उठी और शान्त हो गई।

अधर की कोर को दबाते हुए, चिन्ता की मुद्रा से, एनी ने कहा— क्या प्यार के होने से यह जीवन विडम्बनामय नहीं कहा जायगा ?

जोसेफ की बुद्धि इस भाव-भङ्गी के मधुर पाश में प्रथम ही आबद्ध हो चुकी थी। किन्तु जिह्वा पर अभी विकलता का आक्रमण नहीं हुआ था। उसके ओष्ठ खुले और स्वर-लहरी निकल पड़ी—मान लेता हूँ कि विडम्बना तब भी रहेगी, लेकिन इस सृष्टि का रहस्य चाहे विडम्बनामय हो या किसी सत्य पर ही अवलम्बित हो, हमको तो इस जीवन को सुखमय बनाना ही है। और, सुखमय जीवन-यापन करने के लिये प्यार एक आवश्यक सहारा है।

एनी ने उत्तेजित होकर कहा—जब जीवन और सृष्टि का रहस्य ही अप्रकट है, तब इस कल्पित सहारे की आवश्यकता ही क्यों हो ? जिसको जैसे सुख मिले, उसको वैसे ही जीवन-यापन करने दो।

जोसेफ ने शान्त भाव से उत्तर दिया—हमारे प्रयत्न और परिश्रम लक्ष्य-विहीन होकर नहीं चल सकते। लक्ष्य-हीन जीवन असफलता है और असफलता ही दुःख है।

एनी ने दृढ़ होकर कहा—मैं प्यार से रहित जीवन को ही लक्ष्य मानती हूँ। उसीमें मेरा सुख और साफल्य है।

जोसेफ ने गम्भीर आकृति से जवाब दिया—चल नहीं सकेगा एनी ! केवल कपोल-कल्पना से सफलता और सुख नहीं मिलने का। तर्क में पराजय के भय से दुराग्रह क्यों करती हो ?

दन्तावली से चँपे अधर को मुक्त करते हुए एनी ने कहा—यह तो मन मानने की बात है, दुराग्रह कैसा ? सुख और दुःख में कोई भेद नहीं, केवल मानने भर का भेद है। तुम्हारे और मेरे कथन में कोई विशेष भेद नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जोसेफ की आँखों की मादकता उतर गई। रक्त-वर्ण मुख पीला पड़ गया। आँखें आकाश की ओर घूम गईं। उनसे मोती के दाने निकल पड़े। कपोलों ने उनका स्वागत किया, हृदय की धड़कन ने उन्हें सान्त्वना दी।

जोसेफ ने रुँधे कंठ को साफ़ करके कहा—ठीक है. सुख और दुःख तो अपने मानने की बात है। संसार में तो सभी कुछ मानने और न मानने की बात है। पर सुख और दुःख को एक समान मानने की अवस्था तो हमको अभी अपने में उत्पन्न करना है, जो बिना संयम, नियम, प्रेम, साधना और श्रद्धा के असम्भव है। अनुभव यही बताता है।

एनी—और जो सुख तथा दुःख को दो माने?

जोसेफ—उसे सुख की खोज में स्वतः पता चल जायगा कि सुख कहाँ है—प्यार से रहित, उच्छृङ्खल, बन्धन-हीन और अनियमित जीवन में; या प्यार से पूर्ण और बन्धन-युक्त जीवन में। यह तो अनुभव बता देगा, तर्क नहीं। और, अनुभव तो जीवन की साधना का ही एक सर्व-मान्य प्रतिफल है।

जोसेफ चुप हो गया। एनी भी चुप रही। तर्क की दौड़ जब अन्तिम छोर को छूती है, तब मौनता अनायास आ ही जाती है। मनुष्य-जीवन अनुभवों का गट्ठर है। तर्क तो इसके आमोद-प्रमोद की शुष्क सामग्री है।

जोसेफ की आँखें छलछला उठीं।

एनी ने पूछा—इस समय तुम कहाँ हो जोसेफ?

जोसेफ ने विह्वलता के तूफ़ान को दबाकर, धीर-गम्भीर, अस्फुट, एवं वेदनापूर्ण स्वर में कहा—वास्तविकता के जगत् में हूँ एनी!

एनी ने धीरता-पूर्वक मुस्कुराकर पूछा—वहाँ क्या है जोसेफ?

जोसेफ ने गम्भीर होकर कहा—प्यार का पुञ्ज आत्मा की अमरता में केन्द्रित है। आत्मा और प्यार दोनों एक हैं। यदि किसी विश्वात्मा से यह आत्मा कभी कुछ काल के लिये पृथक् हुई, तो प्रेम भी इसके साथ भेजा गया। प्रेम और आत्मा दोनों साथ-साथ भूलोक में अवतीर्ण हुए। किस लिये? उस विश्वात्मा के खेल को सरस और सुखद बनाने के लिये। विश्वात्मा की विभूतियों को यहाँ देखने के लिये। इसीलिये कहता हूँ एनी, प्रेम करो, प्रेम ही ईश्वर है, प्रेम ही आनन्द है, प्रेम ही आत्मा है, प्रेम ही जीवन है।

जोसेफ चुप हो गया। प्रेम की तरंगित लहर में डूबने-उतराने लगा। आँखें संपुटित हो गईं। एनी की आँखें उसके मुख पर अड़ गईं। वह तर्क की पिपासा को शान्त करके ही किसी निर्णय पर पहुँचना चाहती थी। उसने कहा—और वासना (Passion) क्या है जोसेफ?

जोसेफ के स्वप्न-संसार में बाधा पहुँची। उसकी आँखें खुलीं। कहा—प्रेम और वासना में महान् अन्तर है एनी! प्रेम का सम्बन्ध ईश्वर से और वासना का सम्बन्ध क्षणभंगुर शरीर से है। संयमशील और प्रेममय जीवन ही इन दोनों का भेद जान सकता है।

एनी ने जोसेफ को देखा। जोसेफ ने एनी को देखा। दोनों की आँखें मिल गईं। दोनों के हृदय-सन्देश मूक भाषा में परिवर्तित होने लगे। सूर्य्य की ज्योति चन्द्रमा के हृदय से टकराकर चन्द्रिका के रूप में बाहर बिखर उठी। मादकता के चंचल सरोवर में स्थिरता आने लगी। उसी स्थिरता से प्रेम-पद्म का जन्म हुआ।

× × × ×

एनी और जोसेफ का प्रणय परिणय में परिणत हो गया। उत्तर-दायित्व ने कर्त्तव्यशीलता का, माधुरी ने जीवन का, सरसता ने आनन्द का, उल्लास ने निष्ठा का, और संयम ने सादगी का पाणि-ग्रहण किया।

जोसेफ और एनी के जीवन में अब रस था, पारस्परिक सहा-नुभूति थी।

जोसेफ के सारे कार्य एनी को प्रसन्न करने के लिये—उसकी सेवा के लिये—उसकी तृप्ति के लिये होते थे। एनी की चित्तवृत्ति जोसेफ की प्रसन्नता में लीन रहती थी। दोनों सुखी थे। सारा विश्व सुखी था। उनके लिये संसार प्रेममय—सुखमय—था। कहीं एक धब्बा भी ऐसा न था, जो उनको दुःखद हो। उनके जीवन की कठिनाइयाँ ही उनके सुख की साधना थीं। दरिद्रता, दोनों की आन्तरिक सहानुभूतियों को व्यक्त करने की सामग्री थी।

जब किसी दिन मिल बन्द होने पर जोसेफ को काम नहीं मिलता, तब दोनों प्राणियों को सोलहों दण्ड एकादशी करने की नौबत आ जाती। बहुत प्रयत्न करने पर भी दो-दो दिन तक उपवास करना पड़ता। तीसरे दिन भोजन मिलने पर आँखों में आँसू भरकर जोसेफ कहता—तुम्हारे मधुमय जीवन को मैंने सचमुच कंटकाकीर्ण कर दिया एनी! आज तुम किसी राजमहल की शोभा होतीं।

एनी आँखों को ऊपर उठाती, प्रेम और करुणा से आर्द्र दृष्टि से जोसेफ को निहारती हुई कहती—हाँ, राजमहिषी बनती; परन्तु प्रेम और दया को समझनेवाली प्रेमिका नहीं।

जोसेफ दिन-भर प्रमोदमय जीवन बिता कर, रात को रोकर या शुष्क आह-भरी व्यथा के साथ सो रहता।

दो दिनों के उपवास के उपरान्त भी एनी आह्लादमयी हँसी हँस सकती थी। वह कहती—प्रिय जोसेफ, तुमने मुझे मोह के गर्त्त से निकालकर सत्य के शिखरपर खड़ा कर दिया। मैं तुम्हारी कितनी ऋणी हूँ, कह नहीं सकती।

जोसेफ आँसू बहाते हुए कहता—इस दरिद्रता का निर्दय दंश अब बहुत ही तीव्र हो रहा है एनी!

एनी लापरवाही से हँसकर कहती—नहीं जोसेफ, इसीसे तो हमारी आन्तरिक शक्तियाँ स्फुरित होती हैं, हम दया और परोपकार के महत्त्व को समझ सकते हैं।

जोसेफ की आँखें बन्द हो जातीं। वह प्रेम-विभोर हो मन्द स्वर में कहता—ओह! इस सृष्टि का नियम कितना निष्ठुर है!

एनी गम्भीर भाव से उत्तर देती—और उसी निष्ठुरता में जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की यह सरसता भी है जोसेफ। क्या कोई हमारा दारिद्र्य देखकर अनुभव कर सकता है कि हम कितने सुखी हैं ?

समय बीतता गया। कन्या और दो पुत्र उत्पन्न हुए। अब एनी को पड़ोस में एक ट्यूशन मिल जाने से आर्थिक स्थिति कुछ सुधरने लगी। ईश्वर दुःख के बाद सुख दिखलाता ही है।

कोई कष्ट अब न रहा। जीवन अधिक रसमय होने लगा। दाम्पत्य प्रेम की कोमल भूमि में वात्सल्य स्नेह का सुन्दर अंकुर अंकुरित होने से आनन्द की अनुभूति चरम सीमा को पहुँच जाती है। दोनों का जीवन क्रमशः कर्त्तव्य-मय, उत्साहमय और आस्तिक हो गया। दोनों नित्य गिरजा-घर जाने लगे, दीन-दुखियों की सहायता में चित्त देने लगे। ईश्वर में श्रद्धा-भक्ति और परोपकार में प्रवृत्ति बढ़ने लगी।

बरसों के बाद आज काम पर जाते समय जोसेफ ने एनी का आलिंगन किया, बच्चों को चूमा और हसरत-भरी निगाह से घर के कोने-कोने को निहार कर आँखों में आँसू भरे हुए एनी से बिदा माँगा।

एनी ने अधीर होकर पूछा—आज इतने व्यग्र क्यों हो ?

जोसेफ ने मंद स्वर में उत्तर दिया—न मालूम क्यों, आज हृदय की विलक्षण गति हो रही है। आज तुमसे एक क्षण के लिये भी पृथक् होने को जी नहीं चाहता। एनी, मेरे अपराधों को क्षमा करना।

यह कहकर जोसेफ पुनः अधीर हो एनी के गले से लिपट गया। एनी व्याकुल होकर रोने लगी। रुँधे कंठ से बोली—आज तुम काम पर मत जाओ। मेरा जी भी न जाने कैसा हो रहा है।

जोसेफ ने भर्राये हुए स्वर में कहा—आज एक हफ्ते के लिये मिल बन्द होगी। आज न जाने से एक सप्ताह की मजदूरी न मिलेगी।

एनी ने कातर होकर आग्रह-पूर्वक कहा—जाने दो, आज मत जाओ।

घंटों वाद-विवाद चला। एनी के लाख मना करने पर भी जोसेफ चला ही गया। एनी उसको बड़ी दूर तक देखती रही।

सारा दिन एनी व्यग्र रही। किसी कार्य में उसे शान्ति न मिली। भोजन भी नहीं किया। बच्चों को खिलाकर दिन भर जोसेफ की बाट जोहती रही। रह-रहकर उसका कलेजा धड़क उठता।

संध्या हो गई, जोसेफ अभी तक न लौटा। एनी व्याकुल हो घर से निकल पड़ी। पैर तेज़ी से उठते जाते थे, हृदय की धड़कन किसी अज्ञात आशंका से बढ़ती जाती थी। कोई आहट मिलती, तो चौंक कर पुकार उठती—जोसेफ़ !

संध्या का अँधेरा घनीभूत हो गया था। आकाश में मेघों का गर्जन और चपला की चमक तथा पृथ्वी पर झंझावात का झकोरा और मार्ग की निर्जनता एनी के सशंक हृदय को और भी शंकित कर रहे थे। धैर्य छूट रहा था। फिर भी प्रेम का बल था।

वह पागल की भाँति अपनी ही धुन में कोसों आगे बढ़ती चली जाती थी। सहसा किसी के कराहने का शब्द सुन पड़ा। वह सहम गई। छुईमुई के कोमल पत्तों पर किसी निर्दय का कर-स्पर्श हुआ या किसी डूबते हुए को कोई आधार मिल गया।

आवाज़, सड़क की दाहिनी पटरी से, आ रही थी। वह लपक कर उधर बढ़ी। आवाज़ परिचित-सी ज्ञात हुई। घबराकर पुकारा—जोसेफ़ ! जोसेफ़ !!

अश्रु-रुद्ध कण्ठ से उत्तर मिला—एनी !

एनी दौड़ कर जोसेफ से लिपट गई। जोसेफ़ मानों इसी मिलन की प्रतीक्षा में अभी तक जीवित था। एनी के अंग-स्पर्श के साथ ही उसका मस्तक लटक गया !

एनी ने लाख पुकारा; पर चेतना न लौटी। काँपते हाथों से दियासलाई जला कर देखा, तो खुली आँखें उसी की ओर देख रही थीं। उनमें तेज था, आनन्द था और था शरीर-पिंजर से प्राण-पखेरू के उड़ जाने का संकेत !

× × × ×

छब्बीस वर्ष व्यतीत हो गये। तब से आज तक एक भी ऐसी संध्या न बीती, जब इलाहाबाद के सिविल लाइनवाले कब्रिस्तान में, उत्तर तरफ़ की एक कब्र के सामने, एक वृद्धा महिला खड़ी होकर आँसू गिराती न देखी गई हो।

उस कब्र पर लिखा है—"मेरे परम प्रिय प्राणवल्लभ **'चार्ल्स-जोसेफ़'** की स्मृति में, जो ४५ वर्ष, २ मास, २५ दिन की आयु पूरी करके, २५-१२-१९०६ को, इस लोक से बिदा हुए !*

* In Memory of my Dearly Loved Husband Charles Joseph, who departed this life on 25-12-1906; Age 45 years, 2 months, 15 days.

"Sleep dearest husband thy task is ov'r,
Thy hands for us shall toil no more,
No more thy tender eyes shall weep,
Sleep dearest husband gently sleep.
Passing strangers call this not,
A place of dearly gloom,
I love to linger at this spot,
This is my husband's tomb."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिल्पी

शून्य वेणु की पीत शिरा से
रचित तूलिका के हे प्राण
हे उँगली की गहन ग्रन्थि के
कोमल कौशल के अवसान
हे छायामय चित्र-जगत् के
विकच-अचल-आलोक महान
हे हे अपलक चित्र-पटल की
गन्ध-मुग्ध शाश्वत मुसकान
हे सस्मित-सी सधी उँगलियों
के निखरे बिखरे भ्रू-भंग
हे गीले अगणित-रङ्गों के
विन्दु-हृदय में छिपे अनंग
अपनी ही नूतन आकृति से
बिहँस उठा जब द्रुत कण-कण
तब दर्पण-सा हृदय तुम्हारा
किया करुण प्रतिबिम्ब-ग्रहण
एक-विन्दु में मिला तुम्हें
सागर-हृत्कम्पन हे सुकुमार
कूची के गम्भीर अधर में
रज-तम-सत्व-त्रिवेणी धार
सान्त-पटल के हृदय-प्रांत में
भावी छाया-मय संसार
राग-विन्दु में मिला सुनहरा
संसृति के यौवन का द्वार
निशि की अलसाई पलकों से
ढुले ओस में उत्सुक प्यास
छुईमुई में नीरव व्रीड़ा
शून्य-वृन्त में कली-विकास
प्रथम अधर के लघु-चुम्बन में
मुसकानों की अविकच झाग
चकित चिबुक में तिल की सुषमा
छिपे कुचों में पुलकित दाग

इन्द्र-धनुष लज्जित भौंहों में
ग्रीवा में चिर-सञ्चित व्याज
मुक्त-कुन्तलों में आलिंगन
रोम-रोम में उत्सुक लाज

उर-अञ्चल में पारदर्शिता
कृश-कटि में कलशों का लास
चरणों में अभिसरण-तृषा औ'
वयःसन्धि में जृम्भा-रास
पुलकावलि में प्रथम पिपासा
गहन त्रिवलि में तीरथ-राज
ऊरु युगल में मृदु मांसलता
स्मिति में मूक निमन्त्रण साज
पलकों में परिचय की छाया
साँसों में पुलकित पवमान
तम में, प्रियतम के छूने में
तड़िद्प्रवाह, त्रिवेणी-स्नान

श्रुति में जलधर के उदन्त औ'
आँसू में स्मृति के छाले
रोमावलि में मृदु तन्द्रालस
अञ्जलि में अगणित प्याले
व्याज-शयन में मानस-विनिमय
मृदु थपकी में निष्ठुर भार
वाणी में पाथेय पुरातन
रिक्त गात में शत श्रृंगार
चितवन में गम्भीर चितेरा
कम्बु-कण्ठ में करुण पुकार
घूँघट में कम्पित रहस्य औ'
क्रय में विक्रय का व्यवहार

पल्लव के कोमल पलनों में
झुलता वासन्ती संसार
तृण-तोरण की हरियाली में
पुलकित स्वागत का सञ्चार
चञ्चल यौवन में, छवि ही का
निर्निमेष नव पहरेदार
मर्म-मृदुल-उर में पीड़ा का
मिला सु-कोमल शयनागार
तटिनी में फेनिल अवलोकन
तम में उड़ते प्रकृत प्रकाश
ज्योत्स्ना में सुकुमार सेज औ
सुमनों में हिम-जल के हास
भावुक ! तेरे मृदुल लोक में
हुआ प्रतीची ही में प्रात
प्राची में कर पकड़ इन्दु के
आई सन्ध्या पुलकित गात
बिकीं युवतियाँ कुमुद-कला की
करती हैं कृश-कर से छाँह
स्वप्नाऽऽलिंगन में फँस जाती
अञ्चल में प्रियतम की बाँह
मधुर स्वप्न चुम्बन से भरता
ऊषा के अधरों का थाल
चपल चित्रलेखा लिखती है
व्रज-अनंग के अंग-तमाल
तरुण-प्राण पर प्रमदाओं की
चलती चन्द्र-हास करवाल
पर अविराम प्रहार बचाती
निर्निमेष नयनों की ढाल
शुष्क तूलिका के अधरों पर
मौन मसी का वीचि-विलास
थिरक, विश्व के रुदित नयन की
नस-नस में भर देगा हास

श्रीजयकिशोरनारायण सिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथा-साहित्य

श्रीगंगापतिसिंह, बी० ए०, भूतपूर्व हिन्दी-अध्यापक, कलकत्ता-विश्वविद्यालय

कथा-साहित्य से इतिहास-साहित्य में लाभ

भारतवर्ष में, जिस प्रकार अँगरेज़ी के इतिहासज्ञों के ढर्रे पर आधुनिक इतिहास लिखने की प्रथा जारी हुई है, उस प्रकार पहले न थी। साधारणतया प्रत्येक राज्य और प्रान्त तथा प्रतिष्ठित घरानों के इतिहास कथानक रूप में वर्तमान थे, जिनसे क्रमशः विकसित होने पर क्रमबद्ध इतिहास लिखे जाने लगे। यदि वे ऐतिहासिक सामग्रियाँ कथानक रूप में विद्यमान न रहतीं, तो आधुनिक इतिहास-लेखक निविड़ांधकार में टटोलते रहते। किन्तु इन कथानकों और जनश्रुतियों की बदौलत इतिहास की खोज करनेवालों का पथ बहुत-कुछ परिष्कृत हो गया। उन्हें किम्बदन्तियों और कहानियों की टिमटिमाती रोशनी के सहारे चलने में बहुत-कुछ सुविधा मिल गई।

भारत के भिन्न-भिन्न प्रान्तों में ऐतिहासिक तथ्यों का जो कुछ पता चला है—चल रहा है या चलेगा, उनकी भित्ति कहानियाँ ही हैं। क्रमबद्ध इतिहास-ग्रन्थों के अत्यन्ताभाव के कारण जब किसी प्राचीन राज्य के विषय में कुछ खोज करने की आवश्यकता होती है, तब सब से पहले उसके विषय में प्रचलित किम्बदन्तियों का ही आश्रय लेना पड़ता है। उदाहरणार्थ—कुछ इतिहास-लेखक जब सन् सत्तावन के ग़दर वाले वीरवरेन्द्र अमर सिंह और कुँवर सिंह के विषय में खोज करने के लिये बिहार-प्रान्त के शाहाबाद ज़िले में गये, तो वहाँ की जन-श्रुतियों के बल पर ही बहुत-कुछ सामग्री जुटा सके। इसी तरह, भारतवर्ष भर में, दन्तकथाओं से ही ऐतिहासिक तथ्यों का पता चल रहा है। नालन्द, सारनाथ, वैसाली, तक्षशिला, विक्रम-शिला आदि प्राचीन ऐतिहासिक स्थानों में सरकार की तरफ से जो खुदाई हो रही है या हुई है, उसके फल-स्वरूप भारत के बुद्ध-कालीन इतिहास के विषय में बहुत-सी बातों का पता लग रहा है, जिनमें अधिकांश तो कहानियों के ही आधारभूत हैं। उदाहरणार्थ—'सारनाथ' के विषय में राजा चेतसिंह ने जनश्रुतियों और दन्तकथाओं से ही यह बात जान कर कि पुराने ज़माने में वहाँ बड़ी-बड़ी इमारतें थीं—जो अब मिट्टी के अन्दर गड़ी हुई हैं, मजदूरों से खुदाई कराई और वहीं से ईंट-पत्थर मँगवाकर अपने नाम से काशी में चेतगञ्ज नाम का मुहल्ला बसाया। ऐसा सुना जाता है कि एक दिन संयोग से एक संदूक के अन्दर कुछ अशर्फियाँ, ताम्रपत्र, हड्डियाँ आदि मिलीं। धीरे-धीरे यह बात भारत-सरकार के अफसरों तक पहुँची। तब सरकार की ओर से सारनाथ के टीलों को न खोदने की आज्ञा हुई। पीछे खुद सरकार ने खुदाई शुरू की। आज सारनाथ के विषय में अनेक रिपोर्टें और पुस्तकें तैयार हो चुकी हैं। उसका महत्त्व अब सारा संसार जानता है। वहाँ आज समस्त भूमंडल के यात्री पहुंच रहे हैं।

कथा-साहित्य से शिक्षा

संस्कृत के साहित्य-शास्त्र-मर्मज्ञ आचार्यों ने काव्य को तीन भागों में विभक्त किया है—प्रभुसम्मित, मित्रसम्मित, कान्ता-सम्मित। कथा-साहित्य से मित्र-सम्मित उपदेश मिलता है। उसमें लेखक, इष्ट-मित्र की भाँति उपाख्यान कहकर, यह भली-भाँति जता देता है कि अच्छे कर्मों का अच्छा और बुरे का बुरा फल मिलता है। उदाहरणार्थ—रामायण-महाभारत से यह शिक्षा मिलती है कि राम, युधिष्ठिर, नल प्रभृति महापुरुषों की भाँति सदाचरण करना चाहिये, जिससे अन्त में जय, उन्नति और सुख की प्राप्ति होती है। और—रावण, दुर्योधन, शिशुपाल आदि की भाँति पाप-कर्म नहीं करना चाहिये, अन्यथा उससे पराजय, सर्वनाश और पतन अवश्यम्भावी है।

कथा-साहित्य से इसी तरह शिक्षा मिलती है। साहित्य के मूलमंत्र "दुःखे दुःखाधिकान् पश्येत् सुखे पश्येत्सु आधिकान्" की शिक्षा तो इसके द्वारा बहुत ही सुलभ रीति से मिलती है। वास्तव में जब दुःखों से सन्तप्त मनुष्य अपने से कहीं अधिक दुःखी मनुष्य को देखता है, तभी उसे ढाढ़स होता है। इसी तरह जब कोई अपने से अधिक सुखी या धनी या प्रतिष्ठित या विद्वान को देखता है, तब उसका अहंकार टूट जाता है, वह अपनी अपूर्णता का अनुभव करता है, अपनी त्रुटियों को दूर करने के लिये अधिक उद्योगी बन जाता है।

कहानी और गल्प

बहुत-से लोगों की राय में 'कहानी' और 'गल्प' में यह भेद है कि कहानी स्पष्टतया—सीधी तरह—किसी बात को बता देती है, और गल्प उसी बात को घुमाफिरा कर बताती है। बहुतों के मत से गल्प के भी दो भेद माने जाने लगे हैं—छायात्मक और सत्तात्मक। छायात्मक गल्प में मनुष्य की मानसिक परिस्थितियों के चित्रण और विश्लेषण की ओर अधिक ध्यान दिया जाता है। इसमें मनुष्य के मानसिक भाव का ही खेल रहता है, मानवी मनोवृत्ति के ह्रास और विकास को ही विशेष चित्रित किया जाता है। रवि बाबू और शरद बाबू इसीलिये गल्प-लेखकों में शिरोमणि हैं।

परन्तु मेरी समझ में गल्प और कहानी में कोई भेद नहीं है। दोनों एक ही हैं। जैसे 'परमेश्वर', 'ख़ुदा' या 'गौड' सब एक ही हैं। जिसको संस्कृत-भाषा में उपाख्यान, आख्यायिका, कथा आदि कहते हैं; और उर्दू-फ़ारसी में क़िस्सा या कहानी कहते हैं; बँगला-भाषा में उसीको 'गल्प' कहते हैं। हिन्दी में पहले 'गल्प' शब्द का ही प्रचार अधिक था, पर अब उसकी जगह 'कहानी' लेती जा रही है।

गल्प-संसार

यह पहले ही बताया जा चुका है कि भारतवर्ष में कथा-साहित्य-रचना की प्रथा बहुत प्राचीन है। शायद संसार के किसी भी देश में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब इसकी चर्चा तक न थी, तभी यह कला हमारे यहाँ उन्नति के उच्च शिखर पर विराजमान थी। 'पंचतंत्र' ही यदि पाँचवीं शताब्दी के लगभग का लिखा हुआ माना जाय, तो भी बहुत पुराना है।

अँगरेज़ी भाषा का आदिकवि 'चॉसर' (Chaucer) ही माना जाता है। उससे पहले के क्रमबद्ध साहित्य का पता नहीं चलता। हाँ, उससे पहले की कई शताब्दियों से कुछ स्फुट गीतों (Ballads) में कहानियाँ चली आती हैं। बँगला-साहित्य में जिस तरह 'बौद्धगान और दोहा-संग्रह' का स्थान है, फ्रान्स में वही चाञ्जा (Chason) का है। किन्तु भेद इतना अवश्य है कि 'चाञ्जा' से वीरवरों और प्रेमिकाओं के यश एवं शौर्य्य-वीर्य्यादि का वर्णन पाया जाता है, और बौद्धगान में भिक्षु-भिक्षुणियों के शान्त-रस-प्रधान और वैराग्योत्पादक गान हैं।

अँगरेज समालोचकों का मत है कि पाश्चात्य संसार में उन्नीसवीं शताब्दी ही कहानी का युग है। जैसे इंगलैण्ड की महारानी एलिजबथ का ज़माना अँगरेज़ी पद्य-साहित्य का स्वर्ण-युग कहलाता है, वैसे ही महाराज विक्रमादित्य का समय संस्कृत के मध्यकालीन साहित्य का विकास माना जाता है। उन्नीसवीं शताब्दी कहानियों का युग कही जाती है। इसी शताब्दी में बालज़क, फ्लावर्ट, ज़ोला आदि कलाकारों ने गल्प-साहित्य को उच्च शिखर पर पहुँचाया। जर्मनी में, इसी शताब्दी के अन्त में, इस कला का श्रीगणेश हुआ। अँगरेज़ी साहित्य में स्टेविन्सन और किप्लिंग ने सन् १८८५ ई० के लगभग कहानियाँ लिखना शुरू किया। अमेरिका में भी हॉथर्न, पो, ब्रेटहार्ट आदि ने इसी शताब्दी के मध्यकाल के लगभग कहानियाँ लिखीं। रूस में डोस्टावेस्की, तुर्गनेव, गॉर्की और टाल्सटाय ने इसी शताब्दी में आख्यायिकाएँ लिखना आरम्भ कर रूसी-साहित्य का मुख उज्ज्वल कर दिया।

गल्प-लेखन में सत्य की सृष्टि

साहित्य-संसार में वर्त्तमान युग 'गल्प-युग' के नाम से प्रसिद्ध हो रहा है। गल्प-रचना ही इस युग की विशेषता समझी जाने लगी है। गल्प की मनोरञ्जक और लोकप्रिय तथा साहित्य-युग की आधुनिक प्रवृत्ति के अनुकूल बनाने की कठिन समस्या आज-कल के गल्प-लेखकों के सामने प्रायः उपस्थित रहती है। गल्पों की लोकप्रियता पर प्रकाश डालते हुए श्रीयुत रामचन्द्र-रघुनाथ सर्वटे ने प्रयाग के प्रसिद्ध पत्र "भारत" में कुछ महत्व की बातें लिखी थीं। उनके मत से गल्प-लेखन में कला की रुचि तथा अन्य आवश्यक बातों के साथ-साथ सत्य की सृष्टि (Real life) को भी विशेष स्थान प्राप्त है। इसी सत्य-सृष्टि के विषय में आपने जो कुछ लिखा है, उसका अत्यावश्यक अंश उद्धृत करके इस विषय को आज यहीं समाप्त किया जाता है। आप लिखते हैं—"आज-कल लेखकों की सत्य-सृष्टि में उतरने की उत्कट इच्छा होती है, इसलिये कला-संवर्द्धन तो होता ही है; पर साथ-ही-साथ सत्य-सृष्टि में भी बड़ी धाँधली मचाई जाती है। फल यह होता है कि बार-बार विचित्र प्रकार की घटनाएँ घटित हो जाती हैं, जिनसे लेखक पूरी तरह से अनभिज्ञ रहते हैं। औचित्य-भंग कई बार हो जाता है, इसकी गिनती नहीं की जा सकती। सत्य-सृष्टि में यदि प्रेम बारबार भंग हो जाता है, तो कहानियों में वह क्यों न हो? सत्य-सृष्टि में यदि युवक युवती का और युवती युवक का बारबार चुम्बन लेती है, तो कहानियों में ऐसा करने में क्या हर्ज है? इसी प्रकार की घटनाएँ गल्पों में हमेशा उपस्थित होती हैं। फालतू प्रेमालाप, रात्रि का रहस्यमय वातावरण, स्थान, विधि, वेष-परिधान प्रभृति घृणास्पद घटनाएँ पाठकों के सामने ख़ूब नमक-मिर्च लगाकर और अत्यन्त रोचकता के साथ रक्खी जाती हैं। इंगलैण्ड और अमेरिका के समाज के बहुसंख्यक पाठक इसी तरह की गल्पों से भरे हुए मासिक पत्रों के ग्राहक बनते हैं—इसलिये कि उपर्युक्त उत्तेजक घटनाएँ पढ़ते समय उनकी आँखों के सामने उपस्थित हों। गल्पों की लोक-प्रियता का एक मुख्य कारण यह भी है। मालूम नहीं, हमारे यहाँ के गल्प-लेखक भी इस सत्य-सृष्टि को भविष्य में इसी पाश्चात्य प्रकार से अनुकरण करेंगे।"

—[अंक ३ के पृष्ठ ५५ पर इस लेख का पूर्वार्द्ध देखिये]

भारतीय नृत्य का उत्कर्ष

स्नातक शंकरदेव विद्यालंकार

कला मनुष्य के जीवन में सौन्दर्य, सौजन्य, आनन्द और उल्लास लाती है। उसमें भी संगीत और नृत्य-कला में देवांश है। यह बात भारत के प्राचीन शास्त्रों में भी कही गई है। इन दोनों कलाओं का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध है। एक के विकास और अवनति के साथ दूसरी का भी विकास और अवनति सम्बद्ध है। नृत्यकला की व्याख्या एक कलामर्मज्ञ ने इस प्रकार की है—

"नृत्यकला मनुष्य के आन्तरिक मनोरम और कोमल भावों का मूर्त्त रूप है। हमारे जीवन में और धर्म में, प्राचीन समय में, नृत्यकला को जो उच्च स्थान प्राप्त था, वह अब नष्ट हो गया है। उसका मुख्य कारण यह है कि अपने अनेक सामाजिक दोषों के कारण हम धर्म के सच्चे स्वरूप और कला-वृत्ति को भूल गये हैं। और, इस कारण हमारी मानसिक रुचियाँ भी हल्की और अश्लील बन गई हैं। हमारे हृदय में से कला-प्रियता का विनाश हो गया है।"

बीसवीं सदी के प्रारंभिक काल में, भारत में सांस्कृतिक पुनर्विधान के लिये, संगीत और चित्र-कला के क्षेत्र में जो नवीन धाराएँ प्रवाहित हुई और जो नवीन आन्दोलन प्रारंभ हुए हैं, उनके द्वारा उक्त दोनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलाओं का अच्छा विकास हो रहा है। स्वर्गीय संगीताचार्य श्रीविष्णु दिगम्बर पुलस्कर, शिल्पाचार्य श्रीअवनीन्द्रनाथ ठाकुर आदि कलाकारों ने संगीत और चित्रकला में नवीन युग की स्थापना की है। परन्तु अभी तक नृत्यकला की ओर लोगों का पर्याप्त ध्यान नहीं गया है। नृत्यकला-विशारद श्रीउदयशंकर, नाट्यनिपुण श्रीशशिरकुमार भादुड़ी आदि महाशयों ने विदेशों में जाकर भारतीय नृत्यकला की श्रेष्ठता समझाने का अच्छा प्रयत्न किया है। हमारे बन्धुवर नरेन्द्रदेव विद्यालंकार, जो सिनेमेटोग्राफ़ी की कला का अध्ययन करने के लिये जर्मनी गये हुए हैं, 'म्यूनिच' से लिखते हैं—

"हाल ही में यहाँ पर नृत्याचार्य उदयशंकर और उनकी मंडली आई हुई थी। उन्होंने भारतीय नृत्य और भारतीय संगीत के अभिनय करके दिखलाये थे। म्यूनिच नगर की जनता ने उसे बहुत पसन्द किया है। यहाँ के समाचारपत्रों में भी उनकी कला की अच्छी तारीफ़ की गई है। जर्मनी के लोग भारतीय संगीत और नाट्यकला को बहुत पसन्द करते हैं। पिछली बार, क्रिसमस की छुट्टियों में, हम म्यूनिचवासी भारतीय छात्रों ने रवीन्द्र बाबू के 'चित्रांगदा' नाटक का अभिनय किया था। उसे देखने के लिये पहले दिन लोगों की इतनी भीड़ हुई थी कि सब टिकट समाप्त हो गये। अतः उसे अगले दिन भी अभिनीत करना पड़ा।"

इन उदाहरणों से ज्ञात हो रहा है कि विदेशों में अब भारतीय नृत्यकला का मान बढ़ रहा है। भारतवर्ष में भी ज्यों-ज्यों शिक्षा का प्रचार बढ़ रहा है, लोगों की रुचि परिमार्जित और रसग्राही बनती जा रही हैं। महात्मा गांधी ने नृत्यकला की उपयोगिता के विषय में लिखा है—

"'नृत्यकला में शारीरिक विकास को, अंगों की हरकत और संगठन को, पूर्ण स्थान मिलता है। नृत्यकला सीखनेवाली स्त्री अथवा पुरुष के शरीर में एक प्रकार की स्फूर्ति, मरोड़ और दृढ़ता आती है। विशेषतः स्त्रियों के लिये तो यह कला दुगुनी लाभकारिणी है। जापान, जर्मनी आदि देशों में नृत्यकला का अद्भुत विकास हुआ है। वहाँ के स्त्री-पुरुष उसके द्वारा प्रायः निर्दोष आनन्द प्राप्त करते हैं। साथ ही अपने तन-मन का विकास भी कर लेते हैं।"

स्वाध्याय-सामग्री

[१] शुद्ध रामचरितमानस की खोज (लाला सीताराम), हिन्दी-भाषा तथा हिन्दी-साहित्य (शंकरदयालु श्रीवास्तव्य, एम० ए०), गृह-निर्माण-कला (सचित्र, चतुरसेन शास्त्री), साहित्याचार्य पं० पद्मसिंहजी शर्मा (हरिशंकर शर्मा 'कविरत्न'), रूस की शिक्षा-प्रणाली, रचना-शैली ('यादवेन्द्र'), सामाजिक पराधीनता ('निराला'), रूसी साहित्य और रूसी कवि पुश्किन (सम्पादकीय)—'सुधा', ज्येष्ठ। [२] 'साकेत'-परिचय (समालोचना) और आमेर-दर्शन (श्रीशिवनारायण टण्डन—'प्रताप' १२,१९ जून। [३] चतुर्वेदी-युवक-संघ (तृतीयाधिवेशन, इटावा) के सभापति पं० नारायणप्रसाद चतुर्वेदी का भाषण—'गढ़वाली'—११, १८, २५ जून। [४] हुमा को कब चुग़द पहचानता है—'रँगीला', १८ जून। [५] विदेशी पत्रों में भारत ('वक्रतुण्ड'), एक प्रवासी भारतीय की करुण कथा (बनारसीदास चतुर्वेदी)—दै० 'आज', २२ जून। [६] इटली के भाग्यनिर्माता बेन्टो मुसोलिनी—दै० 'अर्जुन', २४ जून। [७] गोस्वामीजी के दो दोहे, लाखों रूसी जवान जापान से लड़ने को तैयार खड़े हैं—सा० 'विश्वमित्र'—१५, २९ जून। [८] हिन्दी-रंगमंच की आवश्यकता (हिन्दी-रंगमंच-संघ के संयोजक का भाषण), नाटक और बायस्कोप, साहित्यिक साधना—'रंगमंच', १,८,१८ जून। [९] आन्तरिक तपस्या—'विजय', १२ जून। [१०] जीवन का उद्देश्य—'वामन', २० जून। [११] 'साकेत' (समालोचना)—'कर्मवीर' १८ जून। [१२] रवीन्द्रनाथ की रेखा-कला, ग्वालियर हि० सा० स० (भास्कर-रामचंद्र भालेराव), चीन की गुप्त मण्डलियाँ; योरप के लचीले नाचघर—'स्वराज्य', ७, १४, २१ जून। [१३] व्यक्ति और समाज, कन्याओं की आत्म-हत्या—'आर्यमित्र', ,९, १६ जून। [१४] फासिज्म क्या है?, क्या फाँसी की सज़ा उठा दी जाय?—'जयाजीप्रताप', १६ जून। [१५] सच्चा सुख कहाँ है?, श्रीलोकनाथ ब्रह्मचारी, भारत के जंगली जानवरों का वंशनाश, औषधिरूप में बर्फ़ का उपयोग—'दैनिक भारतमित्र', ६, १०, १६, २० जून। [१६] धान, कुछ भारत-हितैषी अमेरिकन, अखबारनवीसी, आधुनिक चित्रकला, विमानों की संसार-व्यापी क्रान्ति, सन्त सम्राट मार्कस औरीलियस 'भारत', ५,९,१६,१९—जून। [१७] ताम्बूल-भक्षण-महत्व, प्लेग से बचने के सहज उपाय, विसूचिका या हैजा—'श्रीवेङ्कटेश्वर-समाचार', १०,१७ जून। [१८] गढ़वाली ग्राम्यगीत—'गढ़देश', देहरादून, ११ जून। [१९] अमरपथ (सत्याचरण 'सत्य', एम० ए०), पति पत्नी (वासुदेवशरण अग्रवाल, एम० ए०), विदेशी व्याख्याता (शंकरदेव विद्यालंकार), दाम्पत्यजीवन (विजय बहादुरसिंह, बी० ए०), ललनाओं का भविष्य (हनूमानप्रसाद शर्मा वैद्यशास्त्री), महाभारत-काल में स्त्रियों की दशा—'त्रिवेणी'—(नवयुग अंक), मई। [२०] सोवियट रशिया का फ़िल्म-इतिहास, हिन्दी का प्रश्न (डॉ० कुन्तल कुमारी)—'रंगभूमि' १९,२६ जून। [२१] देशबंधुदासके कुछ संस्मरण, बीवियों की बिक्री—'लोकमान्य', २९ जून।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

——न्यूयार्क (अमेरिका) में संसार के समस्त धर्म और जाति को एक सूत्र में बाँधने और मनुष्य-मात्र में भ्रातृत्व का भाव फैलाने के उद्देश्य से स्थापित 'धर्म-मन्दिर' नाम की प्रसिद्ध संस्था है, जिसने प्रति वर्ष 'धर्म के अमूल्य और पवित्र कार्य' के लिये एक पदक देना निश्चय किया है। प्रथम पदक गत २३ अप्रैल को सर्वसम्मति से "मनुष्य-जाति की सेवा और ईश्वर में विश्वास" करनेवाले महात्मा मोहनदास करमचन्द गांधी को प्रदान किया गया है। उक्त पदक का रूप इस प्रकार है—एक ओर आकाशयुक्त संसार चित्रित किया गया है और बताया गया है कि 'मनुष्य के लिये कर्तव्य पूरा करने का अब भी समय है'। एक ऋषि ऊपर हाथ उठाये हुए प्रकाश-मार्ग की ओर संकेत कर रहे हैं और नीचे ये शब्द अंकित हैं—"जो बहुतों को सत्पथ पर ले जाते हैं वे सदैव नक्षत्रों की भाँति प्रकाशमान रहेंगे।" दूसरी ओर पानेवाले का नाम और सन् अंकित है। इसी ओर पृथ्वी के मानचित्र के पट पर शान्ति की मूर्ति है और ये शब्द अंकित हैं—"कर्तव्य में धर्म ही आन्तरिक वाणी है।"

——महात्मा गांधी के पुत्र श्रीदेवदास गांधी गोरखपुर जेल में विषम ज्वर से पीड़ित थे। महात्मा गांधी ने गोरखपुर के 'कल्याण'-सम्पादक श्रीहनुमानप्रसाद पोद्दार को तार दिया था कि आप देवदास को रोज जाकर देखा करें; पर जेलों के इन्स्पेक्टर जेनरल ने रोज मिलने की इजाजत नहीं दी। पन्द्रह दिन की बीमारी में उनका वजन १५ पौंड घट गया था। पर ईश्वर की कृपा से देवदासजी अच्छे हो गये और अब चिन्ता का कोई कारण नहीं। ——श्री शंकर सहाय सक्सेना एम० ए०, विशारद, (प्रोफेसर, बरेली-कालेज) ने पत्रों में प्रकाशित किया है कि उदयपुर में प्रताप-जयन्ती के अवसर पर महाराणा प्रताप के जुलूस निकालने की प्रार्थना करने पर भी मेवाड़-राज्य ने आज्ञा नहीं दी! प्रताप-जयन्ती को उदयपुर की प्रताप-सभा आज लगभग सात वर्षों से मना रही है, किन्तु न तो स्वर्गीय महाराणा फतहसिंहजी और न वर्तमान महाराना भूपाल सिंहजी ही कभी प्रताप-जयन्ती में सम्मिलित हुए। पन्ना के महाराज तो छत्रसाल-जयन्ती में स्वयं सम्मिलित होते हैं और छत्रसाल के जुलूस में नंगे सर तथा नंगे पैर चलते हैं। उदयपुर के महाराणा प्रताप-जयंती में सम्मिलित होना अपनी मर्यादा के विरुद्ध समझते हैं!——हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (प्रयाग) के प्रबंध-मंत्री ने हिन्दी के पुस्तक-विक्रेताओं तथा परीक्षार्थियों को सूचित किया है कि वे सम्मेलन में केवल उन्हीं पुस्तकों का आर्डर भेजा करें जो सम्मेलन द्वारा प्रकाशित हैं; क्योंकि हम बाहरी पुस्तकें नहीं भेजते।——नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी), साहित्य-गोष्ठी और भगवानदीन-साहित्य-विद्यालय की ओर से हिंदी-प्रेमियों की शोक-सभा श्री 'रत्नाकर' जी, श्रीकिशोरीलालजी गोस्वामी, श्रीशिवनन्दनसहाय तथा श्री-दामोदर सहाय की मृत्यु पर शोक-प्रदर्शन के लिये नागरी-प्रचारिणी सभा-भवन में बुधवार २९ जून को ७ बजे संध्या समय हुई थी।

——"प्रताप"-कार्यालय (कानपुर) के श्रीप्रकाश-शिरोमणि और श्रीदेवनारायण शास्त्री को नोटिस दी गई है कि वे कानपुर के बाहर न जायँ।

——ग्वालियर हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की स्वागत-कारिणी-समिति के प्रधान मंत्री लाला रामजीदास वैश्य ने अपना त्यागपत्र दिया है। कहा जाता है कि अन्य अधिकारी भी त्यागपत्र देने का विचार कर रहे हैं।

——साहित्य-कला-सदन (काशी) की प्रबन्ध-समिति ने ग्रामों में शिक्षा-प्रचार करने के उद्देश्य से गाँव-गाँव में पुस्तकालय और वाचनालय खोलने का कार्य आरम्भ किया है। उसके प्रधान मंत्री श्रीरामशंकर लाल एम० ए० ने लेखकों, प्रकाशकों और पत्रकारों से प्रार्थना की है कि वे अपनी पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं की एक-एक प्रति उनके केन्द्रीय पुस्तकालय (दारानगर, बनारस) में भेजने की कृपा करें।——गत ३० जून से हिंदी-साप्ताहिक "रेलवे-समाचार" अजमेर से प्रकाशित होने लगा। इसमें रेलवे-सम्बन्धी समाचारों का पूर्ण समावेश रहेगा। कर्मचारियों के कष्टों की ओर रेलवे अधिकारियों का ध्यान खींचना, उन्हें दूर कराने की चेष्टा करना, और कर्मचारी तथा अधिकारियों में समान भाव पैदा कराना, इस पत्र के मुख्य उद्देश्य होंगे। इसका मूल्य ३) है।

——कृषि, शिक्षा, सहकारिता, गोवर्धन तथा अन्य सब कृषकोपयोगी विषयों का मासिक पत्र, झाँसी के जिला बोर्ड द्वारा, पहली जुलाई से, प्रकाशित होगा। वार्षिक मूल्य २) होगा।——श्रीकृष्ण-परिषद (कलकत्ता) ने ता० २७ जून सोमवार की रात्रि में प्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटक "पोरस सिकन्दर" बड़ी सजधज के साथ "मिनर्वा थिएटर" के रंगमञ्च पर अभिनीत किया।——आज-कल स्वामी सत्यदेव परिव्राजक, आर्य्य-समाज, जहरीखाल (गढ़वाल) में, ठहरे हुए हैं। आप यहाँ स्थायी रूप से ठहरना चाहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मुद्रक—बजरंगबली गुप्त 'विशारद', श्रीसीताराम प्रेस, काशी।

प्रकाशक—पं० प्रमोदशंकर व्यास, पुस्तक-मन्दिर, काशी।

'सहेली'

बालक-बालिकाओं और गृह-रमणियों के लिए परम सुन्दर उपहार, शिक्षा की अपूर्व सामग्री और मनोरंजन का सर्वोत्तम साधन

अभी लोग विशेषांक से भी ग्राहक बन सकते हैं

'सहेली' के विशेषाङ्क पर सम्मतियाँ

श्रीवेंकटेश्वर-समाचार —

रंग रूप जो 'सहेली' ने पाया वह किसी दूसरी मासिक-पत्रिका के हिस्से में नहीं आया। हर बात में इसकी निराली बात है। आकार, टाइटिल, काग़ज़, छपाई, ब्लाक, कहानी, कविता, लेख, सभी नई शान के साथ 'सहेली' की शोभा बढ़ाने को तैयार रहते हैं। 'सहेली' में कहानियाँ सदैव सचित्र रहती हैं। फिर यह तो विशेषाङ्क है। प्रत्येक लेख सचित्र है, प्रत्येक लेख सुन्दर है, प्रत्येक सुपाठ्य है और हृदयहारी है। कहानियाँ और कवितायें भी एक-से-एक बढ़-चढ़ कर हैं। विशेषाङ्क की जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। सम्पादन और सञ्चालन के लिए जितनी बधाई दी जाय, अपर्याप्त है। भरतमिलाप और बुद्धदेव का मोहत्याग—ये दोनों बहुरङ्ग वाले चित्र भी बड़े भावपूर्ण और मनोहर हैं।

विशाल-भारत—

'सहेली' विशेषकर महिलाओं का पत्र है, इसलिए उसमें अच्छे स्त्री-उपयोगी लेखों का बाहुल्य होना स्वाभाविक ही वै। यह देखकर और भी प्रसन्नता है कि उसके लेखकों में महिलाओं की संख्या कम नहीं। प्रस्तुत विशेषाङ्क में सुन्दर, मनोरंजक तथा उपादेय सामग्री संग्रहीत की गई है। इसके लिए हम हार्दिक बधाई देते हैं।

इस विशेषाङ्क में अनेक सादे चित्रों के अतिरिक्त दो सुन्दर भावपूर्ण रंगीन चित्र भी हैं। छपाई-सफ़ाई के लिए इस कथन में कोई अत्युक्ति नहीं है कि हिन्दी के बहुत कम पत्रों की छपाई-सफ़ाई इतनी बढ़िया होती होगी जितनी 'सहेली' की है।

एजेण्टों को अच्छा कमीशन दिया जाता है। पत्र-व्यवहार करें। 'सहेली' के ग्राहक बनानेवाले पचीस फ़ी सदी कमीशन पाते हैं अर्थात् प्रत्येक ग्राहक से चार रुपए लेकर वे तीन रुपए यहाँ भेज सकते हैं और एक रुपया स्वयं ले सकते हैं।

वार्षिक चन्दा—४), छमाही चंदा २॥), नमूने की प्रति ।=)

ग्राहक बनने के लिए आज ही पत्र लिखिए।

हम हर प्रकार का काम—चाहे वह बड़ा ही कठिन हो अथवा बहुत सावधानी से छापा जाने वाला हो—बहुत ही सुन्दर छापते हैं। एक बार अपना कोई बढ़िया काम हमसे छपाकर परीक्षा कीजिए, सब प्रकार से आप सन्तुष्ट होंगे।

काम भेजकर तख़मीना (इस्टीमेट) मुफ्त मँगाइए

व्यवस्थापक—'सहेली'-कार्यालय, ५ प्रयाग स्ट्रीट, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोलती हुई भाषा और फड़कते हुए भावों का सबसे सस्ता सचित्र मासिक-पत्र

'युगान्तर'

दुर्भाग्य से हिन्दू-समाज में एक महाव्याधि घुस गई है। इस महाव्याधि का नाम है जात-पाँत अर्थात् जन्म के कारण किसी को ऊँचा और किसी को नीचा या अछूत मानना। हिन्दू-समाज की इसी महाव्याधि—जात-पाँत—का नाश करके उनमें समता और बन्धुभाव का प्रचार करने के लिये ही

युगान्तर

का जन्म हुआ है। यह ब्राह्मण और बनिए के जन्म-मूलक भेद को मिटाकर उन्हें रोटी-बेटी के प्रेम-सूत्र में बाँधकर सुसंगठित और शक्तिशाली बनाना चाहता है, क्योंकि जब तक जात-पाँत की बीमारी है तबतक शुद्धि, अछूतोद्धार, हिन्दूसंगठन और स्वराज्यप्राप्ति की चेष्टायें विफल हैं।

युगान्तर

का प्रत्येक लेख, प्रत्येक टिप्पणी, प्रत्येक कहानी नवयुवकों और नवयुवतियों में नई जान डालने वाली और उन्हें कर्त्तव्य-मार्ग दिखानेवाली होती है।

स्त्रियों के लिये

ख़ास तौर पर उत्तमोत्तम लेख रहते हैं।

आज ही

२) मनीआर्डर द्वारा भेजकर वार्षिक ग्राहक बनिये।

आचार्य श्रीमहावीरप्रसादजी द्विवेदी
उपन्यास-सम्राट् श्रीयुत प्रेमचन्दजी बी० ए०
प्रोफ़ेसर महेशप्रसादजी मौलवी आलिम फ़ाज़िल
डाक्टर मंगलदेवजी शास्त्री, एम० ए०
श्री गंगाप्रसादजी चीफ़-जज
श्री स्वामी सत्यानन्दजी महाराज
राज्यरत्न श्रीआत्मारामजी
त्यागमूर्ति भाई परमानन्दजी
श्री नारायणस्वामीजी महाराज
आचार्य श्रीदेवराजजी
डाक्टर लक्ष्मणस्वरूपजी एम० ए०, डी० फिल०

आदि

सभी महानुभावों ने दिल खोलकर पसन्द किया है।

—चाँद—
—हंस—
—सहेली—
—ट्रीब्यून—
—रंगभूमि—
—आर्य्यमित्र—
—बालसखा—
—पतितबन्धु—

आदि

प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं की दृष्टि में तो यह एकदम 'क्रान्तिकारी पत्र' है।

वार्षिक मूल्य—दो रुपये
नमूने का अंक—तीन आने

मैनेजर,

युगान्तर, लाहौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा-महाराजाओं के महलों से लेकर गरीबों की झोपड़ियों तक जानेवाली

एकमात्र सचित्र मासिक-पत्रिका

कविवर अयोध्यासिंहजी उपाध्याय

'वीणा' समय पर निकलती और पठनीय एवं गवेषणा-पूर्ण लेखों से सुशोभित रहती है।

साहित्याचार्य रायबहादुर जगन्नाथप्रसाद 'भानु'

'वीणा' में प्रायः सभी लेखों, कविताओं और कहानियों का चयन अच्छा होता है। सम्पादन कुशलता के साथ होता है।

वीणा

सम्पादक
श्रीकालिकाप्रसाद दीक्षित
'कुसुमाकर'

वार्षिक मूल्य ४) एक प्रति ।=)

साहित्याचार्य स्व० पद्मसिंहजी शर्मा

'वीणा' के प्रायः सब अंक पठनीय निकलते हैं।

सम्पादन बहुत अच्छा हो रहा है।

पं० कृष्णबिहारीजी मिश्र
बी० ए० एल्-एल्० बी
भू० पू० सम्पादक 'माधुरी'

'वीणा' का सम्पादन अच्छा होता है। इसमें साहित्यिक सुरुचि का अच्छा खयाल रखा जाता है।

प्रकाशक — मध्य-भारत-हिंदी-साहित्य-समिति

मिलने का पता — मैनेजर, 'वीणा', इन्दौर, INDORE, C. I.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन पुस्तकों के पृष्ठ-चित्र और

मूल्य आदि का दूसरों से

मिलान करने से आप

देखेंगे कि

सस्तेपन की हद है !

मुफ़्त ग्राहक बनें !

हिंदी की सबसे सस्ती और सबसे सुंदर मासिक पत्रिका

पृ. १४४, ५-६ रंगीन, अनेक सादे चित्र — **सुधा** — वार्षिक ५) छमाही ३) नमूना ॥)

की सफलता और तुलसी-जयंती के उपलक्ष में

केवल पाँच सौ ग्राहक मुफ़्त बनाए जाएँगे

जो सज्जन ६) रु० की माला की पुस्तकें खरीदेंगे, वे छः मास और जो १०) रु० की पुस्तकें मँगाएँगे, वे एक वर्ष के लिये मुफ़्त ग्राहक बनाए जाएँगे। पर कुछ कमीशन नहीं मिलेगा और डाक-व्यय ग्राहक के जिम्मे रहेगा।

पुस्तकें इस सूची में से भी छाँटी जा सकती हैं। अन्य पुस्तकों के लिये बड़ी सूची मँगाइये।

गंगा-पुस्तकमाला का महिलोपयोगी सस्ता साहित्य

पुस्तक — लेखक	पृष्ठ	रंगीन चित्र	सादे	मूल्य
पत्रांजलि—अनुवादक, पं० कात्यायनीदत्त त्रिवेदी	८०	१	०	।-), ।≡)
भारत की विदुषी नारियाँ—संपादिका, श्रीमती कृष्णकुमारी	९६ + ४	१	०	।=), ॥)
नारी-उपदेश—स्व० गिरिजाकुमार घोष	९२	१	०	।=), ॥)
कमला-कुसुम—श्रीमती गिरिजादेवी	१५२ + ८	१	३	॥=), १=)
देवी द्रौपदी—कविवर श्रीरामचरित उपाध्याय	५४ + ६	२	०	।=), ॥)
लक्ष्मी—श्रीगिरिजाकुमार घोष	७६ + ४	४	०	।=), ॥)
महिला-मोद—साहित्य-महारथी पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी	६८ + ८	१	१६	।), ।=)
जच्चा—हिन्दू-विश्वविद्यालय, काशी के कविराज श्रीप्रतापसिंहजी वैद्य	१५८ + ८	१	०	॥=), १=)
देवी सती—मुंशी ज़हूरबख्शजी हिन्दी-कोविद	११६ + ४	२	०	॥), १)
वनिता-विलास—साहित्य-महारथी पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी	९० + ४	३	१	।=), ॥)
गुप्त संदेश—(दो भाग) डॉक्टर युद्धवीरसिंहजी। छप रहा है, मूल्य लगभग				१)
भारतीय स्त्रियाँ—मू० ले०, श्रीमती महारानी साहिबा बड़ौदा ;	२८४ + १६	१	१	१।), १॥)
देवी पार्वती—मुंशी ज़हूरबख्शजी हिन्दी-कोविद	१४२ + ८	१	५	॥=), १=)
नल-दमयन्ती—मुन्शी ज़हूरबख़्शजी हिन्दी-कोविद	१५२ + ४	१	०	॥=), १=)
सती सावित्री—अध्या० हरिप्रसाद द्विवेदी 'श्रीहरि'	१४२ + ४	१	०	॥), ॥।), १)
देवी सीता—मुंशी ज़हूरबख्शजी हिन्दी-कोविद	२५४ + ८	२	१३	१।), १॥)
देवी शकुंतला—श्रीहरिप्रसादजी द्विवेदी	१०२ + ४	२	२	॥), १)
स्त्रियों के व्यायाम—विद्यावाचस्पति पं० गणेशदत्त शर्मा गौड़	१७२ + १२	१	३०	१), १॥)

बालकोपयोगी सस्ता साहित्य

पुस्तक — लेखक	पृष्ठ	रंगीन चित्र	सादे	मूल्य
सुघड़ चमेली—पं० रामजीदास भार्गव	३०	०	३	-)
भगिनी-भूषण—स्वर्गीय गोपालनारायणसेनसिंह बी० ए०	३०			-)
बाल-नीति-कथा—(दो भाग) मू० ले०, प्रिंसिपल ध्रुव	४६२ + २०	२	०	२), ३)
गधे की कहानी—पं० भूपनारायणजी दीक्षित बी० ए०, एल० टी०	१२२ + ४	१	६	॥), १)
लड़कियों के खेल—श्रीगिरिजाकुमार घोष	७८ + ४	१	६	।-), ।≡)
नटखट पाँड़े—पं० भूपनारायणजी दीक्षित बी० ए०, एल० टी०	१९६	४	१०	१), १॥)
परोपकारी हातिम—मुंशी ज़हूरबख्शजी, हिन्दी-कोविद	२०२ + ४	२	२	१), १॥)
इतिहास की कहानियाँ—मुंशी ज़हूरबख्शजी, हिन्दी-कोविद	८२	१	३	।=), ॥)
विचित्र वीर—हास्यरसावतार पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी	१३२ + १२	०	५	॥), १)
हँसी-खेल—श्रीजगमोहन विकसित	११८ + ८	०	४२	॥), १)
सुनहरी नदी का राजा—स्वर्गीय पं० ईश्वरीप्रसादजी शर्मा	५० + ४	२	७	।=), ॥=)
भगवान् गौतम बुद्ध—स्वर्गीय पं० ईश्वरी प्रसादजी शर्मा	६४ + ४	१	०	।), ।=)
युधिष्ठिर—श्री कृष्णगोपालजी माथुर	११४ + ४	१	०	॥), १)
क़ाग़ज़ी करतब—श्रीयुत जी० पी० श्रीवास्तव	९६ + ८	०	९०	॥=), १=)
घरेलू कहानियाँ—कुमारी गोपालदेवी हिन्दी-प्रभाकर				।=)

गंगा - पुस्तकमाला - कार्यालय, लखनऊ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मुद्रक विज्ञापन के काम 'सरस्वती-प्रेस' काशी में मुद्रित।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक-मन्दिर की अपनी

'जागरण'-ग्राहकों को पौन मूल्य में

दस पुस्तकें!

पेरिस का कुबड़ा—मूल लेखक—विक्टर ह्यूगो। अनुवादक—श्रीयुत दुर्गादत्त सिंह, बी० ए०, एल-एल० बी०। अत्यन्त आकर्षक एवं उपदेशपूर्ण फ्रेंच उपन्यास। ३)

आँधी—हिन्दी के परम यशस्वी कहानी-लेखक 'प्रसाद' जी की सरस-भावपूर्ण ग्यारह कहानियाँ। २)

हिन्दी की श्रेष्ठ कहानियाँ—संग्रह-कर्त्ता—'भारत'-सम्पादक पं० नन्ददुलारे वाजपेयी, एम० ए०। हिन्दी के १३ कलाकुशल कथाकारों की चुनी हुई १३ श्रेष्ठ कहानियाँ। १॥)

एक घूँट—हिन्दी के स्वनामधन्य नाटककार श्रीयुत जयशंकर 'प्रसाद'जी की एकांकी नाटिका। ॥)

नर-पशु—रूसी उपन्यास, मैक्सिम गोर्की-लिखित। प्रकाशित हो गया। १)

वे तीनों—मूल लेखक, मैक्सिम गोर्की। अनुवादक—पं० छविनाथ पाण्डेय, बी० ए०, एल-एल० बी०। अत्यन्त रोचक एवं शिक्षाप्रद रूसी उपन्यास। २)

धूप-दीप—पं० विनोदशंकर व्यास की लिखी हुई पाँच राजनीतिक कहानियाँ। ।॥)

बुढ़िया पुरान—श्री महावीरप्रसाद गहमरी लिखित, यह पुस्तक स्त्रियों के लिये अपने विषय की अकेली है। ॥)

भूली बात—हिन्दी के सिद्धहस्त कहानी-लेखक पं० विनोदशंकर व्यास की युगान्तर-कारिणी कहानियाँ। १)

शराबी—हिन्दी के बड़े मस्त और ज़बरदस्त उपन्यास-लेखक श्री 'उग्र' जी का हड़कम्पी उपन्यास। २)

प्रकाशक—पुस्तक-मन्दिर, काशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाह-मन्दिर

सांसारिक आपत्तियों में डूबे हुए मनुष्यों के लिए यह उपन्यास ईश्वरीय सन्देश है। विपत्ति-काल में मनुष्य को किस प्रकार स्थिरचित्त होना चाहिए; इसका अत्यन्त सुन्दर वर्णन आपको मिलेगा।

स्त्रियों के लिए यह पुस्तक अमूल्य रत्न है। अपर्णा देवी का चरित्र पढ़कर प्रत्येक स्त्री अपना जीवन सफल बना सकती है। उसका आदर्श पति-प्रेम, एवं दारुण परिस्थिति में सर्वदा प्रसन्न रहते हुए पति को क्षणमात्र के लिए भी दुखी न होने देना वे अलौकिक गुण हैं, जिन्हें प्रत्येक भारतीय रमणी को हृदयङ्गम करना चाहिए। मूल्य १॥)

नीच

यह नाटक भारतीय समाज में जीवन-संग्राम का जीता-जागता चित्र है। हिन्दू-संस्कृति के स्तम्भ, वानप्रस्थ जीवन व्यतीत करनेवाले संन्यासी के अधरों से एक प्रेम का मधुर गान निकलकर इस नाटक के वायु-मण्डल में एक विचित्र प्रकार की मस्ती, सुषमा, श्री, देवत्व का प्रभाव डाले हुए है। यह नाटक प्रकृति, सत्य तथा मानव-हृदय के विकारों के युद्ध की छाया है। मूल्य केवल १) रु०

प्राणेश्वरी

ख्यातनामा कहानी-लेखक डॉ० धनीराम प्रेम का यह हास्यरसपूर्ण नाटक सिर से पैर तक मौलिक है। लन्दन के सैकड़ों नाटकों के व्यक्तिगत अनुभवों के बाद यह नाटक लिखा गया है। इसमें ऐसे-ऐसे सुन्दर गाने आपको मिलेंगे कि पढ़कर हृदय मुग्ध हो जायगा। बातचीत इतनी मनोहर, हास्यपूर्ण, मनोरञ्जक तथा मौलिक है कि हँसते-हँसते पेट में बल पड़ जायँगे। मूल्य लागत मात्र केवल ॥।)

मृदुदल

इस कृति के भीतर आपको निखरे हुए सौन्दर्य का बोध होगा। अनुभूति की सुकुमारता और मादकता, जीवन-मल को धो डालनेवाली वेदना की करुण विवृति, अन्धकार के ऊपर प्रकाश की विजय, कवित्वमयी भाषा के साथ मङ्गलमय भावों का सुन्दर समन्वय इसी पुस्तक में पावेंगे—और पाकर निहाल हो जायँगे। केवल एक कहानी पढ़कर आप आनन्द से गद्गद हो जायँगे। मूल्य केवल २।) रु०

अञ्जलि

यह उन अनमोल कहानियों का संग्रह है, जो आज तक हिन्दी-संसार में दुर्लभ थीं। इस संग्रह की प्रत्येक कहानी अत्यन्त रोचक, मधुर एवं अमूल्य है। जिस विषय को लेकर जो कहानी लिखी गई है, उसका उसमें सजीव चित्र खींचा गया है। किसी में दीनता की करुण पुकार भरी है तो किसी में वीर-रस की धारा प्रवाहित हो रही है। अधिक प्रशंसा न कर हम इतना ही कहना चाहते हैं कि ऐसी कहानियाँ आपने आज तक न पढ़ी होंगी। मूल्य ॥।)

ईसाई-बाला

यदि आप राष्ट्रीय एवं शिक्षाप्रद उपन्यास पढ़ना चाहते हैं तो एक बार इसे अवश्य पढ़ें। इसके कुछ पृष्ठ पढ़ते ही आप आनन्द से गद्गद हो उठेंगे। एक ईसाई युवती भारत की गुलामी से व्याकुल होकर किस प्रकार अपने भोग-विलासों को ठुकरा देती है और स्वातन्त्र्य-संग्राम में कूदकर किस प्रकार अनेकों यातनाएँ झेलती हुई अपने ध्येय को सिद्ध करती है—इसका सनसनीदार वर्णन पढ़कर आप रोमाञ्चित हो उठेंगे। शीघ्र ही मँगा लीजिए; केवल थोड़ी सी प्रतियाँ और शेष हैं। मूल्य लागत-मात्र ॥।)

मँगाने का पता—चाँद प्रेस लिमिटेड, चन्द्रलोक—इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सिर्फ कवर इंडियन प्रेस, लिमिटेड, बनारस-ब्रांच में मुद्रित

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जागरण

साहित्यिक पाक्षिक पत्र

क्या आप 'जागरण' की आवश्यकता अनुभव करते हैं ?

क्या 'जागरण' से आपका कुछ मनोरंजन होता है ?

यदि हाँ, तो इसकी सहायता के लिये अब तक आपने क्या किया ?

कृपया इस पर अवश्य ही विचार कीजिये

वार्षिक मूल्य ३)
छमाही ,, १॥)

विदेशों के लिये ४)
प्रति अंक =)

पुस्तक-मन्दिर काशी द्वारा प्रकाशित

सम्पादक-शिवपूजन सहाय

वर्ष १

अंक १२

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशाल-भारत

वार्षिक मूल्य ६)] **हिन्दीका श्रेष्ठ सुन्दर सचित्र मासिक पत्र** [एक अंक ।ॾ)

'प्रताप' की राय है

"....'विशाल-भारत' शुरूसे अब तक बराबर अपने पाठकोंके सामने बहुत सुन्दर, सुरुचिपूर्ण और उनके मानस-क्षितिजको ऊँचा उठानेवाले लेखों और कविताओंको उपस्थित करनेका यत्न करता रहा है। इसमें उसे बहुत अधिक सफलता मिली है।

'विशाल-भारत' के लेखोंके चयन, श्रेष्ठ सामग्रीके संकलन, गेट-अप आदिमें बराबर ही बड़ी सावधानीसे काम लिया जाता है। और यही कारण है कि पत्र इतना अच्छा निकलता है।

इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि आजकलकी हिन्दी पत्र-पत्रिकाओंमें 'विशाल-भारत' बिलकुल बेजोड़ और सर्वोत्कृष्ट पत्र है। हिन्दी-भाषा-भाषी सभी सज्जनोंसे हमारा अनुरोध है कि वे इस श्रेष्ठ पत्रको अपनाकर हर मास अनेक नई-नई बातें और ऊँचे विचार मनन करनेके सुअवसरसे लाभान्वित हों।" —'प्रताप'

हमारे यहांकी पुस्तकें

१—"कुमुदिनी" उपन्यास— रवीन्द्रनाथ ठाकुर मूल्य ३)	५—"लम्बकर्ण" (सचित्र हास्य)—परशुराम मूल्य १)
२—"रूसकी चिट्ठी" (सचित्र)— " " १।।)	६—"भेड़ियाधसान"— " " " १।)
३—"षोड़शी" (कहानियाँ)— " " १।।)	७—"क्रान्तिकारी कार्लमार्क्स"— ... " ।।)
४—"गल्पगुच्छ" (कहानियाँ)— " " २।)	८—"प्रेम-प्रपंच" (उपन्यास)— ... " १)

मंगानेका पता :—"विशाल-भारत" कार्यालय, १२०।२, अपर सरकुलर रोड, कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'पुस्तक-मंदिर' की नवीन पुस्तक

काम-सम्बन्धी भारतीय तथा विदेशीय ज्ञान का भंडार !

काम-दर्शन

[Eugenics–Eastern & Western]

लेखक—श्रीयुत हरिहरनाथ बी॰ ए॰

भूमिका-लेखक—पं॰ बाबुराव विष्णु पराड़कर ('आज'-सम्पादक)

'In no other department of life, as much as in Sexual, we find closely associated the noblest and the basest, the Superhuman and the Subhuman; because the finest and the deepest root of our spiritual and bodily existence spring from this soil......'———**Albert Eulenburg**.

But

'Alas! complete ignorance of that has unfortunately wrecked many a man and many a woman, while a little knowledge of the subject would have enabled people to have understood many things which they believed to be quite incomprehensible or which were not thought worthy of their consideration.'

———**Al Fournier**.

काम-सम्बन्धी घासलेटी साहित्य के बाहुल्य तथा सच्चे काम-विज्ञान की पुस्तकों के अभाव के कारण, आज दिन हम लोगों में काम-ज्ञान न केवल लज्जास्पद समझा जाने लगा है और न केवल उसके पवित्र एवं उपयोगी स्वरूप का लोप हो गया है, प्रत्युत् काम जैसे अत्यन्त अनिवार्य तथा महत्वपूर्ण विषय के अज्ञान और दुरुपयोग से हमारा दाम्पत्य-जीवन नीरस एवं सामाजिक जीवन कलुषित हो रहा है। यह पुस्तक इन्हीं दोषों को दूर करने के विचार से लिखी गई है और इसका उद्देश्य हिन्दी-संसार में उस आदर्श काम-विज्ञान को उपस्थित करने का है जिसके ही सम्बन्ध में लिखा गया है कि—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

—इसके पीछे देखिये

केवल विज्ञापन के फार्म 'सरस्वती-प्रेस' काशी में मुद्रित ।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'It should he studied by all, both old and young : the former will find in it real truths gathered by experience and already tested by themselves while the latter will derive the real advantage of learning things which some perhaps may otherwise never learn at all, or which they may learn only when it is too late to profit by the learning.'———**Fr. Trans.**

पुस्तक की अत्यन्त अनुपम विशेषता यह है कि इसमें दो हज़ार वर्ष पूर्व के वात्स्यायन-काम-सूत्र से लेकर कोक आदि लिखित भारतीय पुस्तकों के सम्पूर्ण विषयों का संग्रह करके उनके मर्म और रहस्य को खोलने तथा उनके उपयोग वा दुरुपयोग पर प्रकाश डालने के लिए विलायत की इंगलिश, जरमन, लैटिन आदि भाषाओं की पुस्तकों में अंकित काम-विज्ञान का भी संग्रह किया गया है। इस प्रकार यह ग्रन्थ काम-शास्त्र का ऐसा भंडार है जिसका एक-एक नोट देशी और विदेशी भाषाओं की पूरी-पूरी पुस्तकों का विषय है। अतएव उसकी उपयोगिता केवल भारतीयों के लिये नहीं वरन् विदेशियों के लिये भी है। इसके अतिरिक्त भारतीय संस्कृति को सामने रखकर लिखी जाने के कारण जनन-व्यवस्था, सन्तान-निरोध, दाम्पत्य जीवन आदि विषयों की ऐसी विवेचना की गयी है कि उसको पढ़कर उक्त विद्या का पूर्ण ज्ञान होने के साथ ही साथ उनके सम्बन्ध के निरे विलायती आदर्श पर लिखे गये लेखों और पुस्तकों की हम भारतवासियों के लिये अनुपयुक्तता प्रतीत होने लगती है।

लेखनशैली दार्शनिक है और ज्ञानवृद्धि तथा उपयोग ही ध्येय होने के कारण कामुकता को भूलकर भी स्थान नहीं मिला है। अतएव पुस्तक वर-कन्याओं के लिये भी संग्रहणीय है।

'The benefits which the unreserved scientific education of the sexual problem is able to diffuse throughout the widest circle of the population are so extensive that the consideration of any possible harm that may ensue becomes infiniti-simal in comparison.'——**A Von Schrauch Notzing.**

छपाई, सज-धज अत्यन्त मनोहारिणी—सजिल्द, पृष्ठ-संख्या लगभग ३५०.

मूल्य ३)

ध्यान दीजिये—"पुस्तक-मंदिर" और "जागरण" के ग्राहकों को यह अमूल्य पुस्तक पौने मूल्य २।) में ही मिलेगी।

आर्डर भेजिये ! शीघ्रता कीजिये !

मैनेजर—पुस्तक-मंदिर, बनारस-सिटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक-मंदिर की दूसरी नवीन पुस्तक

नर-पशु

संसार-विख्यात रूसी क्रान्तकारी

मैक्सिम गोर्की

का

नया उपन्यास !

मूल्य
एक रुपया

नया उपन्यास !

टेलीफोन
नं. ८५

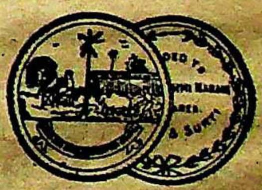

तार का
पता—सुर्ती

स्थापित सन् १८९५

क्या आप सुर्ती-जर्दा के शौकीन हैं ? तो इसे देखिए—

भारत के सबसे प्रसिद्ध

काशी के बदलराम-लक्ष्मीनारायण की दूकान से खरीदिए

कितनी ही प्रदर्शिनियों से सोने के पदक और प्रशंसापत्र मिले हैं

सुगन्ध और स्वाद के लिए सदैव बदलराम-लक्ष्मीनारायण की प्रसिद्ध काशी की सुर्ती, जर्दा, पान-मसाला और तम्बाकू इत्यादि व्यवहार कीजिए। आप सन्तुष्ट और प्रसन्न होंगे। इन उत्तम सुर्तियों में कोई ऐसी वस्तु नहीं पड़ी है जो शरीर को हानि पहुँचा सके। यही इस कारखाने की विशेषता है। बड़ा सूचीपत्र मँगाकर देखिए।

ब्रान्च— { १४४ हरिसन रोड, कलकत्ता।
आमपट्टी, ढाका।

निवेदक—बदलराम-लक्ष्मीनारायण
(गोल्डमेडलिस्ट) बनारस सिटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जागरण पर हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओं और लेखकों का क्या मत है?

दैनिक 'वर्त्तमान'—छपाई-सफ़ाई तथा विषय-बाहुल्य की दृष्टि से पत्र बहुत अच्छा निकला है। हिन्दी के अच्छे-अच्छे लेखकों और कवियों का सहयोग प्राप्त कर साहित्य-क्षेत्र में यह एक उच्च कोटि का पत्र हो जायगा, ऐसी आशा है। हिन्दी-प्रेमियों को इसका आदर करना चाहिये।

साप्ताहिक 'कर्मवीर'—अभी तक हिन्दी-जगत् में पूर्ण रूप से साहित्यिक पत्र का सर्वथा अभाव था। इस अभाव का खयाल करके 'जागरण' का प्रकाशन होने लगा है। काशी में तो हिन्दी के कलाकारों का जमघट मौजूद है और ऐसी हालत में 'जागरण' उनका सहयोग पाकर एक ऊँचे दर्जे के साहित्यिक पत्र में परिणत होने के लक्षण प्रकट कर रहा है।

'वीणा'—अभी काशी से 'जागरण' नाम का एक बहुत सुन्दर पाक्षिक पत्र प्रकाशित हुआ है। यह पत्र हिन्दी के एक विशेष अभाव की पूर्त्ति अवश्य करेगा।

'सहेली'—हमें विश्वास है कि लोग इस पत्र को बहुत पसन्द करेंगे एवं अपनावेंगे।

'चाँद'—पत्र अंग्रेज़ी के 'पञ्च' के ढंग पर निकल रहा है। शिवपूजनजी की लेखनी से निकले हुए चुटकुले बड़े सजीव और सुन्दर होते हैं।

'विशाल-भारत'—हिन्दी-प्रेमियों से हमारा हार्दिक अनुरोध है कि अधिकाधिक संख्या में इसके ग्राहक बनें। 'जागरण' का भविष्य निस्सन्देह उज्ज्वल प्रतीत होता है।

'स्वराज्य'—किसी अंश में यह 'लिटरेरी डाइजेस्ट' का काम करेगा।

दैनिक 'आज'—इसे सभी लब्ध-प्रतिष्ठ लेखकों का सहयोग प्राप्त है।

'माधुरी'—'जागरण' की सामग्री का संकलन सुरुचिपूर्ण और उपयोगी है। साहित्यसेवियों के लिये पत्र में मनोरंजन का काफ़ी मसाला रहता है।

'सुधा'—पत्र की साज-सज्जा मनोहर है।

'आर्यमित्र'—'जागरण' के पढ़ने में तबीयत लगती है और आनन्द आता है। इसमें जितनी सामग्री रहती है वह सब ही प्रायः साहित्यिक सीमा के अन्तर्गत ही होती है। यहाँ तक कि समाचार भी साहित्यिक ही दिये जाते हैं।

'जयाजी'प्रताप—हिन्दी-संसार में एक विशुद्ध साहित्यिक पत्र की जो कमी थी, प्रतीत होता है कि 'जागरण' उसकी पूर्ति भली प्रकार कर सकेगा। स्वाध्याय-सामग्री सचमुच उपयोगी स्तम्भ है।

पं० चन्द्रमौलि सुकुल एम० ए०—इसके छोटे, किन्तु विचार-पूर्ण लेख, उत्तम कविताओं का चुनाव, सुरुचिपूर्ण हास्य-विनोद तथा समालोचनाएँ—सभी उत्तम होती हैं। 'जागरण' के प्रकाशन से साहित्य-संसार की एक बड़ी कमी पूरी हुई।

प्रोफेसर पं० बदरीनाथ भट्ट—मुझे जो आशा थी, उससे कहीं अच्छा 'जागरण' निकला। साहित्यिकों के लिये तो खास चीज़ हैं।

कविवर पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'—'जागरण' पढ़कर तबीयत बहुत खुश हुई। शीघ्र ही पत्र की प्रतिष्ठा बढ़ जायगी, इसमें जरा भी सन्देह नहीं। पत्र प्रथम अंक से ही आकर्षक है।

श्री० कालिदासजी कपूर, एम० ए०—सम्पादन में नवीनता है और सुचारुता भी। इसके अतिरिक्त काशी की मित्र-मंडली क्या कम है। 'विनोद' और 'प्रसाद' के सहयोग से 'जागरण' में आनन्द-ही-आनन्द रहेगा।

श्री० सुदर्शनजी—आपका यह छोटा-सा परचा अन्य बड़े-बड़े परचों से कहीं अच्छा है। इसका हर-एक पृष्ठ, हर-एक लेख, हर-एक हेडिंग पुकार-पुकार कह रहा है कि इस उद्यान का माली बड़ा चतुर है।

पं० विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक'—'जागरण' बहुत सुन्दर निकला।

श्री० दुलारेलाल भार्गव, 'सुधा'-संपादक—इतना सुन्दर पत्र निकालने के लिये बधाई।

श्री० हनुमानप्रसाद पोद्दार, 'कल्याण'-सम्पादक—बहुत अच्छा पत्र निकाला। साधुवाद।

पं० रामसेवक त्रिपाठी, 'माधुरी'-सम्पादक—पत्र का अच्छा आदर होगा और 'जागरण' हिन्दी-साहित्य-संसार में सच्ची जागृति फैलायेगा। मेरी हार्दिक बधाई।

ठाकुर श्रीनाथसिंह, 'बालसखा'-सम्पादक—'जागरण' मुझे बहुत पसन्द आया।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जागरण

समालोचना-प्रधान शुद्ध साहित्यिक सचित्र पाक्षिक पत्र

[वर्ष १, खंड १, अंक १–१२]

[वसन्त-पंचमी संवत् १९८८ से आषाढ़-पूर्णिमा सं० १९८९ तक]

[११ फरवरी सन् १९३२ ई० से १७ जुलाई सन् १९३२ ई० तक]

सम्पादक

शिवपूजन सहाय

प्रकाशक

प्रमोदशंकर व्यास

पुस्तक-मन्दिर

बनारस-सिटी

मुद्रक

बजरंगबली गुप्त 'विशारद'

श्रीसीताराम प्रेस, बुलानाला, काशी

वार्षिक मूल्य ३) | प्रति अंक =) | विदेश के लिये ५)

प्रथम खंड सजिल्द २)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक-मन्दिर की अपनी विख्यात

दस पुस्तकें !

पेरिस का कुबड़ा—मूल लेखक—विक्टर ह्यगो। अनुवादक—श्रीयुत दुर्गादत्त सिंह, बी० ए०, एल-एल० बी०। अत्यन्त आकर्षक एवं उपदेश पूर्ण फ्रेंच उपन्यास। ३)

आँधी—हिन्दी के परम यशस्वी कहानी-लेखक 'प्रसाद' जी की सरस-भावपूर्ण ग्यारह कहानियाँ। २)

हिन्दी की श्रेष्ठ कहानियाँ—संग्रह-कर्त्ता—'भारत'-सम्पादक पं० नन्ददुलारे वाजपेयी, एम० ए०। हिन्दी के १३ कलाकुशल कथाकारों की चुनी हुई १३ श्रेष्ठ कहानियाँ। १।।)

एक घूँट—हिन्दी के स्वनामधन्य नाटककार श्रीयुत जयशंकर 'प्रसाद'जी की एकांकी नाटिका। ।।)

नर-पशु—रूसी उपन्यास, मैक्सिम गॉर्की-लिखित अत्यंत रोचक। १)

वे तीनों—मूल लेखक, मैक्सिम गॉर्की। अनुवादक—पं० छविनाथ पाण्डेय, बी० ए०, एल-एल० बी०। अत्यन्त रोचक एवं शिक्षाप्रद रूसी उपन्यास। २)

धूप-दीप—पं० विनोदशंकर व्यास की लिखी हुई पाँच राजनीतिक कहानियाँ। ।।।)

बुढ़िया पुरान—श्री महावीरप्रसाद गहमरी-लिखित, यह पुस्तक स्त्रियों के लिये अपने विषय की अकेली है। ।।)

भूली बात—हिन्दी के सिद्धहस्त कहानी-लेखक पं० विनोदशंकर व्यास की युगान्तर-कारिणी कहानियाँ। १)

शराबी—हिन्दी के बड़े मस्त और ज़बरदस्त उपन्यास-लेखक श्री 'उग्र' जी का हड़कम्पी उपन्यास। २)

प्रकाशक—पुस्तक-मन्दिर, काशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेख-सूची

[१] आलोचनात्मक लेख (१७)— पृष्ठ
आत्मकथा क्या साहित्य अंग नहीं है ? (श्रीयुत प्रेमचन्दजी) १२
कवि और वैज्ञानिक (श्रीपरिपूर्णानन्द वर्मा) ... १७१
कविता और विज्ञान (श्रीयुत 'प्रियहंस') ... २९६
कैसी आत्मकथा साहित्य का अंग है ? (पं० नन्ददुलारे वाजपेयी, एम० ए०, 'भारत'-सम्पादक) ५२
चरित्र (पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला') ... १७५
डाक्टर केतकर के हिन्दी-ज्ञान के कुछ नमूने (पं०आनन्दराव जोशी) १४१
त्रिपाठीजी का ताण्डव नृत्य (पं० मनोहरलाल मिश्र, आयुर्वेदशास्त्री) १३४
बिहारी और सौन्दर्य-विज्ञान (श्रीगुलाबराय, एम० ए०) ... २९
बिहारी का ग्राम-वर्णन (प्रोफेसर मनोरंजनप्रसादसिंह, एम० ए०) १४
भारतेन्दु-नाटक-मण्डली १५७
,, ,, का अभिनय १३६
मराठी-भाषा के साहित्य-शिल्पी (प्रोफेसर बलवन्त-गणेश खापर्डे) ११८
योरप के साहित्यिक सिद्धान्त (श्रीकृष्णदेवप्रसाद गौड़, एम० ए०) ६५
समालोचना (श्रीहरिहरनाथ, बी० ए०) २८९
सुन्दरता क्या है ? (श्रीपरिपूर्णानन्द वर्मा) ... २१२
सौन्दर्य-तत्त्व (श्रीलक्ष्मीकान्त झा) ४२
हिन्दी-भाषा पर द्विवेदीजी का प्रभाव (पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, 'साहित्यरत्न') १८६

[२] कविताएँ (३२)—
"?" (श्रीजयशंकर 'प्रसाद') २२५,२७३
अनुरोध (श्रीयुत जगन्नाथप्रसाद 'मिलिन्द') ... १७९
अप्सरा (श्रीसुमित्रानन्दन पन्त) ११६
अमृत-कंठ से (श्रीरामनाथलाल 'सुमन') १७८
आना (पं० राममणि त्रिपाठी) १६७
उद्बोधन ('मिलिन्द') २०
उनके प्रति (श्रीमती कमलाकुमारी देवी) ... २४२
कहो न अब आई होली (ठा० श्रीनाथसिंह, 'बालसखा'—सम्पादक) ९०
कुसुम-जीवन (श्रीसुमित्रानन्दन पन्त) १२९
गीत (पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला') ४९, १०५,१७७,२०२,२४९
चाँदनी (पं० सुमित्रानन्दन पन्त) ७७
ज्वाला ('प्रसाद') ९१
जागरण ('प्रसाद'; कुमारी राजराजेश्वरी देवी 'नलिनी') १,११२
जीवन (श्रीमती कमलाकुमारी देवी) ६५
डाल (,, ,,) १६४
मत पूछो (श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान) ... १५३
मधु (श्रीगोपालसिंह नेपाली) २८६
मधु-ऋतु (,, ,,) १७३
वरुणा की शान्त कछार ('प्रसाद') १६
वसन्त-गीत (पं० कामेश्वर शर्मा 'कमल' साहित्यभूषण) १७०
शिल्पी (श्रीजयकिशोरनारायण सिंह 'साहित्यालंकार') २६८
सागर-संगम ('प्रसाद') २६
सुख-दुख (पं० सुमित्रानन्दन पन्त) ६६
हृदय (श्रीमदनमोहन मिहिर) १९१
होली ('निराला'; श्रीगोपालसिंह नेपाली) ... ७३, १०१

[३] कहानियाँ (१६)—
अनबोला (श्रीजयशंकर 'प्रसाद') ... ७४
कुत्सा (श्रीयुत प्रेमचन्द, 'हंस'-सम्पादक) २५१
छुट्टी (श्रीजयकिशोरनारायण सिंह, 'साहित्यालंकार') १५०
जागरण (पं० वाचस्पति पाठक) १७
ठाकुरों की होली (प्रोफेसर सद्गुरुशरण अवस्थी, एम० ए०) ८५
* तूफ़ान में (श्रीगणेश पाण्डेय) १८४
* देवदासी (श्रीमद्भागवतप्रसाद वर्मा) ... २९३
देवरथ ('प्रसाद') २७
पति की क़ब्र (श्रीमन्महाराजकुमार बाबू दुर्गाशंकरप्रसाद सिंह) २६५
प्रतिशोध (श्रीमाहेश्वरीप्रसाद 'विधुर') ... १६८
* प्रायश्चित्त (पं० छबिनाथ पाण्डेय, बी० ए०, एल-एल० बी०) २३७
* प्रेम की बलि (,, ,, ,, ,, ,,) २१३
प्रेम की साधना (ठाकुर लक्ष्मीनारायणसिंह 'सुधांशु') ... १२२
* बुलबुल और गुलाब (श्रीयुत 'एकलव्य') ६
मिट्टी के सिपाही (बाबू महावीरप्रसाद गहमरी) ६०
वह तस्वीर (पं० जनार्दनप्रसाद झा 'द्विज' एम० ए०) २७६

[४] चित्र (२०)—
आचार्य पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी ... १७७
कविवर पं० सुमित्रानन्दन पन्त ... १०५
चीनी अभिनेत्री 'एना-मे-वंग' ... २३०
डोस्टावेस्की और उसकी प्रेमिका (२) ... ९७
पण्डित विनोदशंकर व्यास ... २०३
बर्नार्ड शॉ २०६
महाकवि दान्ते का स्वर्ग ... २२७
महात्मा गान्धी (१७ वर्ष पूर्व) ... १७७
,, ,, ,, की हिन्दी का नमूना (२) १७७
व्यंगचित्र (४) ९६
विक्टर ह्यूगो (युवा, प्रौढ़, वृद्ध) और उसकी प्रेमिकाएँ (५) ३३

[५] जीवनियाँ (८)—
आर्नल्ड बेनेट (श्रीलक्ष्मीकान्त झा) १४२
आस्कर वाइल्ड (,, ,,) २५३
गॉर्की (श्रीरामचंद्र टंडन, एम० ए०, 'हिन्दुस्तानी'-सम्पादक) १२०

* ये अनुवादित कहानियाँ हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बर्नार्ड शॉ (श्रीलक्ष्मीकान्त झा) २०६
महाकवि दान्ते (श्रीकृष्णदेवप्रसाद गौड़, एम० ए०, एल० टी०) २२७
महोमहोपाध्याय देवीप्रसाद शुक्ल कविचक्रवर्त्ती (पं० हरिचरण शर्मा, साहित्यशास्त्री) १३४
रुड्यर्ड किप्लिंग (श्रीलक्ष्मीकान्त झा) २७९
स्वर्गीय पं० पद्मसिंहजी शर्मा (पं० हरिशंकर शर्मा 'कविरत्न') १३१

[६] 'तितली' (धारावाहिक उपन्यास; श्रीजयशंकर 'प्रसाद') ९,३८, ५७,८१, ११३, १३७, १६१, १८९,२०९, २३३, २५७, २८१

[७] निबन्ध (१३)—

अहमदाबाद की गुजरात वर्नाक्युलर सोसाइटी (अध्यापक साँवलजी नागर)—२३४, २५९
ईरान में नाटक (मुन्शी महेशप्रसाद मौलवी-आलिम-फ़ाज़िल) १३
कथा-साहित्य (श्रीगंगापतिसिंह, बी० ए०) ५५, २६९
'डोस्टावेस्की' की प्रेम-कहानी (पं० विनोदशंकर व्यास) ९७
पोशाक (श्रीगुलाबराय, एम० ए०, एल-एल० बी०) २५५
'विक्टर ह्यूगो' की प्रेम-कहानी (पं० विनोदशंकर व्यास) ३३
विदेश में दैनिक पत्र कैसे निकलते हैं ? (,, ,,) २०३, २४०, २८४
स्याम (श्रीरामनयन शर्मा) २९१
सामन्तकूट (श्रीराहुल सांकृत्यायन) १७९
सुमात्रा में भारतीय सभ्यता (श्रीसुखसम्पतराय भंडारी) ५३
हिन्दी-लेखक और खेल-कूद (पं० बनारसीदास चतुर्वेदी, 'विशाल-भारत'-सम्पादक; प्रोफ़ेसर पं० बदरीनाथ भट्ट, बी० ए०; श्रीरमेशप्रसाद, बी० एस्-सी०) ११, ५१, १४३

[८] मनोरंजक एवं विनोदपूर्ण रचनाएँ (२५)—

अनोखी उक्तियाँ (पद्य; श्रीयुत 'बेढब') ५, ४७, ९६, १०४
अरबी न फ़ारसी (श्रीयुत 'बेढब बनारसी') ... ७८
कवि की चिन्ता (पद्य; ठाकुर श्रीनाथसिंह, 'बालसखा'–सम्पादक) २४६
कुमकुमे (श्रीयुत 'तिड़ीबाज़') १०८
चतुर्वेदीजी का विवाह (श्रीयुत 'बेढब बराती') ... १०३
चुटकुले (बाबू महावीरप्रसाद गहमरी) २३,३७,७१
'जागरण' की होली ७५
निजी और गोपनीय (श्रीअन्नपूर्णानन्द वर्मा) ... ८४
प्याले का प्रभाव (पद्य; श्रीमार्त्तण्डराव दत्तात्रेय) ... १३२
पाँच पाठशालाएँ एक साथ खुली हैं ! १३६
मज़ेदार मसाला (पद्य; पं० जगन्नारायणदेव शर्मा 'कवि पुष्कर') १५२
मनोरंजक समाचार २४७
मनोविनोद (बाबू महावीरप्रसाद गहमरी; एक देहाती 'साहित्यरत्न') ९५, १२६, १५२
सबसे बड़े और सबसे पहले (पं० सूर्यनाथ तकरू, एम० ए०) २३

साहित्यिक फाग-रंग (श्रीयुत 'नारद') ७८
होली का जलसा (बाबू गोपालराम गहमरी, 'जासूस'-सम्पादक) १०२
होली का तक़ाज़ा (प्रोफ़ेसर मनोरंजनप्रसादसिंह, एम० ए०) १०९
होली की हवाई डाक ७९

[९] 'मधु-संचय'—(स्नातक शंकरदेव विद्यालंकार, बाबू महावीर-प्रसाद गहमरी, पं० छबिनाथ पाण्डेय, पं० आनन्दराव जोशी ···) २१,४०,६२,९२,१२४,१४५,१७२,१९६,२१६, २४३, २६३,२८७

[१०] 'रंगमंच'—(बाबू बालकृष्णदास, श्रीसर्वदानन्द वर्मा, पं० उमाकान्त झा, स्नातक शंकरदेव, पं० केदारनाथ पाठक) १९,४४, १५६, २३०

[११] 'विचारणीय प्रश्न'—(पं० चन्द्रशेखरशर्मा) १३३, १५८

[१२] स्फुट रचनाएँ (१४)—

दीपक (स्नातक शंकरदेव विद्यालंकार) ... २७८
प्रबोधिनी (गद्यकाव्य; श्रीजयशंकर 'प्रसाद') ... १४
भारतीय नृत्य का उत्कर्ष (श्रीशंकरदेव विद्यालंकार) ... २७०
भाषानुराग (बाबू महावीरप्रसाद गहमरी) ... १४९
महाकवि 'गेटे' की स्मृति में (श्रीशंकरदेवजी) ... १४४
मालवीय-जयन्ती (श्रीरंजन) ... ४३
मैं (श्रीयुत राधाकृष्ण) ... २०८
विश्व-साहित्य-संवाद (श्रीपरिपूर्णानन्द वर्मा) ... १४९
शलभ (श्रीयुत राधाकृष्ण) ... १५१
शिक्षा और नागरिकों का कर्त्तव्य (अध्यापक छेदी मिश्र) २४८
साहित्यगोष्ठी में कविवर पन्तजी का स्वागत ... ६६
सुकवि-सूक्ति (बाबू महावीरप्रसाद गहमरी) ... १८८
हा ! शर्माजी (पं० जवाहरलाल चतुर्वेदी) ... १३३
हिन्दी-संग्रहालय द्वारा साहित्यिकों की स्मृतिरक्षा (श्रीकेदारनाथ शर्मा) २६१

[१३] 'स्वाध्याय-सामग्री'—२४, ४८, ६९, १०९—१२८, १२९, १५५, १९४, २१९, २४८, २७१

[१४] सम्पादकीय टिप्पणियाँ—१, २५, ४९, ७३, १०५, १२९, १५३, १७७, २०१, २२५, २४९, २७३

[१५] 'समाचार-संकलन'—२४, ४५, ७२, १२९, १५४, १९४, १९५ (द्विवेदी-जयन्ती-सम्बन्धी), २०५, २१९, २४५, २५६, २७२, २८३, २९५

[१६] 'साहित्य-संसार'—२, ४६, ६७, ११०, १६०, १९८, २२२,

[१७] 'साहित्य-समीक्षा'—(पं० छबिनाथ पाण्डेय, बी० ए०, एल-एल० बी०,...) १२७, १६५, १९२, २२०

[१८] 'क्षण-भर'—४, ४७, ७०, ८०, १०६, १३५, १५९, १९९, २२३, २४६, २७४

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष १
अंक १२
आषाढ़-पूर्णिमा
सं० १९८९ वि०
१७ जुलाई १९३२

परिवर्त्तन —

"जिमि नूतन पट पहिरि कै, नर परिहरै पुरान"—उसी प्रकार 'जागरण' अब, जगन्नियन्ता परमात्मा की इच्छा के अनुसार, साप्ताहिक रूप में परिवर्त्तित होने जा रहा है। अब इसके सम्पादक होंगे हिन्दी के स्वनामधन्य उपन्यासकार श्रीप्रेमचंदजी और प्रकाशक होंगे मुद्रण-कला-कुशल श्रीप्रवासीलालजी वर्मा। आशा है, दो यशस्वी कलाकारों के हाथ में रहकर यह विशेष सुन्दर, समुन्नत और सुविख्यात होगा। इसका साप्ताहिक संस्करण, आगामी मास में, स्थानीय 'सरस्वती प्रेस' से—जहाँ से 'हंस' मासिक पत्र भी निकलता है—अवश्य ही प्रकाशित हो जायगा। उसका रूप-रंग कैसा होगा, यह बताने की आवश्यकता नहीं। इसके लिये सम्पादक और प्रकाशक का नाम ही सन्तोषप्रद है। अब 'जागरण'-सम्बन्धी समस्त पत्र-व्यवहार उन्हींके नाम से होना चाहिये। पाक्षिक रूप में यह ग्राहकों और पाठकों की जितनी सेवा कर सकता था, उससे कहीं अधिक साप्ताहिक रूप में कर सकेगा। "उपजहिं अनत, अनत छबि लहहीं।" अब, जो कृपालु सज्जन छः महीने के लिये ग्राहक बने थे, उनकी सेवा की अवधि पूरी हो गई। किन्तु साल-भर के ग्राहकों की सेवा में साप्ताहिक 'जागरण' नियमित रूप से पहुँचता रहेगा। ऐसी व्यवस्था कर दी गई है। अब, दोनों प्रकार के ग्राहकों से हम विनय-पूर्वक प्रार्थना करते हैं कि वे दया करके शुद्ध हृदय से हमारी भूल-चूक क्षमा करें। हम हाथ जोड़कर उनसे अन्तिम बिदा माँगते हैं; क्योंकि अब हमें उनकी सेवा का ऐसा सौभाग्य कभी प्राप्त न होगा। पुनः, जिन उदार लेखकों और सहृदय कवियों की कृपा तथा सहानुभूतिपूर्ण सहायता से हम हिन्दी-पाठकों की कुछ सेवा कर सके हैं, उनके प्रति हम अपनी विशुद्ध आन्तरिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं। और, उनसे भी, कर्त्तव्यज्ञान-शून्यता के कारण किये गये निज अपराधों के लिये, सच्ची क्षमा चाहते हैं। विश्वास है, हमारे वे सहयोगी भी, जिनके द्वारा प्रभूत प्रोत्साह प्राप्त कर हम कृतकृत्य होते रहे, हमारी क्षमा-याचना को सफल करेंगे। 'पुस्तक-मन्दिर' और 'जागरण' के संस्थापक पं० विनोदशंकर व्यास, तथा दोनों के संचालक पं० प्रमोदशंकर व्यास, हमारी सहायता में जैसे तत्पर रहे, वैसे सहायक अब काहे को मिलेंगे। हमारा दुर्भाग्य ही है कि आज ऐसे सहायकों से वंचित होना

?

वे कुछ दिन कितने सुन्दर थे
जब सावन घन सघन बरसते
इन आँखों की छाया भर थे
सुरधनु रंजित नव जलधर से
भरे क्षितिजव्यापी अम्बर से
मिले चूमते जब सरिता के
हरित कूल युग मधुर अधर थे
प्राण-पपीहा के स्वर वाली
बरस रही थी जब हरियाली
रस-जल-कन मालती-मुकुल से
जो मदमाते गन्धविधुर थे
चित्र खींचती थी जब चपला
नील मेघ-पट पर वह विरला
मेरी जीवन-स्मृति के जिसमें
खिल उठते वे रूप मधुर थे

—'प्रसाद'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षमा भर

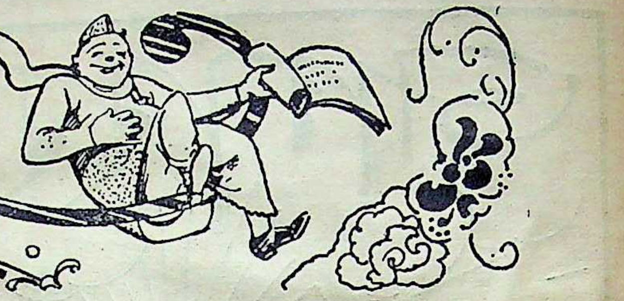

गताङ्क में पाठकों से क्षमा-प्रार्थना करते हुए हमने लिखा था — "अगले अंक में सब सामग्री पूरी होगी।" हमें क्या पता था कि अगले अंक में 'जागरण' की आयु ही पूरी होगी !

\+ + + +

गताङ्क के आरम्भ ही में हमारा सबसे पहला वाक्य था—"अब लेखनी आगे नहीं बढ़ती।" हम क्या जानते थे कि पीछे नियति भी बोल रही है—"तो 'जागरण' का ठेला भी अब आगे नहीं बढ़ेगा !"

\+ + + +

आषाढ़ में भगवान् विष्णु शयन करते हैं और कात्तिक में जागते हैं। 'जागरण' भी असाढ़ ही में शयन कर रहा है; पर हम कैसे कहें कि कातिक में यह भी जागेगा ? कहीं वह नियति न पीछे खड़ी हो !

\+ + + +

श्रीप्रेमचन्दजी श्रावण में 'जागरण' को गोद ले रहे हैं, और सुनते हैं कि श्रावण का दत्तक बड़ा होनहार होता है। अच्छा बेटा 'जागरण' ! "तुम नीके रहो, उनही के रहो।"

\+ + + +

जिन सज्जनों की भेजी हुई पुस्तकों की समालोचना 'जागरण' में न छप सकी, वे चाहें तो लिखी-लिखाई समालोचना हमसे मँगा सकते हैं, पुस्तकें अब कहाँ हाथ लगेंगी !

\+ + + +

जिन महानुभावों ने पुस्तक की एक ही प्रति समालोचनार्थ भेजी थी, वे अब एक प्रति और भेज दें; और साप्ताहिक संस्करण के वार्षिक ग्राहक बनकर प्रति सप्ताह समालोचना की बाट जोहते रहें।

\+ + + +

पड़ता है। सन्तोष है कि 'जागरण' सौभाग्यशाली ही रहा। ईश्वर इसे चिरायुष्य प्रदान करें।

पाक्षिक 'जागरण' का जो रूप-रंग था, उसे सभी साहित्यिकों और सहयोगियों ने तो पसन्द किया; पर सर्वसाधारण पाठकों ने उसे कैसा समझा—यह जानने का हमें विशेष अवसर न मिला। अब तक की स्थिति ने तो यही सुझाया कि शुद्ध साहित्यिक पाक्षिक पत्र के पाठक हिन्दी-संसार में गिने-चुने हैं। ईश्वर हिन्दी-पाठकों की रुचि को परिष्कृत करे कि 'जागरण' फिर अपने असली रूप के धारण करने में समर्थ हो।

जिन उदारचरित लेखकों के लेख प्रकाशित होने से रह गये, वे अब दया करके हमारा पिण्ड छोड़ें – श्रीप्रेमचन्दजी का पिण्ड पकड़ें—हमने उन्हींको सब कुछ सौंप दिया है।

\+ + + +

लेकिन कवियों की कविताओं को हम कदापि न लौटावेंगे; क्योंकि उनकी संख्या इतनी अधिक है—इतनी अधिक है—कि हम किसी तरह यह ख़ज़ाना 'ग़बन' के लेखक को नहीं सौंप सकते।

× × × ×

कविताएँ हमारे पास इतनी इकट्ठी हैं कि साप्ताहिक संस्करण भी साल-भर केवल कवितामय निकल सकता है ! कोई-कोई कविता इतनी लम्बी-चौड़ी है कि अकेले ही एक पूरे अंक को ढँक सकती है। कवियों का मस्तिष्क सब लोग देखते हैं, सौभाग्यवश हमने कवियों की अँतड़ियाँ भी देख लीं।

\+ + + +

आज-कल पत्र-पत्रिकाओं के कार्यालय में कविताओं की जितनी वृष्टि होती है, उतनी यदि ग्राहकों की होती, तो काम बन जाता। कमानेवाले बहुत पैदा हो गये हैं, खानेवालों का पता नहीं है।

× × × ×

आज-कल कौन ऐसा कवि होगा, जिसकी दो-चार कविताएँ प्रत्येक पत्र-पत्रिका-कार्यालय में न पड़ी हों और वह उन्हें शीघ्र प्रकाशित करने के लिये प्रति सप्ताह दो-चार तक़ाज़े की चिट्ठियाँ न लिखता हो। कवियों से डाकख़ाने को ख़ासी आमदनी हो जाती है; क्योंकि वे प्रायः कविताओं के साथ ही स्वीकृति-पत्र के लिये टिकट भी भेजा करते हैं। क्या अन्य भाषाओं में भी ऐसे कृपालु कवि हैं ?

× × × ×

वास्तव में यह गद्य-युग नहीं, पद्य-युग है। सच पूछिये तो पद्य-रचना में अनेक सुविधाएँ और अनेक लाभ हैं। एक सज्जन हर महीने में पोस्ट-कार्ड पर चार पंक्तियाँ लिखकर एक पत्रिका को भेज देते हैं और साल-भर मज़े से घर-बैठे मुफ़्त पत्रिका पढ़ा करते हैं। कौन ऐसा गद्य-लेखक है, जो सिर्फ़ ४८ पंक्तियों के एक लेख पर साल-भर कोई पत्रिका मुफ़्त पाता है ?

× × × ×

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गद्य-लेखकों में भी आज-कल अनेक गद्य-कवि ही बन गये हैं। दस-बारह पंक्तियों का गद्य-काव्य लिखकर, उसमें 'आह, उफ़, हाय' आदि भरकर, चिट्ठी के लिफ़ाफ़े में ही रखकर भेज देते हैं, और यह भी सूचित कर देते हैं कि आवश्यकता होने पर ऐसी रचनाएँ बराबर भेजी जा सकती हैं। गद्य-काव्य की ऐसी टकसालें हिन्दी-संसार में अनेक हैं!

× × × ×

हाँ, पढ़ने के हिसाब से कहानी-लेखक भी कम नहीं हैं। पत्र-कार्यालयों में कहानियों की भी भरमार रहती है। किसी दिन की डाक ख़ाली नहीं जाने पाती। कहानियाँ भी आँत की तरह लम्बी, और अधिकांश में युवक-युवतियों के मिलने और तड़पने का वर्णन! एक सज्जन अपनी पत्नी को जो पत्र लिखते हैं और उसका जो उत्तर आता है, दोनों की नक़ल करके किसी पत्रिका में भेज देते हैं—चिट्ठीनुमा कहानी छप जाती है!

\+ + + +

'क्षण-भर' के व्यंग-विनोद से जिन सज्जनों का कभी दिल दुखा हो, उनके पास यदि थोड़ी भी क्षमाशीलता या सहिष्णुता या सहृदयता हो, तो हमें 'क्षण-भर' के लिये ही देने की कृपा करें; क्योंकि हम फिर उन्हें 'क्षण-भर' में ही सूद-सहित लौटा देंगे।

\+ + + +

आज-कल प्रसिद्ध लेखकों के लेखों में भी "ऐक्यता, बाहुल्यता, सशंकित, संकुलित, अवतरित, आधारित, सम्बन्धित, सौरभित" आदि विचित्र शब्द देखने में आते हैं। कुछ लोगों ने 'ज़ारी' लिखना जारी कर दिया है। कुछ लाग "अनिर्वचनीय ख़ूबसूरती" भी लिख रहे हैं। अब कुछ दिनों में 'पत्र-सम्पादक' के लिये "रिसाला-सम्पादक" भी लिखा जाने लगेगा!

\+ + + +

साहित्यिकों का नम्बर पूरा हो गया, अब पत्र-पत्रिकाओं का नम्बर आया। लखनऊ की 'त्रिवेणी' बम बोल गई! पाक्षिक 'जागरण' शुद्ध साहित्यिक था, इसलिये शयन करते समय उसे एक नई-नवेली की ज़रूरत भी थी।

\+ + + +

'प्रेमा' के सर्वाङ्ग-सुन्दर शृंगार-रसांक में श्रीमती महादेवी वर्मा, बी. ए. की 'पहिचान' शीर्षक रहस्यवादिनी कविता पर सम्पादकीय नोट जड़ते हुए श्रीमान् 'साहित्याचार्य' सिलाकारीजी ने भी रहस्यमय गद्य में ही उसका परिचय दिया है। देखिये—"इसमें अनन्त के विरह में जीवात्मा की प्रेमानन्दमय असीम वेदना एवं हृदय के कोमलतम अन्तरंग देश में विश्वपति के प्रेम की प्रबलतम आँधी के झकोरे की अनुभूति का रहस्यमय वर्णन बड़ी सुन्दर सरस कविता में प्राप्त है।"—क्या समझे?

\+ + + +

इसी प्रकार श्रीमान् कविवर हरिऔधजी की एक कविता ('बहुरंगी फूल') पर भी 'साहित्यरत्न' सिलाकारीजी ने बड़ा बहुरंगा नोट जड़ दिया है। ध्यान देकर पढ़िये—"उपाध्यायजी माने हुए कवियों में से हैं। आपने 'बहुरंगी फूल' में सौन्दर्य का प्रस्फुटित होना, निखरना, विश्व के अणु-अणु में मादकता उड़ेलना एवं अन्त में विलुप्त होकर 'असीम में समा जाने' का चित्रण सहज-सुन्दर—पर अलंकृत आवरण में—बड़ी सजीव, रसमयी शब्दावली में किया है।" क्या समझे? नाम चतुरानन पै चूकते चले गये!

\+ + + +

श्रीमान् कविवर पं० सुमित्रानन्दन पन्त के अनेक चित्र इधर कई पत्र-पत्रिकाओं में दीख पड़े हैं। जहाँ कहीं देखा, भिन्न ही भावभङ्गी दीख पड़ी। जान पड़ता है, आप हर महीने कई फ़ोटो भिन्न-भिन्न रूप में खिंचवाया करते हैं।

× × × ×

कलकत्ते से एक साहित्यिक मित्र लिखते हैं—"हिन्दी-संसार के सुपरिचित नवयुवक पं० शान्तिप्रिय द्विवेदी आज-कल पंडित बनारसीदासजी चतुर्वेदी के साथ हाथरस की सैर करने गये हैं। वहाँ से वे लोग मैनपुरी ज़िले के मक्खनपुर स्थान में जाकर प्रसिद्ध शिकारी पं० श्रीराम शर्मा की बगिया में वह पपीते का पेड़ देखेंगे, जिसमें सवा सेर का फल लगा है!"—और यहाँ हमने भी सुना है कि श्रीरायकृष्णदासजी ने तार दिया है कि उस पपीते का बीज जरूर लेते आना।

\+ + + +

श्रीमान् कविवर 'निराला' जी को लखनऊ का 'सफ़ेदा' इतना पसन्द है कि आम की फ़सल शुरू होते ही कलकत्ते का 'रँगीला' छोड़कर चले आये।

\+ + + +

हमारे खुरारबिन्द की ऐसी महिमा है कि जहाँ जाते हैं, चापड़ कर डालते हैं। पहले-पहल "मारवाड़ी-सुधार" का बण्टाढार किया। फिर 'आदर्श' और 'उपन्यास-तरंग' का छत्रभंग किया। यदि 'बालक' और 'गंगा' को न छोड़ते, तो उन्हें भी ले बीतते। और, यदि 'जागरण' को प्रेमचंदजी अपना पोसपुत्तर न बना लेते, तो शायद इसकी भी खैर न थी। पर अब किसीकी मिट्टी ख़राब नहीं करेंगे। हमने बहुत-से पापड़ बेले हैं, अब एकतारा लेकर केवल यही भजन गाया करेंगे—

अब लौं नसानी अब ना नसैहौं।
रामकृपा भव-निसा सिरानी, 'जागे' फिर ना डसैहौं॥

\+ + + +

जय शिव!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"वहीं तस्वीर ?"

पं० जनार्दनप्रसाद झा, 'द्विज', एम० ए०

१

"अवध ! बुरा न मानो तो आज तुमसे एक बात के लिये माफ़ी माँगूँ ।"

मैं कुछ समझ न सका । पूछा—कैसी माफ़ी और कैसा बुरा मानना ?

नवल ने फिर दोहराया—पहले बचन दे लो, बुरा तो न मानोगे ?

"भले आदमी ! कुछ सुनूँ भी तो !"

"कहते डर रहा हूँ, पहले अभय-दान दे लो ।"

"दे दिया, कहो ।"

"मुझे तुमने अपनी जो तस्वीर भेंट की थी, वह किसी......"

"वह किसी—?"

"हाँ, वह किसी और ने छीन ली !"

"छीन ली ?"—मैंने कुछ आश्चर्य-चकित होकर पूछा—"छीन किसने ली ?"

"मगर उस तस्वीर की जो इज्ज़त वहाँ हो रही है, वह शायद और कहीं नहीं हो सकती । मैं तो उसकी श्रद्धा और भक्ति देखकर दंग हूँ !"

मेरी उत्सुकता अधीर होती जा रही थी । कुछ झुँझला कर बोला—मैं पूछ रहा हूँ नाम और तुम बखान किये जा रहे हो उसकी श्रद्धा और भक्ति का ! यह तो बताओ कि आख़िर वह है कौन ?

"देखो, तुम धीरे-धीरे गरम होने लगे न ?"—नवल ने आर्द्र स्वर में कहा—"मालूम होता है, मुझे माफ़ न कर सकोगे ।"

मैं जैसे लजा-सा गया । ग्लानि-विगलित स्वर में बोला—"नहीं, यह बात नहीं, मगर तुम नाम क्यों नहीं बता देते ?"

"अगर मुझे उसका नाम न मालूम हो ?"

"अजीब आदमी हो ! तो क्या तुम उसका नाम तक नहीं जानते ?"

"मान लो कि मैं जानता हूँ, पर अभी तुम्हें बताना नहीं चाहता । क्या सिर्फ़ इतना ही कह देने से काम नहीं चल जायगा कि तुम्हारे प्रति उसके हृदय में इतना अनुराग है कि तुम्हारी प्रायः सभी कविताएँ उसने कंठस्थ कर रक्खी हैं ?"

मेरे अन्तस्तल में अपरिचित प्यार की एक उल्लासमयी धारा उमड़ पड़ी । मन उसीके वेग का साथी बन गया । मैंने उसका हाथ पकड़ते हुए पूछा—"न बताओगे, वह कौन है ?"

"एक स्त्री ।"

"एक स्त्री ?"

"हाँ ।"

"यह तो........"

"यह तो ?"

"यह तो मुझे कुछ अजीब-सा मालूम हो रहा है !"

"क्यों ?"

"इस 'क्यों' का क्या उत्तर दूँ नवल ?"—मैंने कुछ खिन्न होकर पूछा "यह बता सकोगे कि वह स्त्री है कौन ?"

"बता दूँ ? उससे घृणा तो नहीं करने लगोगे ? मेरे प्रति तुम्हारे हृदय में अरुचि के भाव तो न भर जायँगे ?"

"नहीं, नवल !"—मैंने अपने सहज गंभीर स्वर में कहा—"मैं क्रोध कर सकता हूँ, क्षण-भर के लिये प्रलयानल बन जा सकता हूँ; पर किसीको घृणा की दृष्टि से देखने की क्षमता मुझमें नहीं है । घृणा करना, अपने से औरों को हीन समझना, कुछ बड़े लोगों का ही काम है । मैं खूब जानता हूँ कि अगर सचाई के साथ अपने को देखूँ, अपने चरित्र का ठीक-ठीक विश्लेषण करूँ, तो मुझसे बुरा कोई शायद ही निकले । फिर किस बिरते पर मैं किसीसे घृणा करूँ ? घृणा वही करता है जो स्वयं अपने को नहीं जानता ।"

"तो फिर बता दूँ ?"—नवल ने कुछ मुस्कुराकर पूछा ।

"हाँ; बता दो ।"

"वह एक गन्धर्व-कन्या है !"

मैं जैसे आसमान से गिर पड़ा !

"हाँ, वही है । मगर तुम इस तरह डर क्यों उठे ?"

हाँ, यह बात सुनकर मैं सचमुच भय-विकम्पित हो उठा । गन्धर्व-कन्या से उसका क्या अभिप्राय था, समझ गया । हृदय के भीतर न जाने किन-किन विरोधी भावों का संघर्ष-सा होने लगा । मुह से आप-ही-आप निकल पड़ा—"यह तो अच्छा नहीं किया तुमने नवल !"

नवल ने अपराधी की तरह सिर झुका दिया और कहा—"मैं जानता था, तुम इसे स्वीकार नहीं करोगे । पर जो हो गया उसे रोकना मेरे वश की बात न थी । सच तो यह है कि वह तुम्हारे ऊपर जान देती है ।"

"मगर, तुम भी उस जाल में फँस गये हो, यह मुझे नहीं मालूम था । बड़ा धोखा खाया ।"—मैंने कुछ व्यथित होकर कहा ।

"तुम्हारा ऐसा समझना ठीक ही है अवध !"—उसने स्निग्ध स्वर में उत्तर दिया "कलाली में दूध भी मदिरा ही हो जाता है । पर मेरी बातें तुम्हें फिर कभी मालूम हो जायँगी । इस समय अपनी सफाई दूँ, तो दूँ कैसे ?"

मेरा हृदय वज्र बनता जा रहा था, अब मोम बनकर धीरे-धीरे पिघलने लगा । जो नवल मेरी प्रेम-परिधि का केन्द्रविन्दु है, वह इतनी दूर खिसक जायगा, इतना बदल जायगा ? नहीं, यह कभी हो नहीं सकता । प्रेम प्रवंचना नहीं है । जो मेरा प्रिय है, वह पापी कैसे हो जायगा ? जो मेरे जीवन का सबसे बड़ा पुण्य है, उसे पाप समझने की कल्पना कैसे करूँ ? और अगर वह पापी है तो मैं अपने को अब कुछ और कैसे समझूँ ? जो मेरा है, उसके पाप भी मेरे हैं । पर हाय ! लोग क्या समझेंगे ? लोग ? हाँ, लोग समझेंगे कि मैं महाभ्रष्ट हो गया, पतित हो गया,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जघन्य हो गया ! समझा करें, मैं उन्हें रोक कैसे सकूँगा ? उनका तो काम ही यही है। वे कभी किसीको अच्छा भी समझते हैं ? समझें कैसे ? किसीकी आन्तरिक स्थिति का अध्ययन करने की सहृदयता रक्खें तब तो ? सहृदयता और विश्वास के द्वारा जो बातें जानी जा सकती हैं, उन्हें हमारे समाज के आलोचक असहृदय और अविश्वासी बनकर जानना चाहते हैं। इसलिये, मुझे उनकी परवा नहीं। मेरा नवल, नवल ही रहेगा, चाहे वह कहीं भी चला जाय—कुछ भी हो जाय।

मैने स्नेहपूर्वक पूछा—"तुम उसके यहाँ बराबर जाते हो नवल ?"

"मैं उसके यहाँ कभी नहीं जाता, पर उससे मेरी जान-पहचान पूरी है।"

"यह कैसे ?"

"वह स्वयं कभी-कभी मेरे घर आ जाती है।"

"छिपकर ?"

"नहीं, वह चोरी से नहीं आती। मेरे बूढ़े चाचा उसे बेटी की तरह मानते हैं। वह मुझे अपना छोटा भाई समझती है।"

"पर, मैंने तो कभी नहीं देखा !"

"कभी ऐसा मौका ही न लगा। देखना चाहते हो ?"

मैं 'हाँ' और 'ना' के बीच में पड़कर चुप हो गया। 'हाँ' कैसे कहूँ ? और 'ना' कहने को भी जी चाहे तब तो ? उपासक को उपेक्षा की भीख देना सहज नहीं है। जैसे-तैसे, हृदय के ऊपर अत्याचार करके, बोल उठा—"माफ़ करो नवल ! कम-से-कम तुम तो मुझे भ्रष्ट करने का पाप न कमाओ।"

आग भीतर-ही-भीतर जल रही थी। पर नवल को उसकी धौंक लग गई। वह बोला—"जो तुम्हें देवता की तरह मानती है, उसे एक झाँकी दे देने ही से भ्रष्ट हो जावोगे अवध ? तुम तो कवि हो न ? फिर क्या मैं विश्वास कर लूँ कि तुम जो कह रहे हो वह सच है ?"

अब क्या कहूँ ? जी में आया, बिगड़ कर कह दूँ—हाँ, यह बिलकुल सच है कि मैं उसकी छाया को भी देखना नहीं चाहता। पर कोतवाल के आगे चोरी करने की हिम्मत नहीं हुई। बात का रुख बदलते हुए पूछा—"अच्छा, यह तो बताओ, तुमने विना मेरी स्वीकृति पाये उसे वह तस्वीर क्यों दे दी ?"

"मैंने दी नहीं अवध !"—उसने लाचारी का भाव व्यक्त करते हुए कहा—"वह तस्वीर मुझसे छीन ली गई।"

कुछ देर तक अथाह गंभीरता में डूबे रहने के बाद मैं एकाएक, किसी अज्ञात भय की आशंका से, काँप उठा और तुरन्त ही अपने स्वर को कठोर बनाकर बोला—"चाहे जिस तरह हो, वह तस्वीर उसके यहाँ से ले आनी होगी। मैं अपनी तस्वीर वेश्यालय में नहीं रहने दूँगा।"

नवल सिर झुकाये चुपचाप खड़ा रहा। जब मैं बहुत देर तक फिर कुछ न बोला, तब वह एक लम्बी साँस खींचकर, चला गया।

२

सावन का महीना, सवेरे का समय—बहुत ही सुहावना, अत्यन्त सुंदर। मैं अपने विस्तृत उद्यान में बैठा-बैठा, आकाश में घुमड़नेवाले काले-काले बादलों के खेल और अपनी पंख-सुषमा से हरित वसुन्धरा का स्वर्गिक शृंगार करनेवाली मयूर-बालाओं के नृत्य का आनन्द ले रहा था। इसी समय देखा, उद्यान के उस छोर पर सौन्दर्य्य की एक सजीव प्रतिमा खड़ी थी। आँखें उसीपर गड़ गईं। वह मेरी ही ओर देख रही थी, अब धीरे-धीरे आगे बढ़ी और मेरे पास आकर खड़ी हो गई।

मैं एक विचित्र हलचल में पड़ गया। किसी प्रकार अपने को सम्हाल कर पूछा—"मैं जान सकता हूँ, आप कौन हैं और यहाँ तक आने का कष्ट आपने कैसे किया ?"

वह बड़े ही सरल, स्निग्ध और मोहन स्वर में बोली—"मैं एक अभागिनी हूँ, आपसे कुछ भीख माँगने आई हूँ।"

अब ? मेरी सुध-बुध तो भाग ही चुकी थी। मुँह से अनायास ही निकल पड़ा—"मेरे योग्य कोई सेवा ?"

"मैं कवि नही हूँ"—उसने गंभीर वेदना के भार से झुके हुए शब्दों में उत्तर दिया—"इसलिये कविता में बातें करना नहीं जानती। सीधे-सादे गद्य में पूछती हूँ, आप मुझे एक भिक्षा-दान दे सकते हैं ?"

हृदय काँप रहा था। कहा—"बताइये न, आप क्या चाहती हैं ?"

"आपकी यह तस्वीर" कहकर उसने उस तस्वीर को मेरे चरणों पर रखकर अपने घुटने टेक दिये, और उसकी आँखें सजल हो आईं, अधर-पल्लव प्रकम्पित हो उठे !

मैंने कलेजे को पत्थर बनाकर तस्वीर उठा ली और स्थिर स्वर में उत्तर दे दिया—"इसके लिये मुझे क्षमा कीजियेगा।"

वह उठकर खड़ी हो गई और बोली—"मैं ही आपसे क्षमा माँगती हूँ—अपने लिये भी और आपके 'नवल' के लिये भी। आप मुझे चाहे जो दण्ड दें, पर उसको तो क्षमा कीजिये ही। वह मुझे तस्वीर नहीं दे रहा था, मैंने ही ज़बरदस्ती की थी।"

"पर ऐसा आपने किया क्यों ?"—मैंने कुछ लड़खड़ाते हुए स्वर में पूछा।

"इसका मर्म आप तब तक नहीं समझ सकते"—उसने उत्तर दिया "जब तक आप स्वयं 'वही' न हो जायँ जो 'मैं' हूँ। और सच तो यह है कि अब आप यह जानकर ही क्या कीजियेगा ?"

कमज़ोर दिल, फिर पसीजने लगा ! तो, ले, मैं थोड़ा और भी कड़ा हो जाऊँ ! मैंने कहा—"जान न पहचान और आपने योंही तस्वीर उठा ली ! यह भी कोई भलमनसी थी ?"

उसने इसका कोई जवाब नहीं दिया। अंचल से आँसू पोंछती हुई, धीरे-धीरे उद्यान के बाहर निकल गई।

और मैं ? अपनी उसी तस्वीर में दृष्टि गड़ाकर किसीको खोजने लगा—पता नहीं, उसको या स्वयं अपनेको।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३

"क्या है नवल ?"

" 'मालती' मर रही है !"

"मालती—वही मालती ?"

"हाँ, और वह उसी तस्वीर के लिये मर रही है।"

अब अपने को रोक न सका। विचलित होकर बोला—"वह हैं कहाँ ?"

'मेरे घर पर; चचाजी कल शाम को उसे घर ही पर लिवा लाये हैं।'

"मगर वह तो—"

नवल ने बीच ही में रोक दिया—"देखो, वह मेरी बहन है और सब तरह से प्रतिकूल परिस्थिति में रहकर भी तुम्हारे सिवा उसने और किसीको प्यार नहीं किया। पर तुम उसे पहचान न सके—उसे कुछ-का-कुछ समझ बैठे हो।"

मैं होश में आ गया। अहंकार-विमुक्त होकर देखा, मुझसे एक ऐसा पाप हो गया था, जिसका कोई प्रायश्चित्त ही नहीं। जो प्रेम का तिरस्कार करे, उससे बढ़कर पापी और कौन होगा ? अपनी पवित्रता के ढोंग-जाल में उलझकर मैंने एक निरीह आत्मा को व्यथित किया है—उसे वरदान देने के बदले अभिशाप दिया है। अब देखता हूँ, वही अभिशाप आग बनकर मुझी को जला देना चाहता है। मैंने आत्मार्पण करने का निश्चय कर लिया। कहा—"नवल! चलो, मैं स्वयं अपने-आपको उसके चरणों पर चढ़ा आता हूँ।"

"और वह तस्वीर ?"—नवल ने पूछा।

मेरे अन्तस्तल की सोई हुई पीड़ा जाग उठी। बड़ी बेचैनी के साथ मैंने जवाब दिया—"वह तस्वीर तो गुस्से में आकर उसी दिन नष्ट कर दी!"

"यह तुमने और भी बुरा किया"—कहकर नवल चल पड़ा। मैं भी उसके साथ हो लिया।

४

मैंने पुकारा—"मालती ?"

उसने आँखें खोलीं—पर वे आँसुओं में डूबी हुई थीं!

मैंने कहा—"मुझे माफ़ कर दो।"

उसने मेरा हाथ पकड़ लिया और पूछा—"वह तस्वीर ?"

मैं कुछ उत्तर न दे सका।

उसने फिर पूछा—"वह तस्वीर ?"

मैंने कहा—"मैं तो आ ही गया हूँ, अब उस तस्वीर की क्या आवश्यकता है ?"

मानिनी का स्वर विह्वल हो उठा। उसने अधर कँपाकर कहा—"मैं तुम्हें नहीं प्यार करती, क्योंकि तुम आदमी हो। आदमी प्यार करने के लिये नहीं बनाया गया है—वह तो स्वार्थ का पुतला है। मैं उस तस्वीर को प्यार करती हूँ—वह मेरे कवि की, मेरे आराध्य की, मेरे सर्वस्व की तस्वीर है। उसीको मैं इस समय एक बार देखना चाहती हूँ—उसे एक बार अपनी छाती से लगाकर तब मरना चाहती हूँ। मुझे वह तस्वीर दे दो!"

मैंने कलेजा कड़ा करके कहा—"माफ़ करो मालती! वह तस्वीर मैंने नष्ट कर दी।"

मालती स्तब्ध भाव से मेरा मुँह देखने लगी। और यह क्या! देखते-ही-देखते उसकी रंगत कैसी हो गई ? अभी मैं उसकी शारीरिक अवस्था के इस आकस्मिक परिवर्त्तन की परेशानी में ही डूबा हुआ था कि वह आवेश में आकर चिल्ला उठी—"वह तस्वीर ?"

मैं स्वयं तस्वीर बन गया!

मालती फिर चिल्लाई—"वह तस्वीर ?"

मैं उसी तरह अचल, स्तब्ध!

इस बार मालती ने मेरे गले में हाथ डालकर पूरे आवेग के साथ मुझे अपनी ओर खींच लिया, और बड़े जोर से चिल्ला उठी—"वह तस्वीर ?"

मैं संज्ञा-शून्य हो गया। जब होश में आया तो देखा, मालती उस तस्वीर के लिये रूठकर मुझसे सदा के लिये बिछुड़ चुकी थी!

अब भी मेरे कानों में बराबर गूँजता रहता है—"वह तस्वीर ?"

दीपक

पृथिवी पर जब चन्द्र और सूर्य का तेज संकीर्ण हो जाता है, तब घर-घर में दीप जगाकर जगत् देखता रहता है। इसी प्रकार जिज्ञासु व्यक्ति अपने ज्ञान-दीप को जाग्रत रखकर अविद्या की कालिमा को दूर करता रहता है।

दीपक उपयोगी है, क्योंकि वह आँख का दूत है।

'प्रदीप' पावनकारी है; क्योंकि वह मलिनता को दिखाता है और उसे दूर भी करता है।

दीपक मधुर है; क्योंकि उसमें स्नेह की बलि चढ़ी हुई है।

दीपक भव्य है; क्योंकि वह स्वयं जलकर दूसरे को प्रकाशित करने का संकेत करता है।

अंधकार-रूपी राक्षस भीषण और महाकाय है, और दीपक सौम्य तथा छोटा है; तथापि उस अंधकार के सामने वह अपने तेज और अस्तित्व को सुरक्षित रक्खे हुए है।

प्रभंजन (आँधी) के वेगवान झकोरों के आने पर भी वह अपनी ज्योति-शिखा को नवा-नवा कर अपने तेजोमय जीवन को जाग्रत रखता है।

भगवान् दिवाकर अपनी अनन्त किरणों से दिवस को प्रकाशित करते हैं; पर जब रात्रि का अन्धकार विश्व को आवृत कर लेता है, तब दीपक अपनी नम्र और नियमित सेवा को अर्पित करके कृतार्थ होता है। और, अनेक बार, जिन स्थानों पर सूर्य और चन्द्र का तेज भी कृतकार्य नहीं होता, ऐसे उन अँधेरे कोनों को, दीपक ही प्रकाशित करता है।

धन्य है ऐसे सदा जागने और जीवित रहनेवाले जीवन को !!

—शंकरदेव विद्यालंकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुडयर्ड किप्लिं

श्रीलक्ष्मीकान्त झा

'रुडयर्ड किप्लिं' नोबेल-पुरस्कार पानेवाले पहले अँगरेज़ हैं। जार्ज 'मेरेडिथ', 'टामस हार्डी' और 'स्विन्बर्न' के रहते हुए भी योरप के साहित्य-संसार ने आप ही को अँगरेजी साहित्य के प्रमुख महारथी का पद प्रदान किया। इस निर्णय का कारण कुछ भी हो; पर आप अँगरेज़ी के सर्वश्रेष्ठ साहित्यिक—कम-से-कम, अब—नहीं कहा सकते। एक समय था, जब आपकी चर्चा सारे इंगलैंड में थी। वह समय बीत गया। तुलना करने में बहुत तरह के ख़तरे हैं—अकसर हम जिस गुण या दोष के कारण दो लेखकों में समता या विषमता दिखाते हैं, उनकी ओर ध्यान न देकर लोग दूसरी ही बातों की तुलना समझ भ्रमपूर्ण नतीजे निकालते हैं। फिर भी आपकी कविता की तुलना बाबू मैथिलीशरण गुप्त की कविता से कर सकते हैं। दोनों के छंद में धारा है। प्रास में सहज श्रुतिमाधुरी है, ध्वनि में सौन्दर्य है। दोनों की कविता सुपाठ्य होती है। दोनों एक समय राष्ट्रीय कवि; श्रेष्ठ कवि, कहाते थे। पर वह समय अब नहीं रहा।

किप्लिं का जन्म भारत के बम्बई महानगर में सन् १८६५ ई० में हुआ था। आपके पिता "जान लाकूवुड किप्लिं, सी० आइ० ई०" उस समय लाहौर में "स्कूल अफ आर्ट" के अध्यक्ष थे। सन् १८७७ ई० में आपके पिता आपको इङ्गलैण्ड ले गये। वहाँ आप डेवन्शायर के युनाइटेड सर्विसेज़ कालेज में पाँच वर्ष तक शिक्षा पाते रहे। आपके स्कूली जीवन का बड़ा ही सुन्दर चित्र 'स्टाल्की एण्ड को०' में 'बीट्ल' के नाम से दिया गया है। अपने कालेज में ही आप कुछ लिखा करते थे। भारत लौटकर आप लाहौर के 'सिविल एण्ड मिलेटरी गज़ट' और प्रयाग के 'पायोनियर' के दफ्तर में भर्ती हुए। इसी समय से आपका साहित्यिक जीवन प्रारंभ हुआ। १८९१ में आप अमेरिका गये थे। वहाँ एक दूसरे सज्जन के सहयोग से आपने 'नवलखा' लिखा। अपने सहयोगी की बहन से आपने लन्दन में साल-भर बाद शादी की। आपने सफ़र भी बहुत किया है। चीन, जापान, आस्ट्रेलिया, अफ्रिका आदि की सैर करने से आपको जीवन के बड़े-बड़े अनुभव भी हुए। आजकल आप इंगलैण्ड में बस गये हैं।

आपकी गद्य-रचनाओं के पहले हम आपकी पद्य-रचनाओं पर विचार करेंगे। आपकी कविता के सम्बन्ध में बहुत मतभेद है। एक ओर तो लोग आपको सर्वश्रेष्ठ कवि कहते हैं, दूसरी ओर कुछ लोग आपको कवि की पदवी तक देने को तैयार नहीं! "डिपार्टमेण्टल डिटीज़" नामक पद्यावली के रचना-चातुर्य के कारण आपको कुछ लोग जानने लगे थे। इतने ही में आपका "प्लेन टेल्स फ्राम दि हिल्स" प्रकाशित हुआ। अभी, इन कहानियों को किस शैली का कहा जाय, इसका निर्णय भी न हुआ था कि आपने १८९२ में अपने "बैरेक रूम बैलेड्स" से साहित्य-संसार को चौंका दिया। इसको पढ़ते ही लोगों को स्पष्ट विदित हो गया कि आप कोरी तुकबन्दी ही नहीं करते, कविता-रचना भी कर सकते हैं। इस-की नवीनता ने संसार को चौंका दिया। बाज़ार की भाषा, सैनिकों की टूटी-फूटी अँगरेज़ी, इसका रूखापन, सभी अँगरेज़ी कविता के लिये नई चीज़ें थीं। अब तक अँगरेज़ी कवियों में से किसीने साहित्यिक भाषा का परित्याग नहीं किया था। 'वर्ड्सवर्थ' सरल शब्दों के व्यवहार के पक्ष-पाती तो जरूर थे; पर उनकी उत्कृष्ट रचनाएँ वे ही हैं, जिनमें कि उन्होंने अपने इस पक्षपात को कार्यरूप में परिणत नहीं किया। परन्तु आपने न केवल स्वाभाविक बोलचाल की भाषा को अपनाया, बल्कि उसे अपना कर यह दिखा दिया कि इस भाषा में भी काव्य हो सकता है—और वह भी ऊँची श्रेणी का। कुछ लोगों ने आपको 'रियलिस्ट' (वास्तविकतावादी) कहा है। पर आप 'रियलिस्ट' नहीं। आपके काव्य में वास्तविकता—असलियत, 'रियलिज़्म'—भी है; ज़रूर है। साथ ही उसमें कल्पना-स्वातंत्र्य और 'रोमान्स' भी है। 'रोमान्स'—काल्पनिकता—पर केवल साहित्यिक भाषा का ही अधिकार नहीं, वह जीवन की साधारण-से-साधारण घटना में—अशिक्षित और अपढ़ गँवारों की भाषा में—भी प्रकट हो सकती है। आपने जनता की बोली में पहली बार काव्य-रचना की। जो अशिक्षित जनता अब तक—सर आइज़क न्यूटन की तरह —कविता को "बड़े लोगों की बकवास" समझ रही थी, जिस जन-समुदाय ने अब तक असली कविता का कभी रसास्वादन नहीं किया था; क्योंकि अब तक उनकी भाषा में कविता लिखी ही नहीं गई थी, उसी जन-समुदाय ने इस पुस्तक को—इस शैली को—और इसके रचयिता के नाते आपको, जी खोलकर अपनाया। इसीमें आपकी कला है। अतः हम फिर कहेंगे कि आप कदापि 'रियलिस्ट' नहीं। आपने 'रियलिज़्म' का उपयोग, 'रोमान्स' को जनसाधारण के हितार्थ उपादेय बनाने के लिये ही, किया। सैनिक के सिगरेट का धुआँ कल्पना का बादल बन जाता है। शराब की दूकान की खिड़कियाँ एक दूसरे ही जगत् के दरवाज़े बन जाती हैं। आप अब भी लोकप्रिय हैं; पर आपकी लोकप्रियता का कारण 'रियलिज़्म' (वास्तविकतावाद) नहीं, बल्कि 'रियलिज़्म' की ओट से हमपर प्रभाव डालनेवाला 'रोमान्स' है। "Mandalay" और "Ballad of East and West" की प्रत्येक पंक्ति में सरलता है और मादकता भी, निश्छलता भी और जादू भी, 'रियलिज़्म' भी और 'रोमान्स' भी। आपकी ये दो पंक्तियाँ कितनी प्रसिद्धि पा चुकी हैं—

"East is East and West is West,
The twain shall never meet".

सभी शब्द सरल (monosyllablic) हैं, पर हैं कितने सारगर्भ! इसके सिवा चार पंक्तियों में एक चरित्र का जीता-जागता चित्र उपस्थित कर देना, थोड़े शब्दों में बहुत कुछ कह देना, भी आप ख़ूब जानते हैं। पर आपमें एक दोष है। आप कट्टर अँगरेज़ हैं। आप अपने जातीय दोषों के कारण जातीय संकीर्णता से ऊपर—मनुष्यता के शिखर पर—नहीं पहुँच

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सके। आपकी राष्ट्रीयता निम्न श्रेणी की राष्ट्रीयता है। आप न मनुष्य-जाति के बन्धुत्व का संदेश सुन सके हैं, न सुना ही सके हैं। महायुद्ध के समय आपने अँगरेज़ों को मरने और मारने के लिये बड़ा ही प्रोत्साहित किया था। प्रतिहिंसा की आग लगाई, घृणा को जन्म दिया। रक्त-पिपासा में भी शब्दों के जादू से स्वदेशभक्ति का आभास दिखला दिया। जब सन्धि हुई, तब जनता जर्मनों से प्रतिशोध लेने के लिये व्याकुल हो रही थी। एक छोटे क़द का आदमी चश्मा पहने हुए घर से निकला, उसने देखा कि जनता ख़ून के प्यास से पागल हो रही है। वह आप ही थे! अपनी ही सुलगाई हुई आग का आप सामना न कर सके, घर के अन्दर लौट गये।

आपकी कविता मानव-हृदय के सहज भावों और मनोवेगों की तस्वीर नहीं है, बल्कि वह एक जाति-विशेष के एक समय-विशेष के विचारों को प्रकट करती है। अतः जब तक उस जाति के वे ही विचार हैं, तब तक उस कविता में भी जान है। उसके बाद नहीं। 'गार्डिनर' ने आपके सम्बन्ध में लिखा है—"It is doubtful if he is of the Immortals. With all his wonderful gifts, his swift phrase, his imaginative power, his intellectual energy, he is temporary as the moment's passion, transient as the moment's hate. For his vision is of the lightning, fantastically real, not of the sun, sovereign and serene"—अर्थात् 'कवि के रूप में आपका अमरत्व सन्देहास्पद है। आपकी प्रतिभा, शैली, कल्पना-शक्ति, सब कुछ क्षणिक आवेश की तरह अस्थायी है, क्षणभंगुर है।' पर एक बार आपने अपने सब साम्राज्यवादी सिद्धान्तों को फाड़कर सच्ची कविता की छः पंक्तियाँ लिखीं—

For heathen heart that puts his trust
In reeking tube and iron shard—
All valiant dust that builds on dust
And, guarding, call not Thee to guard—
For frantic boast and foolish word
Thy mercy on Thy People, Lord.

किन्तु आपकी कुत्तों पर लिखी कविताओं में भी स्वाभाविक सहृदयता है, जिसके कारण शायद अँगरेजी साहित्य में आपका नाम बहुत दिनों तक जीवित रहेगा! जो हो, अब हम आपके गद्य की ओर ध्यान देते हैं। आप स्वभाव से ही अख़बारनवीस हैं। पर सभी अख़बारनवीस साहित्यिक नहीं होते। अख़बारों में छपनेवाली सब बातें साहित्यिक नहीं कही जा सकतीं। आपने बहुत-सी ऐसी किताबें भी लिखी हैं, जिनकी कोई साहित्यिक महत्ता नहीं है। "Bread upon the Waters," "007", "The Ship that found herself" तो शिक्षासम्बन्धी बायस्कोप की तस्वीरों की तरह हैं, इनसे हमें उपदेश भले ही मिले, पर आनन्द शायद ही। "The Days Work", "The Devil and the Deep Sea" तो केवल इंजीनियर ही समझ सकते हैं। "Captain Courageous" को पढ़ने से ऐसा मालूम होता है कि आप स्वयं अपने ज्ञान का उपयोग नहीं करते, बल्कि आपका ज्ञान ही आपका उपयोग कर रहा है! कला की दृष्टि से इन पुस्तकों की महत्ता कुछ भी नहीं—शायद विज्ञान की दृष्टि से कुछ हो! किन्तु आपकी भारत-सम्बन्धी कहानियाँ बड़ी ही सजीव हैं। इनमें वही एक दोष है—साम्राज्यवादिनी मनोवृत्ति। फिर भी ये कहानियाँ—ये चित्र बड़े ही सुन्दर हैं। रँगे हुए शीशे के अन्दर से ही सही; पर आपने देखी हैं बहुत-सी चीजें। आपके चित्रों में विश्लेषण-शक्ति शायद न दीखे—अन्वेषण-शक्ति का भी बिलकुल अभाव हो; फिर भी निरीक्षण-शक्ति और चित्रण-शक्ति तो है ही। यही क्या कम है!

क्या किप्लिंग महाशय का नाम चिरस्थायी होगा? गार्डिनर महोदय की सम्मति हम ऊपर दे चुके हैं, उनकी आलोचना में बहुत कुछ तथ्य है। एक समय था, जब किप्लिंग जैसा समयानुकूल लेखक अँगरेजी-साहित्य में कोई न था। अतः आपकी प्रतिष्ठा, कीर्त्ति और कविताएँ घर-घर फैल गईं। उसी समय आपको 'नोबेल पुरस्कार' भी मिला। परन्तु समयानुकूल होने में एक विपत्ति है। समय तो बदलता ही रहता है। यदि प्रतिष्ठा और महत्ता का आधार केवल समयानुकूलता ही हो, तो समय के परिवर्त्तन से प्रतिकूलता आते ही प्रतिष्ठा विलुप्त हो जाती है। हाल ही में आपकी नई पुस्तक "Limits and Renewals" निकली है। इसमें कविताएँ भी हैं, कहानियाँ भी। इसमें आपके सब गुण हैं। हास्य, चरित्र-चित्रण, मनोभावों का चित्रण—सब कुछ उसी ख़ूबी से किया गया है। पर समय? आज समय आपके उतना अनुकूल न रहा! अतः इस नई पुस्तक के लेखक, प्रकाशक और पाठक, तीनों ही निराश ही हुए। तब; हम कह सकते हैं कि आपका प्रभाव कम हो रहा है। शायद कभी वह लुप्त भी हो जाय। पर स्मरण रहे—एक समय ऐसा भी था, जब आपका जितना प्रभाव अँगरेज़ी साहित्य और अँगरेज़ों पर था, उससे अधिक प्रभाव अपने जीवन-काल में शायद ही किसी लेखक का कभी रहा हो।

भूतपूर्व 'मतवाला'-सम्पादक श्रीमहादेवप्रसाद सेठ (मिर्ज़ापुर) गिरफ्तार हो गये।—श्रीनारायणप्रसाद अरोड़ा (कानपुर) और श्रीचन्द्रधर जौहरी (आगरा) जेल से छूटकर आ गये। बम्बई (२९४ कालबादेवी रोड) से पं० राधाकृष्ण शुक्ल के सम्पादत्व में २८ जुलाई से सचित्र हिन्दी-साप्ताहिक 'सिनेमा-संसार' निकलनेवाला है।—सेठ गोविन्ददास अपनी पत्नी की सख्त बीमारी के कारण विना किसी शर्त्त के ही जेल से छूटकर आ गये।—'चाँद' के संचालक श्रीसहगलजी को ६ महीने कड़ी क़ैद और ५००) जुर्माने की सज़ा दी गई है, आप जमानत और मुचलके पर छोड़े गये हैं।—हिन्दू-विश्वविद्यालय के सिनेट ने अगले साल से इण्टरमीडिएट की शिक्षा का माध्यम हिन्दी कर देने का निश्चय किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तितली

लेखक

जयशंकर 'प्रसाद'

(१२)

क्यों बेटी! तुमने सोच-विचार लिया?—कोठरी के बाहर बैठे हुए रामनाथ ने पूछा।

भीतर से राजकुमारी ने कहा—बाबाजी, हमलोग इस समय ब्याह करने के लिये रुपया कहाँ से लावें?

रुपयों से ब्याह नहीं होगा बेटी! ब्याह होगा मधुबन से तितली का। तुम इसे स्वीकार कर लो; और जो कुछ होगा, मैं देख लूँगा। मैं अब बूढ़ा हुआ, तितली को तुम लोगों की स्नेहछाया में दिये बिना मैं कैसे सुख से मरूँगा।

अच्छा, पर एक बात और भी आपने समझ ली है? क्या मधुबन तितली के साथ गृहस्थी चलाने के लिये, दुख-सुख भोगने के लिये, तैयार है? वह अपनी सुध-बुध तो रखता ही ही नहीं! भला उसके गले एक बछिया बाँधकर आप क्या ठीक करेंगे?

सुनो बेटी; दस बीघे तितली के, और तुम लोगों के जो खेत हैं—सब मिलाकर एक छोटी-सी गृहस्थी अच्छी तरह चल सकेगी। फिर तुमको तो यही सब देखना है, करना है। सब सम्हाल लोगी। मधुबन भी पढ़ा-लिखा परिश्रमी लड़का है। लग-लपटकर अपना घर चला ही लेगा।

मधुबन से भी आप पूछ लीजिये। वह मेरी बात सुनता कब है। कई बार मैंने कहा कि अपना घर देख, वह हँस देता है, जैसे उसे इसकी चिन्ता ही नहीं। हमलोग न जाने कैसे अपना पेट भर लेते हैं। फिर पराई लड़की घर में ले आकर तो उसी तरह नहीं चल सकता?

तुम भूलती हो बेटी! पराई लड़की समझता, तो मैं उसके ब्याह की यहाँ चर्चा ही न चलाता। मधुबन और तितली दोनों एक दूसरे को अच्छी तरह पहचान गये हैं। और, तितली पर तुमको दया ही नहीं करनी होगी, तुम उसे प्यार भी करोगी। उसे तुमने इधर देखा है?

नहीं; अब तो वह बहुत दिन से इधर आती ही नहीं।

आज मेमसाहब के साथ वह भी नहाने आई है। शैला का नाम तो तुमने सुना होगा? वही, जो यहाँ के ज़मींदार इन्द्रदेव के साथ विलायत से आई है। बड़ी अच्छी, सुशील, लड़की है। वह भी मेरे यहाँ संस्कृत पढ़ती है। तुम चलकर उन दोनों से बात भी कर लो और देख भी लो।

अच्छा, मैं भी आती हूँ।

मैं भी चलता हूँ बेटी। मधुबन उनके संग नहीं है। मल्लाह को तो सहेज दिया है। तो चलूँ!

रामनाथ नहाने के घाट की ओर चले। राजकुमारी भी रामदीन की नानी के साथ गंगाजी की ओर चली।

अभी वह शेरकोट से बाहर निकलकर पथ पर आई थी कि सामने से चौबेजी दिखाई पड़े। राजकुमारी ने एक बार घूँघट खींचकर मुड़ते हुए निकल जाना चाहा। किन्तु चौबे ने सामने आकर टोंक ही दिया—दुलहिन हैं क्या? अरे मैं तो पहचान ही न सका!

दुख में सब लोग पहचान लें, ऐसा तो नहीं होता—राजकुमारी ने अनखाते हुए कहा।

अरे नहीं-नहीं! मैं भला भूल जाऊँगा? नौकरी ठहरी। बराबर सोचता हूँ कि एक दिन शेरकोट चलूँ; पर छुट्टी मिले तब तो। आज मैंने भी निश्चय कर लिया था कि भेंट करूँगा ही।

वयस्क चौबेजी के मुँह पर एक स्निग्धता छा गई थी; वह मुस्कुराने की चेष्टा करने लगे।

किन्तु मैं नहाने जा रही हूँ।

अच्छी बात है, मैं थोड़ी देर में आऊँगा।—कहकर चौबेजी दूसरी ओर चले गये, और राजकुमारी को पथ चलना दूभर हो गया!

कितने बरस पहले की बात है। जब वह ससुराल में थी, विधवा होने पर भी बहुत-सा दुःख और अपमान-भरा समय वह बिता चुकी थी। वह ससुराल की गृहस्थी में बोझ-सी हो उठी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थी। चचरी सास के व्यंग से नित्य ही घड़ी-दो-घड़ी कोने में मुँह डालकर रोना पड़ता। सब कुछ सहकर भी वहीं खटना पड़ता।

ससुराल के पुरोहितों में चौबेजी का घराना था। चौबे प्रायः आते-जाते—वैसे ही, जैसे घर के प्राणी; और गाँव के सहज नाते से राजकुमारी के वह देवर होते—हँसने-बोलने की बाधा नहीं थी।

राजकुमारी के पति के सामने से ही यह व्यवहार था। विधवा होने पर भी वह छूटा नहीं। उस निराशा और कष्ट के जीवन में भी कभी-कभी चौबे आकर हँसी की रेखा खींच देते। दोनों के हृदय में एक सहज स्निग्धता और सहानुभूति थी। दिन-दिन वही बढ़ने लगी। स्त्री का हृदय था; एक दुलार का प्रत्याशी, उसमें कोई मलिनता न थी।

चौबे भी अज्ञात भाव से उसीका अनुसरण कर रहे थे। पर वह कुछ जैसे अंधकार में चल रहे थे। राजकुमारी फिर भी सावधान थी!

एक दिन सहसा नियमित गालियाँ सुनने के समय जब चौबे का नाम भी उसमें मिलकर भीषण अट्टहास कर उठा, तब राजकुमारी अपने मन में न जाने क्यों उसकी वास्तविकता को खोजने लगी। वह जैसे अपमान की ठोकर से अभिभूत होकर उसी ओर पूर्ण वेग से दौड़ने के लिये प्रस्तुत हुई, बदला लेने के लिये, और अपनी असहाय अवस्था का अवलम्ब खोजने के लिये। किन्तु वह पागलपन क्षणिक ही रहा। उसकी खीझ फल नहीं पा सकी। सहसा मधुबन को सम्हालने के लिये उसे शेरकोट चले आना पड़ा। वह भयानक आँधी क्षितिज में ही दिखलाई देकर रुक गई। चौबे नौकरी करने लगे राजा साहब के यहाँ, और राजकुमारी शेरकोट के झाड़ू और दीवे में लगी—यह घटना संभवतः भूल गई थी; किन्तु आज सहसा वह विस्मृत चित्र सामने आ गया।

राजकुमारी का मन अस्थिर हो गया। वह गंगाजी के नहाने घाट तक बड़ी देर से पहुँची।

शैला और तितली—नहाकर ऊपर खड़ी थीं। बाबा रामनाथ [illegible]ी सन्ध्या कर रहे थे। राजकुमारी को देखते ही तितली ने नम- [illegible] किया और शैला से कहा—आप ही हैं, जिनकी बात [illegible]जी कर रहे थे।

शैला ने कहा—अच्छा! आप ही मधुबन की बहन हैं?

जी।

मैं मधुबन के साथ पढ़ती हूँ। आप भी मेरी बहन हुई न!—शैला ने सरल प्रसन्नता से कहा।

राजकुमारी ने मेम के इस व्यवहार से चकित होकर कहा—मैं आपकी बहन होने योग्य हूँ? यह आपकी बड़ाई है।

क्यों नहीं बहन! तुम ऐसा क्यों सोचती हो? आओ, इस जगह बैठ जायँ। अच्छा होगा कि तुम भी स्नान कर लो, तब हम लोग साथ ही चलें।

नहीं, आपको विलम्ब होगा।—कहकर राजकुमारी विशाल वृक्ष के नीचे पड़े हुए पत्थर की ओर बढ़ी।

शैला और तितली भी उसी पर जाकर बैठीं।

राजकुमारी का हृदय स्निग्ध हो रहा था। उसने देखा, तितली अब वह चंचल लड़की न रही, जो पहले मधुबन के साथ खेलने आया करती। उसकी काली रजनी-सी उनींदी आँखें जैसे सदैव कोई गम्भीर स्वप्न देखती रहती हैं। लम्बा छरहरा अंग, गोरी पतली उँगलियाँ, सहज उन्नत ललाट, कुछ खिंची हुई भौंहें और छोटा-सा पतले-पतले अधरोंवाला मुख—साधारण कृषक-बालिका से कुछ अलग अपनी सत्ता बता रहे थे। कानों के ऊपर से ही घूघट था, जिससे लटें निकली पड़ती थीं। उसकी चौड़े किनारे की धोती का चम्पई रंग उसके शरीर में घुला जा रहा था। वह सन्ध्या के निरभ्र गगन में विकसित होनेवाली—अपने ही मधुर आलोक से सन्तुष्ट—एक छोटी-सी तारिका थी।

राजकुमारी, स्त्री की दृष्टि से, उसे परखने लगी; और रामनाथ का प्रस्ताव मन-ही-मन दुहराने लगी।

शैला ने कहा—अच्छा, तुम कहीं आती-जाती नहीं हो बहन!

कहाँ जाऊँ?

तो मैं ही तुम्हारे यहाँ कभी-कभी आया करूँगी। अकेले घर में बैठे-बैठे कैसे तुम्हारा मन लगता है?

बैठना ही तो नहीं है न! घर का काम कौन करता है? इसीमें दिन बीतता जा रहा है। देखिये, यह तितली पहले मधुबन के साथ कभी-कभी आ जाती थी, खेलती थी। अब तो सयानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो गई है। क्यों री, अभी तो ब्याह भी नहीं हुआ, तू इतनी लजाती क्यों है?—घूमकर जब उसने तितली की ओर देखकर यह बात कही, तो उसके मुख पर एक सहज गम्भीर मुस्कान—लज्जा के बादल में बिजली-सी—चमक उठी।

शैला ने उसकी ठोढ़ी पकड़कर कहा—यह तो अब यहीं आकर रहना चाहती है न, तुम इसको बुलाती नहीं हो, इसीलिये रूठी हुई है।

तितली को अपनी लज्जा प्रकट करने के लिये उठ जाना पड़ा। उसने कहा—क्यों नहीं आऊँगी।

बाबा रामनाथ ऊपर आ गये थे। उन्होंने कहा—अच्छा, तो अब चलना चाहिये।

फिर राजकुमारी की ओर देखकर कहा—तो बेटी, फिर किसी दिन आऊँगा।

राजकुमारी ने नमस्कार किया। वह नहाने के लिये नीचे उतरने लगी, और शैला तितली के साथ रामनाथ का अनुसरण करने लगी।

गंगा के शीतल जल में राजकुमारी देर तक नहाती रही, और सोचती थी अपने जीवन की अतीत घटनाएँ। तितली के ब्याह के प्रसंग से और चौबे के आ जाने से नई होकर वे उसकी आँखों के सामने अपना चित्र उन लहरों में खींच रही थीं। मधुबन की गृहस्थी का नशा उसे अब तक विस्मृति के अंधकार में डाले हुए था। वह सोच रही थी—क्या वही सत्य था? इतना दिन जो मैंने किया, वह भ्रम था! मधुबन जब ब्याह कर लेगा, तब यहाँ मेरा क्या काम रह जायगा? गृहस्थी! उसे चलाने के लिये तो तितली आ ही जायगी। अहा! तितली कितनी सुन्दर है! मधुबन प्रसन्न होगा। और मैं...? अच्छा, तब तीर्थ करने चली जाऊँगी। ऊँह! रुपया चाहिये उसके लिये—कहाँ से आवेगा? अरे जब घूमना ही है, तो क्या रुपये की कमी रह जायगी? रुपया लेकर करूँगी ही क्या? भीख माँगकर या परदेस में मजूरी करके पेट पालूँगी। परन्तु आज इतने दिनों पर चौबे—

उसके हृदय में एक अनुभूति हुई, जिसे वह स्वयं स्पष्ट न कर सकी। एक विकट हलचल होने लगी। वह जैसे उन चपल लहरों में झूमने लगी।

रामदीन की नानी ने कहा—चलो मालकिन, अभी रसोई का सारा काम पड़ा है, मधुबन बाबू आते होंगे।

राजकुमारी जल के बाहर खीझ से भरी निकली। आज उसके प्रौढ़ वय में भी व्यय-विहीन पवित्र यौवन चंचल हो उठा था। चौबे ने उससे फिर मिलने के लिये कहा था। वह आकर लौट न जायँ!

वह जल से निकलते ही घर पहुँचने के लिये व्यग्र हो उठी।

(क्रमशः)

——मैनपुरी के 'आर्य-समाज' के उप-प्रधान बा० व्रजबिहारीलालजी ऐडवोकेट ने 'समाज' को १००) का दान इसलिये दिया है कि उसके सूद से प्रति वर्ष शिवरात्रि पर स्वामी दयानन्द-सम्बन्धी सर्वोत्तम लेख लिखनेवाली बालिका को, जो किसी भी कन्यापाठशाला की पाँचवीं या छठी कक्षा में पढ़ती हो, एक स्वर्ण-पदक दिया जाया करेगा। बालिका के अभाव में यह पदक अन्य स्त्री लेखिका को भी मिल सकेगा।——कानपुर के कराचीखाना मुहल्ले में अमर शहीद श्रीगणेशशंकर विद्यार्थी की स्मृति में एक गायन-मण्डली स्थापित की गई है, जो राष्ट्रीय गानों और नाटकों द्वारा हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रचार करेगी।——कलकत्ता-विश्वविद्यालय के हिन्दी-अध्यापक तथा हिन्दी के प्रसिद्ध भाषा-तत्त्वविद् लेखक श्रीनलिनीमोहन सान्याल एम० ए० वृद्धावस्था के कारण इस वर्ष से अवकाश ग्रहण करने जा रहे हैं। अब केवल पं० सकलनारायण शर्मा काव्य-व्याकरण-सांख्यतीर्थ ही हिन्दी-विभाग में अकेले रह जायँगे। कहते हैं कि विश्वविद्यालय के संचालक अब सान्याल महोदय की जगह पर दूसरी नियुक्ति करना नहीं चाहते, इसी आशय का विज्ञापन भी प्रकाशित किया गया है। हिन्दी की ऐसी अवहेलना!——गत २८ जून के 'स्वराज्य' में छपा है कि महारानी विक्टोरिया अब्दुल नामक हिन्दुस्तानी से हिन्दुस्तानी भाषा सीखा करती थीं, यह बहुत कम लोगों को विदित है।——बँगला-भाषा की सर्वप्रथम उपन्यास-लेखिका श्रीमती स्वर्णकुमारी देवी का, ७६ वर्ष की अवस्था में, देहान्त हो गया; आप श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर की बहन थीं।——स्वामी श्रद्धानन्द की पुत्री श्रीमती वेद-कुमारी को वर्तमान आन्दोलन में भाग लेने के कारण छ महीने की सज़ा दी गई है, स्वामीजी की ही पौत्री कौशल्या देवी ('हिन्दुस्तान टाइम्स' के रिपोर्टर श्रीचमनलाल की पत्नी) और उन्हींकी पौत्रबधू सुमित्रा देवी ('अर्जुन' के सम्पादक श्रीसत्यकामजी की पत्नी) को भी छः छः महीने क़ैद और ५०)-५०) जुर्माने की सज़ा दी गई है।——हिन्दी के प्रसिद्ध वक्ता पं० दीनदयालु शर्मा व्याख्यानवाचस्पति के पुत्र पं० हरिहरस्वरूप शर्मा शास्त्री की धर्मपत्नी श्रीमती लीलावती देवी का, गत २५ जून को अलवर में, देहान्त हो गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विदेश में दैनिक पत्र कैसे निकलते हैं ?

विनोदशंकर व्यास

[अंक १० से आगे—शेषांश]

विदेशी दैनिक पत्रों के कार्यालय में रात को काम करनेवाले सम्पादक का काम बड़ा ही कठिन और उत्तरदायित्वपूर्ण होता है। कारण, प्रातःकाल निकलनेवाले दैनिक पत्रों की सजावट और सम्पादन पर विशेष ध्यान दिया जाता है। यों तो सन्ध्या समय निकलनेवाले दैनिक पत्रों के सम्पादकों का जीवन भी अत्यंत व्यस्त ही रहता है; क्योंकि सायंकाल के दैनिक पत्रों में भी दिन-भर के समाचारों का संग्रह करना पड़ता है। उधर सूर्यास्त होते-होते फुटबाल और क्रिकेट के खेल समाप्त होते हैं, इधर बत्तियों के बलते-बलते खेल की हार-जीत की खबर—खेलाड़ियों की तसवीरों के साथ—दैनिक पत्र के संध्या-संस्करण में निकल जाती है। कभी-कभी बहुत ही प्रसिद्ध और आकर्षक खेलों के समय ऐसा भी होता है कि खेल ज्यों ही समाप्त हुआ, त्यों ही—खेल के मैदान में ही—दैनिक पत्र की प्रतियाँ धड़ाधड़ बिकने लग जाती हैं, जिनमें विजयी दल का चित्र भी रहता है, विजय-संवाद की तो बात ही क्या! यह आश्चर्य जनक व्यापार इस प्रकार होता है—संध्या-संस्करण की सब सामग्री यथा-नियम, ठीक समय पर, तैयार रहती है; छप भी जाती है। केवल प्रसिद्ध खेलों के लिये दो तरह के पन्ने अलग-अलग छपा लिये जाते हैं, जिनमें दोनों दलों की हार-जीत का सचित्र संवाद छपा रहता है; और दोनों में से जो दल विजयी होता है, उसीके चित्रों और समाचारोंवाला पन्ना झट पत्र में लगा-लगाकर उत्सुक ग्राहकों के हाथों में पहुँचा देते हैं। यद्यपि हारे हुए दल के चित्रों और समाचारों वाला पन्ना व्यर्थ हो जाता है—रद्दियों के साथ बिकने योग्य भी नहीं रह जाता, तथापि विजयी दल के चित्रों और समाचारों वाले पन्ने की बेधड़क बिक्री से इसका घाटा पूरा हो जाता है, और असंख्य जनता के हृदय पर पत्र की जो धाक जम जाती है, वही सबसे बड़ा लाभ माना जाता है।

रात-भर के पूर्ण विश्राम के बाद जब सब लोग प्रातःकाल उठते हैं, तब उनका दिमाग़ बिलकुल ताज़ा और हल्का रहता है। उस समय सब लोग ऐसे ही पत्रों को पढ़ना पसन्द करते हैं, जिनमें बढ़िया-से-बढ़िया सामग्री मिल सके—खूब रुचिकर, मनोरंजक और आकर्षक। फिर, सन्ध्या-समय भी, जब सब लोग दिन-भर के परिश्रम से थके-माँदे होने के कारण, हवा खाने और दिल बहलाने के लिये बाहर निकलते या होटल में चाय-पानी करते हैं; तब दिमाग की हरारत मिटाने और दिल को खुश करने के लिये सरस और मनभावनी सामग्रीवाला पत्र ही पढ़ना चाहते हैं, जिसमें हँसी-खेल का काफ़ी मसाला हो।

इस तरह विदेशी दैनिक पत्रों के सम्पादकों को अपने देश की जनता की रुचि और आवश्यकता की पूर्ति का इतना अधिक ध्यान रखना पड़ता है कि वे यदि एक दिन भी अपने काम में चुस्त न रहें, तो उनके पत्र की ख्याति में बट्टा लगने का भय बना रहता है, जिसे वे किसी प्रकार सहन नहीं कर सकते। केवल ग्राहकों की रुचि को तृप्त करने और उनके हृदय में नित-नूतन कौतूहल की सृष्टि करने से ही पत्रों की खपत बढ़ती है, और इस कला में वहाँ के सम्पादक तथा संचालक बड़े ही निपुण और तत्पर होते हैं। यही कारण है कि लोक-प्रियता की घुड़दौड़ में उनके पत्र देखते-देखते बाज़ी मार ले जाते हैं।

पत्रों के कार्यालय में एक विशाल चित्रशाला भी रहती है। उसमें समस्त संसार के प्रमुख स्थानों और व्यक्तियों के चित्रों का संग्रह किया जाता है। सब चित्रों के नम्बर और नाम की क्रमबद्ध सूची भी बनी रहती है। जब जिस चित्र की आवश्यकता पड़ती है, आसानी से उसका उपयोग किया जा सकता है। यदि कोई चित्र समय पर चित्रशाला में उपस्थित न रहा, तो तुरत उसको प्राप्त करने के लिये 'चित्रान्वेषक' नियुक्त होता है। वह किसी भी मूल्य पर उस चित्र को कहीं से अवश्य ही प्राप्त करता है। उस समय पत्र-कार्यालय के चित्रान्वेषक की दशा ठीक वैसी ही होती है, जैसी उस संवाददाता की, जो रात में किसी देहाती घटना की छान-बीन करने के लिये अँधेरे में बीहड़ रास्तों पर मोटर दौड़ाता हुआ भटकता फिरता है। किन्तु चित्रान्वेषक जब अपनी उद्देश्य-सिद्धि के लिये कार्यालय से निकल पड़ता है, तो शायद ही कभी वह ख़ाली हाथ लौटता है। आत्महत्या करनेवाले किसी प्रेमी या प्रेमिका का चित्र प्राप्त करने के लिये वह उसके घर तक की दौड़ लगाता है और उसके परिवारवालों या संबंधियों के अलबम (चित्राधार) से भी उसका चित्र प्राप्त करने की भरपूर चेष्टा करता है। उस समय वह पैसे का मुँह नहीं देखता। किन्तु जो द्रव्य वह दौड़-धूप और चित्र की प्राप्ति में व्यय करता है, वह पत्र के प्रकाशित होने पर पाई-पाई वसूल हो जाता है। तात्पर्य यह कि ग्राहकों की अण्टी से, उन्हें हँसा-खेलाकर, पैसे निकाल लेने की कला में वहाँ के पत्रकार और पत्र-संचालक बड़े दक्ष होते हैं। पैसे को आमंत्रित करने के लिये वे पैसे को ही प्रेरित करते हैं। जैसे किसान आकाश के भरोसे पर अपने घर का अन्न खेतों की गीली मिट्टी में बखेर देता है, और फिर भाग्य की खेती काटकर अन्नों से अपने घर का कोना-कोना भर लेता है, वैसे ही विदेशी पत्रकार और पत्र-संचालक भी अन्न के दाने की तरह पैसे बखेरकर चौगुने पैसे बटोर लेते हैं। धन्य है उनका साहस और धन्य है उनका उद्योग!

ज्यों-ज्यों पत्र के निकलने का समय समीप आता जाता है, त्यों-त्यों कार्यालय के कर्मचारियों की व्यस्तता बढ़ती चली जाती है। यद्यपि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादक प्रायः सब समाचारों और लेखों के छपने का स्थान निश्चित कर देता है, तथापि सजावट के समय, पत्र-परिष्कारक की सम्मति के अनुसार, स्थान-परिवर्त्तन करना आवश्यक हो जाता है। पत्र के रूप को सुन्दर और लुभावना बनाने के लिये, प्रस्तुत की हुई सामग्री में घटाने-बढ़ाने की भी आवश्यकता पड़ जाती है। इसी समय सम्पादक के कौशल की परीक्षा होती है। उस समय सम्पादन-कला बड़ी खरी कसौटी पर कसी जाती है। कभी-कभी तो ऐसा होता है कि पत्र बिलकुल तैयार होकर मशीन पर छपने जा रहा है, और यकायक किसी बड़ी उत्तेजना-पूर्ण घटना की सूचना मिल जाती है—जैसे रेल की टक्कर, खान की धँसान, अग्निकाण्ड इत्यादि। उस समय मशीन पर चढ़े हुए फ़ारम का सजा-सजाया पेज तोड़कर नया समाचार यथास्थान सजाया जाता है। ऐसे अवसर पर कम्पोज़ीटरों, प्रूफ़-रीडरों और मशीनवालों की फुर्ती, मुस्तैदी और हाथ की सफ़ाई देखने लायक होती है। सबके काम इस तरह बँटे और सधे हुए रहते हैं कि चाहे कितनी भी जल्दीबाज़ी करनी पड़े, काम में देर हो ही नहीं सकती। सबके पास, समय पर काम देने वाले, उपयुक्त साधन भी सदा प्रस्तुत रहते हैं। किसी भी आवश्यक सामग्री या साधन के अभाव में कोई भी कर्मचारी कभी अपना हाथ नहीं रोकता।

किसी पत्र-कार्यालय का मशीन-विभाग तो देखने ही योग्य होता है। सब तरह की मशीनें अपनी-अपनी जगह पर फ़िट रहती हैं। वे बिजली की शक्ति से आश्चर्य-जनक कार्य कर दिखाती हैं। नार्थक्लिफ़ हाउस में, जहाँ से 'डेली मेल' और 'सण्डे डिस्पैच' नामक दैनिक पत्र निकलते हैं, विशाल-विशाल मशीनों की चार पंक्तियाँ सजी हुई हैं, जिनमें हर-एक मशीन ११७ फीट लम्बी है। उनमें ४८ मशीनें ऐसी हैं, जो आठ पन्ने के पत्र की ३६ हजार प्रतियाँ एक घंटे में छापती हैं। चार-चार मील लम्बे कागज के मोटे-मोटे रोलर उनपर चढ़े रहते हैं। प्रति सप्ताह १६ हज़ार मील लम्बा कागज एक पत्र के छपने में खर्च हो जाता है। यदि प्रति पक्ष या प्रति मास के कागज का व्यय-विस्तार कूता जाय, तो कागज की लम्बाई समस्त भूमण्डल की परिक्रमा करने के लिये काफ़ी साबित होगी।

एक-एक दैनिक पत्र के कार्यालय में क़रीब डेढ़-डेढ़ हज़ार चिट्ठियाँ एक दफ़े की डाक में आती हैं। चिट्ठियाँ अनेक प्रकार और विविध विषय की होती हैं। किसीमें कोई आविष्कारक अपने आविष्कार की कहानी लिख भेजता है, किसीमें कोई अपनी जिज्ञासा प्रकट करता है, किसीमें कोई उसी पत्र की भूलों पर सम्पादक का ध्यान आकृष्ट करता है, किसीमें प्रकाशित समाचारों का संशोधित रूप रहता है, किसीमें पत्र की नीति और शैली पर टीका-टिप्पणी रहती है, किसीमें तरह-तरह की शिकायतें लिखी होती हैं—इत्यादि। कितने ही लेख तो ४० हज़ार से अधिक शब्दोंवाले आते हैं; पर उन्हें सम्पादक-मण्डल की छुँछलाहट और क्रूरता के सिवा जनता की दृष्टि नसीब नहीं होती। जिस तरह डाक का थैला प्रति दिन भरा हुआ आता है, उसी तरह रद्दी की टोकरी भी रोज़ भरी ही रहती है! कितने ही पाठक तो विराम चिन्हों की भूल तक के लिये अपनी चिट्ठी में सम्पादक को नम्र झिड़कियाँ सुनाते हैं और कभी-कभी मधुर एवं शिष्ट व्यंग से भरे उपालम्भ भी देते हैं। भाषा की भूलें दिखानेवाले पाठक भी नहीं चूकते। शब्दों के रूप और प्रयोग के विषय में भी अनेक पाठक विवाद उठाते हैं। ऐसी चिट्ठियों पर सम्पादक प्रायः विशेष ध्यान देते हैं—किसीको पढ़कर 'भ्रमसंशोधन' प्रकाशित करते हैं, किसीको पढ़कर अपने पत्र के विनोद-स्तम्भ में मीठी चुटकियाँ उड़ाते हैं, किसीको पढ़कर केवल धन्यवाद देते और आगे के लिये सावधान होते हैं।

महत्त्वपूर्ण और रोचक समाचारों के प्रेषकों को पुरस्कार भी दिये जाते हैं। पुरस्कार देते समय समाचारों की लोक-रंजकता और महत्ता पर तो ध्यान दिया ही जाता है; उनकी भाषा और शैली तथा लिखावट पर भी विचार होता है। कितने ही कुशल समाचार-प्रेषक अपनी बुद्धि और शक्ति का परिचय देकर सम्पादकों के मित्र बन जाते हैं। योग्यता का आदर सर्वत्र होता है।

बहुत-से लोग तो पत्र-कार्यालय में भेद-भरे सच्चे समाचार स्वयं पहुँचा जाते हैं या गुप्त पत्र में लिख भेजते हैं या टेलीफ़ोन से कहते हैं; परन्तु हर हालत में वे अपना नाम छिपाये रखने के लिये समाचार-संपादक से अनुरोध कर जाते हैं। फिर चाहे जो हो जाय, उनके नाम का पता किसीको नहीं लग सकता। समाचार-विभाग के प्रत्येक कर्मचारी पर जनता का इतना प्रगाढ़ विश्वास होता है कि लोग उससे सच्चा समाचार कहने में तनिक भी संकुचित या शंकित नहीं होते। समाचार-विभाग के कर्मचारियों को केवल कान होता है, मुँह नहीं। उनके कान में जो समाचार पड़ेगा, वह पत्र के पन्ने पर ही दीख पड़ेगा, उनकी ज़बान पर कभी नहीं। ऐसे-ऐसे विश्वस्त सूत्र प्रत्येक पत्र के साथ सम्बन्ध रखते हैं। इनके नाम का पता लगना असम्भव होता है; पर इनके काम से बहुतों का उपकार होता है—कितने ही गूढ़ रहस्य खुल जाते हैं, जिनसे जनता का यथेष्ट मनोरंजन होता है। ऐसे छद्मवेशी पत्र-दूत सभी श्रेणी के लोगों में होते हैं। ये अधिकतर अपने मन-बहलाव के लिये ही ऐसा 'छिपे रुस्तम' का काम करते हैं।

कुछ लोग झूठे समाचार देनेवाले भेदिया भी होते हैं; पर वे एक बार से अधिक फिर कभी धोखा नहीं दे सकते। पत्र-कार्यालय में जो एक बार झूठा साबित हो जाता है, वह जीवन-भर के लिये मुहरदार झूठा बन जाता है! पत्र-कार्यालय में ही सचाई और कर्तव्य-परायणता का वास्तविक मूल्य देखने में आता है।*

---

* 'फ्रेडरिक कार्टर' की "सिक्रेट्स् अफ योर डेली पेपर" नामक पुस्तक के आधार पर लिखित।—लेखक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मधु

श्री गोपाल सिंह नेपाली

१

चहक उठी तम के हटते ही पंछी अपने घर में
बजने लगी मधुर शहनाई नीड़ों में, तरुवर में
लोचन खुले मधुकरी के जब, सोते-सोते देखा
दूर क्षितिज में कहीं-कहीं पर खिंची उषा की रेखा
बोली मधुकर से—ऐ राजा, जागो, हुआ सबेरा
लगे मधुप कुञ्जों में देने घूम-घूमकर फेरा
किन्तु पड़ा है रीता उपवन, कलियाँ खिलीं न वन में
ले आओ मधु जाओ राजा किसी तरह मधुवन में
इधर-उधर देखा लोचन से मधुकर उठा शयन से
पाँख खोल परदेस चल पड़ा बहुत दूर निज वन से
चलते-चलते बोला—रानी, जल्दी हीं आऊँगा
अबकी बार अवश्य पात्र यह मधु से भर लाऊँगा

२

बहुत दूर उड़कर मधुवन में पहुँचा कुञ्ज-विहारी
देख गया सारी फुलवारी, वन की क्यारी-क्यारी
किन्तु मिला न एक भी हँसता सुमन उसे वन भर में
बैठी थी मधुपों की टोली आशा में, तरुवर में
भीतर ही रहती थीं कलियाँ मुँह पर पर्दा डाले
बाट जौहते थे आँगन में उन्हें चाहनेवाले
बहुत दिनों के बैठे मधुकर प्यासे थे, भूखे थे
तब के मोटे अब पतले थे, दुबले थे, सूखे थे
टो-टोकर वन का तरु-पल्लव बोला मधुकर मन में
कुछ ही दिन पर आ जायेगी मधु-ऋतु इस कानन में
तब तक बैठूँ आस लगाये मैं भी वन तरुवर में
फिर तो ले जाऊँगा ही मधु भरकर अपने घर में

३

एक दिवस देखा मधुकर ने, बिहँस रही थीं कलियाँ
गम-गम गमक रही थीं वन की सौरभ-सुरभित गलियाँ
तरुवर के सुन्दर महलों में, पत्तों के आँगन में
इठलाती थीं तब की कलियाँ मस्ती में, यौवन में
डूब-डूबकर रस पीते थे—मधुकर मधु लेते थे
खिले सुमन भी मुक्त-हस्त हो उन्हें दान देते थे
वह भी घूमा झूम-झूमकर वन की गली-गली में
चखता चला मधुर मधु पहले हँसती कली-कली में
मध्य विपिन में एक कुञ्ज था—जो मधुपों से खाली
लदी हुई थी सरस सुमन से जिसकी डाली-डाली
कर-कर याद प्रिया की, घर की, भावी सुख की मन में
डूब-डूबकर लगा पात्र में मध भरने छन-छन में

४

मधुवन-भर में मीठा मधु ले मधुकर उड़ा गगन में
लहरें मार रही थीं उसकी मधुर उमंगें मन में
सोचा—अब जल्दी ही जाकर रानी को मधु दूँगा
कर आलिंगन फिर सनेह से उसका चुम्बन लूँगा
कैसा होगा तब वह जीवन, जीवन की वे घड़ियाँ
जब तैरेंगी अनिल-लहर पर दो कण्ठों की कड़ियाँ
नभ के नीचे हरियाली में जब हम मधु पीयेंगे
मधु खायेंगे, मधु पीयेंगे, मधु से ही जीयेंगे
सन्ध्या होते-होते पहुँचा तीर एक सरिता के
थकन दूर करने के हित वह बैठा तट पर जाके
इतने में आ पहुँची आँधी जोरों की उस छन में
मधप गिरा, लुढ़की मधु-प्याली तट के बालू-कन में

५

सन्ध्या आकर चली गई थी, अब रजनी आती थी
नील गगन में एक तारिका बैठी मुस्काती थी
शीतल, मन्द बयार डाल से गले-गले मिलती थी
पुलकित होते थे तरुवर, पत्ती-पत्ती हिलती थी
करती थी मधुकरी प्रतीक्षा बैठी निज मधुकर की
आये क्यों न अभी तक राजा, भूले क्यों सुधि घर की
इतने में पहुँची पाँखों की ध्वनि उसके कानों में
नाच उठी मीठी-सी आशा दिल के अरमानों में
आते ही मधुकर से बोली 'राजा ?' घर की रानी
'रा...नी !' कहते-कहते ही थक गई मधुप की बानी
बड़े दर्द से बोला फिर वह भर आँखों में पानी
—यही मधुर मध मधुवन का है, ले ले मेरी रानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

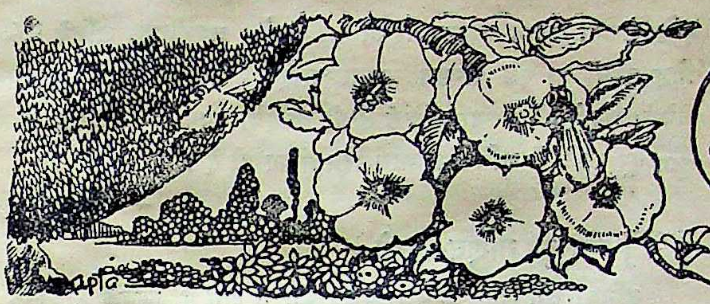

मधु संचय

[१] मनुष्य के अधिकार—

मनुष्य के मूल अधिकार किसी खास विधान पर अवलंबित नहीं रहते। बहुत दिन पूर्व जैसा एक प्रसिद्ध अमेरिकन लेखक लिख चुका है, मनुष्य के पवित्र अधिकारों को पुराने कागजों और मिसिलों में ढूँढ़ने की ज़रूरत नहीं है। उन्हें स्वयं ईश्वर ने सूर्य-किरणों से मानव-हृदय पर अंकित कर रक्खा है, जिसे मर्त्यलोक की कोई शक्ति मिटा नहीं सकती। एक अंगरेज कानून-पंडित के शब्दों में जनता का समर्थन प्राप्त करने के लिये मनुष्य के बनाये कानून प्रकृति के कानूनों के—न्याय, विनय, दया आदि के सिद्धान्तों के—अनुसार ही होने चाहिये। दूसरे एक लेखक का कहना है कि व्यवस्थापक को मानव-हृदय की प्रवृत्तियों का नियंत्रण करने का कोई अधिकार नहीं है, उसका काम इन्हें समझना और इनकी तृप्ति की व्यवस्था करना है। एक बड़े अंगरेज लेखक ने बताया है कि किसी भी सर्वोपरि शक्ति का वास्तविक अधिकार-क्षेत्र सीमित है, अथवा उसमें कुछ प्रतिबंध हैं, जिनमें से एक बहुत महत्त्वपूर्ण है। सर्वोपरि शक्ति के वास्तविक अधिकार में इस कारण प्रतिबंध हो जाता है, कि यदि उसके कानून कुत्सित हुए, तो उसकी प्रजा के, या उसमें से बहुतों के, इन कानूनों की अवहेलना या विरोध करने का निश्चय या संभावना होती है। दूसरा बड़ा लेखक लिखता है कि यदि कोई व्यवस्थापक-मंडल निश्चय करे कि नीली आँखवाले सब बच्चे मार डाले जायँ, तो ऐसे बच्चों की रक्षा करना ग़ैर-क़ानूनी हो जायगा, पर व्यवस्थापक ऐसा क़ानून तभी पास कर सकते हैं, जब वे पागल हो जायँ और जनता उसे तभी मान सकती है, जब वह बिलकुल ही निर्बुद्धि हो।

पं० मदनमोहन मालवीय] [दैनिक 'आज'

[२] मध्यप्रांतीय एकेडमी—

कुछ वर्षों से, युक्तप्रान्त का अनुकरण कर, मध्यप्रान्त ने भी एक 'एकेडमी' की स्थापना की है। पर मध्यप्रान्त की 'एकेडमी'-संस्था का कार्य इतनी मन्थर गति से चलता है कि उसके अस्तित्व का पता ही बहुत कम लोगों को है! युक्तप्रान्त की 'एकेडमी' जो कुछ कर रही है, उससे साहित्य-क्षेत्र में थोड़ी-बहुत 'हलचल' अवश्य अनुभव होती है, और उस 'हलचल' का परिणाम कुछ अंशों में साहित्य-सृष्टि भी होता है। परन्तु हमारे (मध्य) प्रान्त की 'एकेडमी' की हमें ऐसी कोई 'हलचल' नहीं दिखलाई देती! हाँ, दो-एक मराठी पुस्तकों पर पुरस्कार देने की चर्चा अवश्य सुनाई दी थी! क्या हम एकेडमी के कर्ता-धर्ताओं से आशा करें कि वे जाग्रत होकर प्रान्त के साहित्यिक व्यक्तियों को 'एकेडमी' के 'अस्तित्व' का अनुभव कराने का उद्योग करेंगे? एकेडमी की प्रत्येक कार्यवाही का प्रकाशन प्रान्तीय पत्रों द्वारा होना भी आवश्यक है।

श्रीविनयमोहन शर्मा बी०, ए०] ['स्वराज्य'

[३] संसार-यात्री 'गिसेपी बो'—

योरप-निवासियों में संसार-भ्रमण करने की कुछ धुन-सी है। दुर्भाग्य से यह 'धुन' अभी भारतवासियों पर सवार नहीं हुई, यद्यपि इधर पिछले कुछ वर्षों से उन्हें भी इसकी 'हवा' लग चली है। योरप के यात्री बिना भारतवर्ष भ्रमण किये अपने देश को बहुत कम लौटकर जाते हैं। बहुत प्राचीन काल से हम देखते हैं कि विदेशी यात्री सदा यहाँ आते रहे हैं और यहाँ की विद्या, सभ्यता और विज्ञान का ज्ञान प्राप्त कर अपने देश में फैलाते रहे हैं। आधुनिक समय में भी इसी विचार से कई यात्री आते हैं। अभी कुछ दिन हुए, मेरी मुलाकात एक संसार-यात्री से हुई थी। उनका नाम 'गिसेपी बो' है। आप इटली के नागरिक हैं। परन्तु पिछले कुछ वर्षों से दक्षिण अमेरिका के अर्जेण्टाइन देश की राजधानी 'ब्यूनासायर' में रहते हैं। आपकी उम्र इस समय ४५ वर्ष से ज्यादा होगी, फिर भी आप इस कठोर भ्रमण में मस्त हैं। आप बड़ी ही शांत प्रकृति के ज़िन्दादिल मनुष्य हैं। वेश-भूषा बड़ी ही साधारण है—एक हाफ पैण्ट, कमीज, कोट, टोप और सामने एक टेलिसकोप लटकता रहता है। आपके भ्रमण का मुख्य उद्देश्य अलकोहल की बुराइयाँ बतलाना और उसके विरुद्ध जबरदस्त प्रचार करना है। आप भौगोलिक और भू-रसायन-अन्वेषक वैज्ञानिक संस्था के सदस्य हैं, और अन्वेषण के लिये संसार-यात्रा करने निकले हैं। संसार-भ्रमण में आपके साढ़े सात वर्ष व्यतीत हो चुके, अभी ढाई वर्ष और लगेंगे। इतने समय में आप अमेरिका, अफ्रिका, योरप, एशिया आदि के २५ देशों का भ्रमण कर चुके हैं, और आज-कल भारतवर्ष का भ्रमण कर रहे हैं। यहाँ का भ्रमण कर लेने के बाद, आस्ट्रेलिया होते हुए, स्वदेश (अर्जेण्टाइन) लौट जायँगे। वहाँ कुछ दिन आराम करने के बाद, अपनी यात्रा का पूर्ण विवरण पुस्तक-रूप में लिखेंगे। संसार के बड़े-बड़े लेखक, ग्रंथकार, चित्रकार, वैज्ञानिक, राजनीतिज्ञ और शासकों से प्राप्त किये हुए प्रशंसापत्र आपके पास हैं। भारतवर्ष में भी आपने महात्मा गांधी, कवीन्द्र रवीन्द्र, देवी सरोजिनी के प्रशंसापत्र प्राप्त किये हैं। आप घर से एक पैसा भी लेकर नहीं चले थे। आपका खर्च, दाताओं और प्रशंसकों के दान पर, चलता है। रहन-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहन आपका बड़ा ही साधारण है। साथ में 'प्यरा' नाम का एक कुत्ता भी है। ऐसा स्वामिभक्त कुत्ता मैंने आज तक नहीं देखा। उस कुत्ते की मृत्यु के साथ ही आपका जीवन नीरस हो जायगा। आप अँगरेजी भाषा बहुत टूटी-फूटी जानते हैं; पर जर्मन, फ्रेंच और इटालियन भाषाओं के अच्छे ज्ञाता हैं।

श्रीसन्तलाल कटारे] ['कर्मवीर'

[४] साहित्य में अश्लीलता—

मराठी "केसरी" में वसंत-व्याख्यान-माला प्रकाशित हो रही है। उसमें "साहित्य में अश्लीलता" विषय पर एक भाषण प्रकाशित हुआ है, जिसका सार यहाँ दिया जाता है—"साहित्य नित्योपयोगी है, यह सदा समाज का पथ-प्रदर्शक है। मानव-शरीर के जड़ और चैतन्य ऐसे दो विभाग हैं, जिसमें जड़-विभाग की क्षुधा-शांति के लिये अन्न की आवश्यकता है, और चैतन्य-विभाग की क्षुधा साहित्य से बुझती है। इस लिये साहित्य की भी उतनी ही आवश्यकता है, जितनी अन्न की। यह चिन्ता-विभाग की भूख जिस साहित्य से शांत होती है, वह साहित्य अत्यन्त सुन्दर, उदात्त और नीति-प्रद होना चाहिये। ऐसी ही भावना से भरे हुए लेख ही साहित्य कहे जाते हैं और हैं। इसके विपरीत को साहित्य नहीं कहते। शास्त्रकारों को चाहिये कि अनर्गल साहित्य का निर्माण और करनेवालों को दण्डित करें। मम्मट ने "काव्यप्रकाश" के सातवें प्रकरण में एक उदाहण में काव्यदोष की विवेचना की है। साहित्य से अश्लीलता कैसे दूर की जाय, इसकी विवेचना में मम्मट का कहना है कि उदाहरण में अश्लील वाक्य का उद्घाटन न करे। यही बात क्षेमेन्द्र ने भी कही है। क्षेमेन्द्र ने अपने विवेचन में औचित्य का मार्मिक विवेचन किया है। जनता को चाहिये कि वह अश्लील साहित्य का बहिष्कार करे। नाटकों में दिखाई देनेवाली अश्लीलता के सम्बंध में समाचार-पत्रकारों को चाहिये कि अभिप्राय न देकर योग्य शब्दों द्वारा इसकी टीका करें। संस्कृत-साहित्य में भी कितने ही स्थानों में अश्लीलता पाई जाती है। "गीत-गोविन्द" काव्य के ३० वें गीत में रति-प्रसंग का वर्णन है। वर्णन अत्यन्त सुन्दर है; परन्तु उसके पढ़ने पर सहृदय के दूध-रूपी हृदय में वह वर्णन नमक के टुकड़े का काम करेगा। कुछ लोगों को राधा-माधव के शृंगार में आनन्द आता है। मराठी में मुक्तेश्वर कवि की, स्वर्गीय कृष्ण शास्त्री चिपलूणकर ने, बड़ी प्रशंसा की है—अत्यन्त प्रतिभावान बताया है। परन्तु उनका दुष्यन्त-शकुन्तला-आख्यान बाँचने का अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता। कवि मोरोपंत के काव्य में भी अश्लीलता है, जिसके बाँचने से संकोच और लज्जा उत्पन्न होती है। मोरोपंत-जैसे प्रतिष्ठित और प्रतिभाशाली कवि की कविताओं में कुछ स्थान तो ऐसे हैं, जिनके पढ़ने पर कोमल वृत्ति के पुरुष और स्त्रियों के हृदय को धक्का लगे विना रहता ही नहीं। जिस ग्रंथ के अध्ययन से मनुष्य की प्रवृत्ति अनीति की ओर जाय, वह ग्रन्थ या साहित्य बुरा और त्याज्य है। ऐसे साहित्य की प्रवृत्ति अथवा वृद्धि रोकना जनता या सरकार का कर्तव्य है। अश्लीलता जाँचने के लिये विज्ञ पुरुषों का एक मण्डल बनना चाहिये; इस जाँच में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या अधिक होनी चाहिये, क्योंकि आजकल अश्लीलता दूर करने में अधिकांश भाग स्त्रियों का ही है।"

—दैनिक 'अर्जुन'

[५] अद्भुत गणित-शास्त्री—

दुनिया उन लोगों के नाम बहुत कम जानती है, जिनके मस्तिष्क ने मानसिक व्यवहार की अद्भुत क्रियाएँ कर दिखाई हैं! १०० अंकों को अन्य १०० अंकों से गुणकर कुछ मिनटों के अन्दर ही लिख देना, असाधारण शक्ति है। जिस क्रिया में कागज और पेन्सिल की सहायता से ३० घण्टे लग सकते हैं, ढाका (बंगाल) के श्री सोमेश बोस उसे केवल मानसपत्र पर मन की लेखनी से लिखकर दो या तीन घण्टों में ही बतला देते हैं! तीन अंकों को परस्पर कई बार गुणकर बतला देना—सैकड़ों अंकों का वर्ग-घन-दशम, सत्रहवाँ, उन्नीसवाँ, सौवाँ मूल निकालना—आदि अनेक चमत्कार अमेरिका और इङ्गलैण्ड के गणित-वेत्ताओं के सामने आप दिखा चुके हैं। अमेरिका के एक गणितज्ञ ने आपको 'संसार का श्रेष्ठतम अंक-शास्त्री' कहा है। आप सन् १९२९-३० में इंगलैण्ड भी गये थे; परन्तु अब स्वदेश में वापस आ गये हैं। मस्तिष्क-शक्ति के केंद्रीकरण और राजयोग के अभ्यास से ही आपने यह अद्वितीय शक्ति संवर्धित की है।

—'स्वराज्य'

[६] ख्वाजा हसन निजामी का 'स्वदेशी'-प्रेम —

दिल्ली में स्वदेशी-संघ की ओर से हुई एक विराट सभा में ख्वाजा हसननिजामी ने कहा कि "मैं प्रण करता हूँ कि आज से स्वदेशी चीजें ही खरीदूँगा और अपने अनुयायियों को भी स्वदेशी खरीदने के लिये कहूँगा। मेरे चेहरे की ओर आप लोग देखिये कि इसपर 'मेड इन इंगलैंड' तो नहीं लिखा हुआ है! यदि नहीं; तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं इस पवित्र भूमि भारत का ही बना हुआ हूँ। हम सब हिन्दुस्तान में ही पैदा हुए हैं और अन्त में इसी की मिट्टी में हमें मिल जाना होगा। मेरे पुरखा साढ़े छ सौ वर्ष पहले दिल्ली में आये थे। मेरे शरीर की हड्डियाँ, रक्त, खाल और बाल सब दिल्ली के बने हुए हैं। मैं सबसे पहले हिन्दुस्तानी हूँ और बाद में देहलवी।"

—'आर्यमित्र'

———

——जबलपुर के सुप्रसिद्ध राष्ट्रभाषाभक्त सेठ गोविन्ददास की धर्मपत्नी डेढ़ महीने से बीमार हैं। अवस्था चिन्ताजनक होने के कारण सरकार से प्रार्थना की गई है कि सेठजी को जेल से मुक्त करके पत्नी से मिलने का अवसर दिया जाय।—मजिस्ट्रेट की आज्ञा भंग करने के कारण गुरुकुल काँगड़ी के भूतपूर्व मुख्याधिष्ठाता आचार्य रामदेव को १८ साल कड़ी कैद और ... जुर्माने की सज़ा दी गई है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समालोचना

श्रीहरिहरनाथ, बी० ए०

जमीन जब तक ऊसर रहती है, तब तक उसमें घास या कँटीले पौधों का उगना भी स्पृहणीय होता है। ऊसर को उर्वर बनाने के लिये लोग अच्छे-अच्छे फल-फूल के पेड़ों की कामना को रोककर शीशम या महुआ-जैसे पेड़ों को ही लगने देते हैं। पर जब वह ज़मीन उपजाऊ हो जाती है और उसमें सुन्दर फूलों के पेड़ उग जाते हैं, तो फिर मनुष्य का अभीष्ट सौन्दर्य-सम्पादन की रुचि में परिणत हो जाता है; और तब वह उसी बाग़वान को चतुर और कुशल मानने लगता है, जो उन पेड़ों को न केवल परिवर्द्धित करने का ध्यान रक्खे, वरन् उनकी डालियों को काटने-छाँटने का भी काम करता रहे। कुशल बाग़वान का समय पेड़ लगाने या उसमें खाद-पानी देने में कम, पर उनको काटने-छाँटने में अधिक लगता है और तभी उस बाग़ के साधारण पुष्पविहीन झाड़ भी चित्र-विचित्र रूपों को धारण करके दर्शक को मुग्ध कर देते हैं।

ठीक यही कार्य-क्रम संसार के प्रायः सभी क्षेत्रों में व्यवहृत होता है। अतएव कोई कारण नहीं कि वह हिन्दी-साहित्य के विषय में भी उपयुक्त न हो। हिन्दी-साहित्य का अब वह समय आ गया है, जब काटना-छाँटना आवश्यक एवं अनिवार्य है। यदि इस साहित्य के बाग़वान अब काटने-छाँटने पर अधिक ध्यान न देंगे, तो शीघ्र ही वह उस गृहोद्यान का रूप धारण कर लेगा, जो निरीक्षण के बिना जंगल-सा हो जाता है। अब हिन्दी-क्षेत्र को उर्वर बनाने की बात सर्व-प्रधान नहीं रह गई। अब हिन्दी काफ़ी तौर से लिखी और पढ़ी जाने लगी है, और उसके लेखक मनोविनोद के लिये लिखनेवाले अँगरेज़ी के ग्रेजुएट ही नहीं हैं, वरन् हिन्दी के नाम पर जीने और मरनेवाले भी हैं। अब हिन्दी की ओर रुचि और प्रेम उत्पन्न हो गया है, तथा प्रायः प्रत्येक विषय पर अधिक नहीं तो दो-चार पुस्तकें अवश्य हो गई हैं। अतएव अब आवश्यकता अच्छी पुस्तकों और अच्छे साहित्य की है तथा ऐसे लेखकों की भी है, जो केवल लिखना ही न जानें, वरन् अच्छा लिखना जानें। साथ ही, अब आवश्यकता न केवल अच्छा लिखने की है, वरन् यह भी जानने की है कि क्या लिखना चाहिये और क्या लिखना कम आवश्यक है तथा क्या अधिक। इन आवश्यकताओं की पूर्ति का एकमात्र साधन समालोचना एवं सन्मार्गनिर्देश ही है। अतएव अब हिन्दी की उन्नति के लिये इन दोनों का होना सर्व-प्रधान है। सन्मार्गनिर्देश समालोचना का ही अंग है, पर जब हम समालोचना का पूर्ण रूप नहीं समझते, अथवा उसका सम्पादन शुद्ध भाव से नहीं करते, तो सन्मार्ग-निदर्शन का अंग छूट जाता है। इतना ही नहीं, तब हमारी समालोचना एक ऐसी चीज़ हो जाती है, जिसका उपयोग न साहित्य के लिये होता और न लेखक या पाठक के ही लिये।

प्रायः ऐसी ही व्यर्थ समालोचनाएँ आज दिन हिन्दी संसार में देख पड़ती हैं। वरन् कहना तो यह चाहिये कि आज दिन जो समालोचनाएँ देख पड़ती हैं, उनका वह आधार ही नहीं होता, जो साहित्यिक समालोचना का होना चाहिये। आज की समालोचनाएँ तो चाहे किसी लेखक के दिल के बुख़ार का थर्मामेटर होती हैं या किसी पुस्तक का विज्ञापन, और सो भी ऐसे, जिनसे पाठक के हृदय में पुस्तक के वास्तविक रूप का—सच्चा के बदले झूठा—भाव उत्पन्न होता है। अतः हिन्दी के लिये समालोचना की समालोचना की भी अनिवार्यता उपस्थित हो गई है। सच्ची साहित्यिक समालोचना से न केवल साहित्य की उन्नति होती है—न केवल लेखक दोष-मुक्त एवं कुशल होता है, वरन् समालोचक द्वारा पाठकों की रुचि और कुरुचि का निदर्शन होने के कारण पाठकों का भी लाभ होता है। अतएव हिन्दी के लिये ऐसी समालोचना आवश्यक है।

जिस समालोचना का उल्लेख किया गया है, उसके प्रत्येक अंग का वर्णन करना विस्तारापेक्षी है। भाषा, भाव एवं व्यंजन-प्रकार—साहित्य के ये तीन अंग समालोच्य होते हैं। जब साहित्य और उसके निर्माता सुदृढ़ हो जाते हैं, तो भाषा पर उतना अधिक ध्यान देना आवश्यक नहीं होता; पर अभी हिन्दी के विषय में ऐसा नहीं हो सकता। हिन्दी के सम्बन्ध में तो भाषा को, उक्त दोनों की अपेक्षा, अधिक महत्त्व मानना चाहिये; क्योंकि भाषा ही वह नींव है, जिसपर भाव का क़िला बनाया जाता है। भाव का महत्त्व किसी प्रकार कम नहीं है, तथापि साहित्य के लिये व्यंजन-प्रकार की विशेषता माननी होती है। उधार लेने तथा चुराने की अवस्था में—जो सभी भाषाओं में होता है, विशेषतः प्रारम्भिक अवस्था में—भाषा और व्यंजन-प्रकार का गौरव बहुत अधिक हो जाता है। साहित्य की उन्नतावस्था में भी भाषा तथा व्यंजन-प्रकार का ही गौरव अधिक रहता है और उनमें भी व्यंजन-प्रकार ही महत्तम हो जाता है—यहाँ तक कि किसी-किसी का यह मत हो गया है कि 'यदि कोई लेखक पुरानी बातों को अपनी बनाकर लिखे तो चोरी का प्रश्न होना ही अनुचित है।'

इस प्रकार की गौरवपूर्ण एवं सर्वाङ्ग-पूर्ण समालोचना प्रस्तुत करना गम्भीर विद्वान्, असाधारणतया कुशल तथा विशाल अनुभवपूर्ण साहित्य-'कला'-धरों का ही कार्य है और उनके लिये निश्चिन्तता, प्रोत्साहन एवं साधन का भी योग्यतम होना अपेक्षित है। तभी उस समालोचना में न केवल अक्षर, शब्द, वाक्य, पैराग्राफ़, अध्याय तथा पुस्तक वा लेख के प्रारम्भ, मध्य और अन्त के रूप की विवेचना होगी; वरन् शैली एवं भाव तथा दोनों के पृथक् और संयुक्त रूप के साथ-ही-साथ दोनों के संयोग-विधान की भी पूर्ण समीक्षा प्रस्तुत हो सकेगी।

साहित्य की प्रत्येक पुस्तक की समालोचना में लेखक द्वारा प्रयुक्त शब्दों तक की समीक्षा होनी चाहिये, जो न केवल वर्णात्मक तथा वैयाकरणात्मक विचार से हो, वरन् अर्थ, उपयुक्त प्रयुक्ति एवं ध्वनि,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस इत्यादि की संगति के भी विचार से की जाय। इसी प्रकार पुस्तक के बाह्य स्वरूप और अंग की परीक्षा के साथ-ही-साथ अन्तरंग भावों की भी तथा उन दोनों के परस्पर सहयोग, उपयोग एवं संगति के औचित्य की भी समीक्षा होनी चाहिये। यद्यपि मौलिक पुस्तकों में ही उक्त समीक्षा-क्रम पूर्णरूप से घटित होता है, तथापि अनुवाद-ग्रन्थों के सम्बन्ध में भी वह क्रम बहुत कुछ बरतने योग्य है।

किन-किन बातों में गद्य और पद्य का विभेद है—यह गम्भीर और वादास्पद विषय है। किन्तु शुद्ध साहित्य के पंडितों को यह तो अवश्य ही मान्य है कि छान्द-गुण के अतिरिक्त शेष प्रायः सभी साहित्यिक बातों में, उतना नहीं तो कुछ घटकर ही, गद्य और पद्य की समकक्षता होती है। इस बात को न मानने की भूल करनेवाले ही वे लेखक होते हैं, जिनके लेख निर्जीव, निस्तेज, नीरस, ऊबड़-खाबड़ अथवा उकठे-काठ की तरह होते हैं। सीधी-सादी भाषा के अँगरेज़ी वकीलों की उड़ती-पड़ती बातों पर लट्टू हुए अंगूर को खट्टा कहनेवाले लोग ही कह सकते हैं कि गद्य में अलंकार, नायिका-भेद, रस-विवेक आदि को स्थान नहीं है। नायिका-भेद के नये रोशनदान निन्दकों को यह भूल जाता है कि जैसे नायक और नायिका की स्थिति इस संसार में ईश्वरीय है, और कोई भी हवा, बिजली या पानी की देशी वा विलायती शक्ति उस लिंग-भेद को मिटाने में समर्थ नहीं हो सकती, उसी प्रकार नायक और नायिका-भेद भी प्राकृतिक है और उसका आधार वही मनोविज्ञान है, जिसपर आज के साहित्यसेवी मर और जी रहे हैं। दुर्भाग्य तो देसी होने का है!—नायिका-भेद कहने पर हँस देंगे; पर उसी का दूसरा नाम 'मनोवैज्ञानिक भाव एवं चरित्रविश्लेषण' ले लेने पर आकृति गम्भीर हो जायगी और कह उठेंगे—'तब तो ख़ूब चीज़ है'! यह दोष साहित्य का नहीं वरन् विलायती मनोवृत्ति का है, अथवा यों कहिये कि यह दोष सीधी-सादी शैली के समर्थन का नहीं, वरन् जो मुँह से कहते हैं, उसके वास्तविक अर्थ को न समझने का ही है। सिधाई और सादापन भाषा के सम्बन्ध में कहा जाता है, न कि उसके भाव के और न भाषा तथा भाव के परस्पर मेल-मिलाप के। यह दूसरी बात है कि जब कला को दूर कर दिया जायगा, तो कतिपय अलंकार काम में न आवेंगे; पर 'साइकालोजी' पर मरना जारी रखते हुए नायिका-भेद का मूल कैसे नष्ट किया जा सकेगा, और फिर जब तक सरसता पर लार टपकती रहेगी तब तक शब्दों की माधुरी से जान कैसे छूट सकती है?

इसके अतिरिक्त कठिनाई तो सबसे बढ़कर असलियत की है, जिसको बदल देना फ़ैशन और आदर्श के मान की बात ही नहीं है। टाई और बूट का फ़ैशन और हवा पर चलने का आदर्श न तो चमड़ा ही गोरा कर सकता और न बोली को गोली कर सकता है। आप साहित्यदर्पण, काव्यप्रभाकर, छन्दप्रभाकर, सबको गंगा में डुबा दीजिये; पर हिन्दी-भाषा के उस रूप और ढंग को क्या कीजियेगा, जो उसका सहज रूप है और जिसे आपने अपनी माता के दूध के साथ पीकर अपनी रग-रग में संचरित कर लिया है। उस अंगरेज़ी भाषा के लिये "मेटाफ़र" की क्लिष्टता का त्याग कर "सिमिली" की सिधाई और सादगी का स्वीकार संभव हो सकता है, जिसमें वे दोनों अस्वाभाविक हों; पर हिन्दी के लिये क्या हो सकता है, जहाँ "मेटाफ़र" ही सहज रूप है, और जहाँ अक्षर वा लेख का नाम तक न जाननेवाले उन बड़े-बड़े विद्वानों, योगियों और यतियों तथा महर्षियों तक को भी परास्त करनेवाले 'मन' (दिल) को 'रोक' कर 'काबू में कर लेते' हैं और जब ही चाहते हैं उसे 'जमाते', उखाड़ते या गिराया करते' हैं अथवा 'हेर-फेर' करके उसमें 'गाँठ डालते' और 'मोटा' करते और फिर यथेच्छ उसे 'भरते, जमाते, खट्टा करते' या 'पका' 'फाड़कर मार' ही डालते एवं अन्ततः उसे 'सुलगा' कर 'जला' भी डालते हैं।

अस्तु, ऐसी समालोचना का अभाव ही हिन्दी को 'अन्धेरपुर नगरी' का रूप देने का कारण हो रहा है। कौन नहीं जानता कि इस नगरी में आज दिन रेज़े मेमारों का, संगतराश रंगसाज़ों को तथा इंजीनियर गारा सानने का काम करते देख पड़ते हैं। अंगरेज़ी और फारसी के बल पर हिन्दी का पंच बन बैठना, हिन्दी-संस्था का संचालन कर सकने को हिन्दी-साहित्य के आचार्य की योग्यता मान और मनवा लेना, हिन्दी-साहित्य का ककहरा भी न जाननेवालों का उदीयमान कवि हो जाना, मूल पुस्तकों का नाम छिपाकर उसके अनुवाद में ही मौलिकता की कलँगी खोंस लेना, अन्य भाषाओं के उपन्यासों का घटनाचक्र चुराकर कहानियों और उपन्यासों का लेखक-शिरोमणि बन जाना, दूसरे से लिखवाकर स्वयं ग्रंथकार कहलाते फिरना आदि अन्धेर नहीं तो और क्या है? इसी अन्धेर के कारण हिन्दी-साहित्य का सम्मान और गौरव नहीं होता है और राजा तथा प्रजा दोनों उसकी अवहेलना करते हैं। अपने घर की खराबी अवश्य ही अपमान का कारण होती है। जब हम स्वयं ही शूद्र को ब्राह्मण और वैश्य को क्षत्रिय बनाकर वर्णविपर्यय कर रहे हैं, तो यदि परधर्मी द्वारा चाण्डाल हमारे सिर पर चढ़ा दिया जाय, तो आश्चर्य ही क्या!

सार्वजनिक दृष्टि से भी हिन्दी में उचित समालोचना के अभाव के कारणों का उल्लेख करना उपयुक्त है। कहना न होगा कि इस अभाव का प्रधान कारण हिन्दी-साहित्य-सेवियों में गम्भीर विद्वत्ता की कमी है और जिन लोगों में वह है भी, वे इतने निश्चिन्त नहीं हैं कि अपना समय लाभहीन काम में लगा सकें और ऊपर से लेखकों और प्रकाशकों की क्रोधाग्नि को भी प्रज्वलित करें। इनके अतिरिक्त एक सबसे बड़ा कारण वह है जिसका उल्लेख गत फरवरी के 'विशाल-भारत' में, इसके सुयोग्य संपादक चतुर्वेदीजी ने, मिस्टर सी० वाई० चिन्तामणि के सुपुत्र पं० बालकृष्ण जी की पुस्तक की आलोचना करते हुए, किया था। चतुर्वेदीज़ी के इन शब्दों का महत्व इस बात से और भी बढ़ जाता है कि उक्त पुस्तक की तीन कालमों की एक वृहत् समालोचना उनके मित्र उपर्युक्त मि० चिन्तामणि के पत्र 'लीडर' में भी छापी गई थी। वास्तव में सम्पूर्ण हिन्दी-संसार को इस सदुपदेश के लिये चतुर्वेदीजी का पचिर-ऋणी रहना होगा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वरन् हमारी राय में तो हिन्दी के लिये उसका महत्व मसीह-धर्म की ग्यारहवीं महाज्ञा के बराबर है !

साहित्यिक दलबंदी सचमुच जमीन के दलदल की अपेक्षा कहीं भयंकर होती है। इस दलदल से तो कहते हैं कि लोट-पोटकर जान बच जाती है, पर उस दलदल से तो प्रवास-चिन्तन और प्रवसन भी नहीं मुक्त कर सकता। चतुर्वेदीजी की 'सातवें आसमान' की बात को यदि 'खुद रा फज़ीहत दीगराँ नसीहत' देनेवाले हिन्दी के सम्पादकों ने न सुना तो अन्ततः वे अपने साथ हिन्दी-साहित्य को भी बंगाल की खाड़ी में डुबा देंगे !

खेद तो यह है कि कमियों और हानियों से कौन अवगत नहीं है; पर कौन ऐसा त्यागी है जो इस स्वार्थशाही के विरुद्ध संग्राम करने को कटिबद्ध हो जाय ? उन कमियों और हानियों के कारण हमारा उपहास भी होता है और हम उससे संतप्त भी होते हैं; पर हमारी दास-बुद्धि हमें विवश किये हुए है। स्वार्थ का परदा हमारी आँखों पर पड़ा है और लोभ हमारे अंतःकरण को कलुषित कर रहा है। हम सब कुछ देखते, समझते और सहते हुए भी निरुत्साह और निरुद्यम हो रहे हैं। यही हमारी दशा है।

स्याम

श्रीयुत रामनंदन शर्मा

आज-कल 'स्याम' देश की ऐतिहासिक राज्यक्रान्ति ने समस्त संसार का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर लिया है।

ऐसे प्रत्येक मनुष्य के लिये, जो भावुक और सौन्दर्योपासक हैं, 'स्याम' में आकर्षण है। वहाँ पर आप विचित्र शब्दों की समवेत ध्वनि—बौद्ध मंदिरों के घंटों की घनघनाहट, देश का राष्ट्रीय गान, बुलबुल का मधुर संगीत और वन-जन्तुओं का घोर चीत्कार—सुनेंगे।

देश का जलवायु मध्यम है। बंकक में, साधारणतः दिसम्बर के प्रारम्भ से, ठंढ पड़ने लगती है और फरवरी के अंत तक पड़ती है। उत्तरीय स्याम में बड़े दिनों के समीप कभी-कभी बहुत ठंढ भी हो जाती है। दक्षिणी स्याम में कभी-कभी दिसम्बर और जनवरी में भी ठंढ की पुट पड़ जाती है। परन्तु किसी-किसी वर्ष वहाँ प्रायः अत्यल्प ठंढ पड़ती है।

विदेशी यात्रियों को यहाँ आने के पहले एक प्रमाण-पत्र भरना पड़ता है। उनको पहले प्रवास-शुल्क देना पड़ता है। नहीं तो उन्हें लौट जाना पड़ता है।

यहाँ का प्रधान सिक्का 'टिकल' है, जो एक सौ 'सटाङ्ग' के बराबर होता है। एक आना (भारतीय सिक्का) साढ़े तीन 'सटांग' के बराबर होता है।

बानमाङ्ग से योरप और अन्य देशों के लिये 'इम्पीरियल एअरवेज़' (Imperial Airways) नामक हवाई डाक है। 'रायल स्यामीज़ स्टेटस् रेलवेज़' का अब 'फेडरेटेड मलाया स्टेटस् (बृटिश) रेलवेज़' और पूरब में 'फरासीसी रेलवेज़' के साथ मैत्रीपूर्ण संगठन है। वहाँ की रेलें सुसज्जित और नूतन हैं।

सन् १९११-१२ की मनुष्य-गणना के अनुसार सम्पूर्ण बौद्ध जन-संख्या ८२६६४०८ है। वहाँ ६९७२ मंदिर और १७३५६० पुजारी हैं। दक्षिणी स्याम में एक मंदिर और नगर नया बना है। मंदिर 'ब्रह्मथत' और नगर 'श्रीधर्म्म अशोक' के नाम से प्रसिद्ध है। ये दोनों भारत के प्रसिद्ध सम्राट अशोक की स्मृति में बने हैं।

किसीके यहाँ बुलाये जाने पर अधिक समय तक नहीं ठहरना चाहिये। यह अशिष्टता समझी जाती है। किसी स्यामी के घर भोजन के समय न जाना चाहिये। यदि आप अनजान में चले भी गये, तो आपको क्षमा माँगकर—यह कहकर कि 'हम फिर मिलेंगे'—बिदा लेनी चाहिये। यदि वह मनुष्य, जिसके यहाँ आप गये हैं, आपसे ठहरने के लिये प्रार्थना न करे, तो आपको ऐसा ही करना उचित है।

जब कोई अतिथि आवें, तो उन्हें सर्वदा आसन ग्रहण करने को आमंत्रित करना चाहिये। और, यदि अतिथि चीनी हों, और चाय भी तैयार हो, तो उन्हें पीने के लिये कहना चाहिये।

चीनियों में एक प्रथा है, जो स्यामियों में नहीं पाई जाती। जब आपको भेंट में कोई वस्तु मिले, तो दाता को धन्यवाद देना चाहिये। यदि वह वस्तु आपके उपयोग की न भी हो, तो भी आपको प्रसन्नता ही दिखानी चाहिये। जब तक अतिथि चले न जायँ, तब तक उस वस्तु को किसीको देने या वहाँ से हटाने के लिये आपको प्रतीक्षा करनी चाहिये। यदि उपहार में मिली वस्तु नारंगियों से भरी तश्तरी है, तो तश्तरी को लौटाते समय आपको यह कहकर कि 'यह आपके बच्चों के लिये है,' एक या दो नारंगियाँ तश्तरी में रखकर, लौटाना चाहिये। ऐसा व्यवहार शिष्ट समझा जाता है।

आप अतिथियों के बिदा होने के लिये उकता रहे हैं, ऐसा भाव किसी प्रकार कभी प्रकट न होना चाहिये। उनके व्यवसाय और स्वास्थ्य के विषय में, उनके सम्बन्धियों और मित्रों के विषय में, कुशल-प्रश्न पूछते हुए वार्तालाप प्रारंभ करना अधिक शिष्टतापूर्ण समझा जाता है।

जब राजकर्मचारी अपने नौकरों या छोटे पद के अफसरों के साथ आपके यहाँ आवें, तो आपको चाहिये कि सबसे ऊँचे अफसर को सबसे अच्छी कुर्सी पर और छोटे अफसर को उसके पीछे की कुर्सी पर बैठाकर बड़े अफसर का सम्मान करें। यदि अतिथि से केवल जान-पहचान है, तो साधारण रूप से उनके जाते समय खड़ा रहना उचित है। यदि वे घनिष्ट मित्र हैं, तो उन्हें और अधिक समय तक ठहरने के लिये आमं-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रित करना आवश्यक है। यदि उन्हें अवकाश नहीं है, तो वे लोग कोई बहाना करेंगे। तब आपको उन्हें रोकने का अधिक हठ न करना चाहिये।

यदि आप किसी स्यामी मित्र के साथ उसके या अपने घर पर हैं, या सड़क पर साथ-साथ घूम रहे हैं, तो सीटी न बजाइये। यह एक प्रथा है, जो वहाँ परम्परा से चली आती है।

यदि किसी सभा में कोई विशेष सम्मानित व्यक्ति आगन्तुक हो, तो उस सभा का कोई भी सामाजिक काम उस व्यक्ति के आने के पहले आरम्भ नहीं होता और उसके जाने के पहले सभा भंग भी नहीं होती।

किसी भी देहात के घर के सरहद में प्रवेश करने के पहले आपको घर के मालिक को पुकारकर उसे कुत्तों को दूर रखने के लिये कहना पड़ेगा। जब तक वे आपको भीतर प्रवेश करने के लिये आमंत्रित न करें, आपको प्रतीक्षा करनी चाहिये। यदि आपको ऊपर न बुलाया जाय, तो नीचे ही ठहरिये। किसी भी चीनी के घर की देहली पर खड़ा होना या पैर टेकना न चाहिये। या तो देहली को लाँघकर भीतर प्रवेश कर जाइये, और नहीं तो बाहर ही रहिये। घर में प्रवेश करने के पहले सदा अपने जूते की मिट्टी और कीचड़ को झाड़ लीजिये। यदि आपको वहाँ रात-भर न रहना हो, या आप विशेष रूप से आमंत्रित न किये गये हों, तो आपको किसी के घर में अधिक समय तक न ठहरना चाहिये। हाँ, आप उस घर या उसके समीपवर्ती वस्तुओं की आलोचना भी न कीजिये। किसी बालक की प्रशंसा या उसके पक्ष में आलोचना करना उसके लिये अशुभ माना जाता है! यदि आप वहाँ किसी बच्चे को गोद में लें, तो ऐसा कभी न कहें कि "कैसा भारी और मोटा-ताज़ा यह बालक है!" क्योंकि मुर्दा ही जीवित मनुष्य से भारी समझा जाता है। ऐसा भाव प्रकट करना वहाँ लड़के की मृत्यु का कारण समझा जाता है!

'कटरी' (पुजारियों के निवास-स्थान) में प्रवेश करते समय जूता उतारना आवश्यक नहीं है, केवल टोपी उतार लेनी चाहिये। 'जूता' पोशाक का एक आवश्यक अंग और आदरणीय समझा जाता है!

स्यामी समाज में उच्च पद और अधिक वय का पर्याप्त सम्मान होता है। वहाँ वयोवृद्धों के आगे होकर कभी न चलना चाहिये। वे इस बात को ताड़ जाते हैं, और आप उनकी दृष्टि में च्युत हो जाते हैं, चाहे आपने बिलकुल अज्ञानावस्था में ही ऐसा किया हो।

पैर चूमने की प्रथा का अर्थ वहाँ पूजा नहीं है, वरन् केवल सम्मान प्रकट करना है, जैसे पाश्चात्य देश के लोग टोपी उतारकर करते हैं। किसी व्यक्ति के लिये क्रोध महापाप और आत्मसंयम एक महान गुण समझा जाता है। किसी वस्तु की प्रशंसा करने का अर्थ वहाँ यह होता है कि आप उससे उस वस्तु को माँग रहे हैं। जब वहाँ आप किसी मनुष्य के सिर के ऊपर से कोई चीज ले रहे हों, तो आपको उससे क्षमा माँगनी चाहिये। रेलगाड़ियों में प्रायः इसकी आवश्यकता होती है। किसी मनुष्य के सिर के ऊपर, या उसके सिर को निर्देश करके, लक्ष्य न कीजिये या उस मनुष्य या वस्तु का नाम लेकर न पुकारिये; अशिष्टता है। पैर की ओर संकेत भी न कीजिये; यदि किसी कारण से पैर का प्रसंग आ ही जाय, तो अवश्य पहले क्षमा माँग लीजिये! शरीर के प्रायः सभी निचले अंगों पर यह बात लागू होती है। यदि शरीर के किसी क्षत अंग के विषय में कोई बात या संकेत करना चाहें, तो भी पहले क्षमा माँग लेनी चाहिये! यह बात विशेषतः तभी आवश्यक है, जब क्षत-स्थल पैर पर या किसी ऐसे स्थान पर हो, जो वस्त्र से ढँका हो और उसे हटाये बिना देखा न जा सकता हो।

स्याम की राजधानी बङ्काक में 'मेनाम'—नदी के पुल का उद्घाटन करते हुए चक्री-वंश के सातवें राजा 'महाराज प्रचातिनक' ने उन उत्सवों के प्रधान कार्यक्रम को, जो उनके वंश की १५०वीं वर्षगाँठ और बङ्काक के राजधानी होने के १५० वें वार्षिकोत्सव के उपलक्ष में मनाये गये थे, सम्पादित किया था। 'टाइम्स' के 'बङ्काक'-स्थित संवाददाता ने उस समय लिखा था—'इसके प्रत्यक्ष लक्षण दिखाई देते हैं कि यह महत्त्वपूर्ण घटना स्याम में एक ऐसे नये युग की स्थापना करेगी कि उस युग में स्याम अपने उन पाश्चात्य सलाहकारों की सहायता के बिना ही, जिन्होंने अब तक उसे आधुनिक राज्यों के समकक्ष बनाने के लिये उसकी देख-रेख की है, अपनी उन्नति को जारी रखने का प्रयत्न करेगा।'

इस राजवंश के लगभग पचहत्तरवें वर्ष के पूर्व, पाश्चात्य आदर्शों का समावेश नहीं हुआ था। यह स्मरण रखना चाहिये कि लगभग उसी समय में बर्मा अँगरेज़ों के अधिकार में आया। महाराज माङ्कूट के शासन-काल (१८५१–१८६८) में ही स्याम ने योरप की महान शक्तियों से संधि का सम्बन्ध जोड़ा। उन्होंने यह देखकर कि पश्चिम के लोगों के सहयोग एवं संसर्ग से देश के उद्योग-धन्धों को प्रोत्साहन मिलेगा, योरपीय व्यापारियों को उदार सुविधाएँ प्रदान कीं। परन्तु महाराज चुलालङ्करण (१८६८–१९१०) ने ही देश की सबसे बड़ी उन्नति की। उन्होंने नई शासन-प्रणाली की व्यवस्था और देख-रेख के लिये पश्चिम के लगभग सभी देशों से अनुभवी पुरुषों को बुलाया और इसके पूरक-स्वरूप स्याम के सैकड़ों नवयुवकों को योरप में शिक्षा प्राप्त करने के लिये भेजा। वह स्वयं अपने राज्यशासन को सुसंगठित करने एवं अपनी राजधानी को पाश्चात्य आदर्शों पर उन्नत बनाने के लिये तन-मन से लग गये। उन्हींके शासन-काल में 'बंकाक' वास्तव में एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र बना। सिंगापुर और समुद्रतट के अन्य प्रधान नगरों से सम्बन्ध जोड़ने के लिये नित्य दौड़नेवाले अग्निबोटों के विभागों की व्यवस्था की गई। उत्तर, दक्षिण और पूरब के प्रधान नगरों से बंकाक का सम्बन्ध जोड़ने के लिये रेलें बनाई गईं। नगर अपने पूर्ण प्राच्य वेश में परिवर्त्तन करने लगा। वे नहरें और पतली पगडंडियाँ, जो पुराने लोगों की आवागमन की आवश्यकताओं को अच्छी तरह पूरा करती थीं, अब अपर्याप्त समझी जाने लगीं। पक्की सड़कें बनाई गईं। उसके पश्चात् बिजली की ट्राम-गाड़ियों का विभाग भी खोला गया। नवीन आदर्शों में अपना विश्वास प्रकट करने के लिये राजा ने स्वयं एक महल इटालियन नव्य कला के ढंग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर बनवाया। कतिपय मंत्रियों और उच्च विभागों को, योरपीय आदर्श पर योरपीय शिल्पकारों द्वारा बनाई हुई इमारतों में, स्थान दिया।

भूतपूर्व महाराज छठें राम और वर्त्तमान महाराज—दोनों ने उन्नति की नीति को क्रमागत रक्खा है। विशेष महत्व के जो कार्य्य हुए हैं, वे यह हैं कि नगर के लिये 'वाटर सप्लाई' और 'पब्लिक हेल्थ' के विभाग बनाये गये हैं। आज 'बङ्काक' (Bangkok) भी पूरब के उन इने-गिने नगरों में से है, जहाँ डाक्टर लोग बिना हिचकिचाहट कल के जल को पीने का सर्टिफिकेट दे देंगे। स्वास्थ्य-विभाग की उन्नति ने हैजा और 'टाइफाइड'-(भयानक संक्रामक ज्वर)-जैसी खतरनाक बीमारियों को, जो पहले गरमियों में लोगों को नित्य घेरे रहती थीं, पूर्णरूप से निर्वासित कर दिया।

सार्वजनिक शिक्षा का कार्य्य भी दृढ़ता के साथ होता है। प्रतिवर्ष स्याम के युवक पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त करने के लिये योरप भेजे जाते हैं। केवल इङ्गलैंड में ही वे २०० की संख्या में हैं। इनमें से कुछ तो पन्द्रह बरस तक विदेश में ठहरते हैं। विश्वविद्यालय की भी स्थापना की गई है, जो यद्यपि संस्कृति की दृष्टि से अभी अपूर्ण है, तो भी सार्वजनिक सेवा के निमित्त डाक्टरों और इंजीनियरों की शिक्षा का अमूल्य कार्य्य कर रहा है। प्रारंभिक शिक्षा अनिवार्य कर दी गई है। माध्यमिक शिक्षा का व्यय भी इतना थोड़ा है कि अत्यन्त निर्धन लोगों को छोड़कर बाकी सब लोग पढ़ सकते हैं।

'बङ्काक' में अभी तक उन्नति का कार्य्यक्रम जारी ही है। सड़कें विस्तृत की गई हैं। वे आधुनिक व्यवसाय की आवश्यकताओं के उपयुक्त बनाई गई हैं। किन्तु चीनियों की छोटी-छोटी दूकानों का, जिनका एक भाग बहुधा भोजन-गृह और बैठक तथा रात में टैक्सी मोटरों के लिये अस्तबल के काम में लाया जाता है, अब भी बाहुल्य है। चीनियों, स्यामियों और भारतीयों की मिश्रित आबादी का एक बड़ा भाग अब भी आवश्यकताओं के पंजे में इस तरह फँसा है कि इनके पास न तो अवकाश और न धन की बचत ही है जो वे पश्चिम के आधुनिक नगरों और पूरब के सिंगापुर तथा सैगोन सरीखे नगरों की तरह स्वच्छ और भड़कीली सजावट की व्यवस्था करें। सिंगापुर और सैगोन नामक नगर योरप के धनिक समाजों की सृष्टि हैं। बङ्काक से इनकी तुलना करना असंगत है।

बङ्काक के कुछ भाग देखने में बहुत ही शानदार हैं। 'दि न्यू बोर्नियो कम्पनी' की इमारत, सैगोन की 'बैंक-डि-इण्डो-चाइन' (Banque de Indo-Chine) की नई इमारत की तुलना में, द्वितीय श्रेणी की है, और पूर्वीय जगत् की सर्वोत्तम इमारतों में गिनी जाती है। यह इमारत, 'मेसर्स डाइयेलम ऐण्ड कम्पनी' के आफिस की इमारत और अन्यान्य सरकारी इमारतों तथा कुछ पैगोडा-सरीखी चीनी इमारतों के साथ—जिनकी ऊँचाई ही उनको कला की वस्तु होने का महत्व प्रदान करती है—समीपवर्ती सड़कों के भद्देपन को दूर करने में बहुत कुछ सहायता देती है। 'मेसर्स डारमन लांग ऐण्ड कम्पनी' का बनाया हुआ नया पुल वर्तमान शासन-काल की एक उत्कृष्ट कृति है। मेनाम नदी के दक्षिण तट पर बसे हुए 'धनवरी' नगर की भी उन्नतावस्था है। पर वहाँ एक लाख से भी अधिक मनुष्य वर्त्तमान काल की उन्नति से वंचित रह गये हैं। वे आज भी उसी अवस्था में अपना जीवन-यापन कर रहे हैं, जिस प्रकार वे १५० वर्ष पहले कर रहे थे!

स्यामियों के हृदय में नवीन युग ने यह धारणा उत्पन्न कर दी है कि अब वह समय सन्निकट है, जब कि वे लोग बहुवेतनभोगी योरपीय राजनीतिज्ञों और कलाविदों के बिना ही शासन और सार्वजनिक सेवाओं के सूत्र को अपने हाथ में ले सकेंगे।

गत कुछ महीनों में योरपीय पदाधिकारियों की जगह पर स्यामी पदाधिकारियों की नियुक्ति हुई है। इस नीति का मूल इस भावना में है कि पाश्चात्य-शिक्षा-प्राप्त स्यामियों द्वारा ही इस समय देश की प्रगति को प्रभावशाली बनाया जा सकता है। यदि यह बात सत्य साबित हो जाय, और यह बहुत ही सम्भव प्रतीत होता है, तो चक्री-वंश के राजाओं के शुभ कार्यों के लिये यह एक पवित्र श्रद्धाञ्जलि होगी।

कौन कह सकता है कि वर्त्तमान राज्यक्रान्ति में पदच्युत पाश्चात्य अधिकारियों के असन्तोष की चिनगारी नहीं है? और, यह भी कोई नहीं कह सकता कि वहाँ की राज्यक्रान्ति के रक्तपातशून्य और अहिंसात्मक रूप में वर्त्तमान भारतीय धर्मयुद्ध का प्रतिबिम्ब नहीं है।

देवदासी

श्रीमद्भागवतप्रसाद वर्मा

अस्तोन्मुख अंशुमाली की अन्तिम किरणें, साबरमती के प्रशान्त प्रवाह पर, प्रतिदिन की भाँति नृत्य करती हुईं, नम्र नील नभोमण्डल में विलीन हो गईं। पक्षियों ने एक स्वर से साम-कल्याण गाया, और 'पंखों की चादर ताने' सो रहे। छोटी-बड़ी—सभी तारिकाओं ने अपने-अपने आकाशदीप जलाये। पूनो का चाँद खिल-खिलाकर हँस पड़ा।

भगवान महाबलेश्वर के मंगलमय मन्दिर में सैकड़ों नर-नारी शांत चित्त से स्थिर खड़े थे। साधारण आगन्तुकों की भाँति ध्यानस्थ राजकुमार भी एक ओर खड़ा था। उसकी आँखें बन्द थीं।

सन्ध्या-कालीन आरती आरम्भ हुई। घण्टे-घड़ियाल और शङ्ख-मृदंग की ध्वनि से देवालय प्रतिध्वनित हो उठा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहसा आगन्तुकों की आँखें बन्द हो गईं। मानों वे इस यातनामय संसार से ऊपर, किसी अज्ञात देश में, उड़े जा रहे हों! एक कोने में, दीवार के सहारे, बायीं हथेली पर माथा टेके हुए, एक युवती सुन्दरी भी खड़ी थी—चिंतित भाव से।

आरती देर तक होती रही और देर तक नाचता रहा—लुक-छिपकर सुन्दरी के गुलाबी गालों पर आरती का सुनहला प्रकाश।

आरती समाप्त हुई। एक-एक करके सबने अपने-अपने घर की राह ली। सहसा राजकुमार की चकित आँखें सुन्दरी पर और सुन्दरी की अनाड़ी आँखें राजकुमार पर पड़ीं। दोनों ने आँखें नीची कर लीं—कुछ लज्जा और अधिकतर भावावेश के कारण। दोनों ही के गालों पर लाली दौड़ गई—एक-सी ही और एक ही साथ।

देवालय से निकलते-निकलते राजकुमार ने एक ठण्ढी-सी साँस ली।

× × × ×

उसी रात, जब बागीश्वरी का समय हो रहा था—

वीणा सँभालकर सुन्दरी गाने बैठी; किन्तु हृदय की जगी हुई हलचल ने उसे अन्यमनस्क कर दिया। वहाँ उससे न रहा गया। पूनो की कौमुदी बरबस उसे निकुञ्ज की ओर खींच ले गई।

सुन्दरी मूर्तिवत् खड़ी-खड़ी कुछ सोच रही थी—क्या सोच रही थी, आज तक कोई भी बता न सका।

हाँ, तो वह खड़ी-खड़ी सोच रही थी। पल्लवों की ओट से हँसती हुई जुही के सौरभ से छका हुआ मन्द-समीर उसके अमल-धवल अंचल से खेल रहा था। उसकी निर्निमेष दृष्टि शुभ्र चाँदनी से धुले हुए एक गुलाब के फूल में अँटकी हुई थी।

बहुत देर के बाद—किन्तु, धीरे-धीरे—उसके हृद्‌गत भावों में लड़खड़ाती हुई उसकी भोली कल्पना ने स्वप्न का रूप धारण किया—

"गुलाब के फूल ने फैलते-फैलते एक मनोरम पुष्पोद्यान का रूप ग्रहण किया। आकाश से कई किन्नरियाँ—ऋषिकन्या शकुन्तला की भाँति वन्य कुसुमों से विभूषित—उस उद्यान में उतरीं। वे तालियाँ बजा-बजाकर गाने लगीं—चलु सखि कोमल कुसुमित कुञ्जे।"

"सहसा सभी किन्नरियाँ खिलखिलाकर हँस पड़ीं। उद्यान के एक ओर से कुछ गन्धर्व-कुमार फट पड़े। प्रत्येक किन्नरी, एक-एक गन्धर्व-कुमार के साथ, हाथ में हाथ मिलाकर, नाचने लगी। फिर प्रगाढ़ आलिंगन और स्फीत चुम्बन—"

इसी अवसर पर कुछ शब्द हुआ। पंख फड़फड़ाता हुआ पपीहा पुकार उठा—'पी कहाँ'!

सुन्दरी का ध्यान टूट गया। स्वप्न का वह छाया-चित्र सहसा आँखों से ओझल हो गया। उसने अपने को राजकुमार के बाहु-पाश में आबद्ध पाया। देखा, राजकुमार के होंठ उसके फड़कते हुए होंठों तक क़रीब-क़रीब पहुँच चुके हैं!

स्वप्न के इस प्रतिफल—इस वास्तविक रूप—को देखते ही उसके अंग-प्रत्यंग में प्रकम्पन उत्पन्न हो गया। सेंध पर पकड़े गये चोर की तरह वह सन्न हो गई। बड़ी चेष्टा से—चेतना पर भार देकर—वह अलग खड़ी हो गई।

राजकुमार लुटा-सा दो-तीन क़दम आगे बढ़ा, और फिर रुक गया, जैसे वह बिखरी हुई शक्तियों को केन्द्रीभूत कर रहा हो।

थोड़ी देर के बाद वह आगे बढ़ा। सुन्दरी के कन्धों पर अपने दोनों हाथों को रखते हुए बोला—"सुन्दरी! मैं तुझे प्यार करता हूँ—प्राणों से भी बढ़कर—प्रिये!"

सुन्दरी का हृदय पुलकित हो उठा। उसके जी में आया कि वह उसी स्वर में पूछे—"क्या मेरी ही तरह प्रियतम?"

किन्तु उसका गला रुँध गया। हृदय से निकली हुई अव्यक्त ध्वनि अवरुद्ध कण्ठ-द्वार से टकराकर लौट गई। उसके अंग-प्रत्यंग फर-फर उड़ रहे थे—वह लता की तरह काँप रही थी। उसने अपने को सँभालते-सँभालते कहा—"छोड़ दो राजकुमार, मुझे छोड़ दो। मेरी सृष्टि इस संसार के लिये नहीं हुई है। मैं तो देव......देवदासी हूँ राजकुमार!

राजकुमार के हाथ, सुन्दरी के कन्धों से, आप-ही-आप गिर गये। सुन्दरी देवालय की ओर बढ़ी—रुकते हुए, सिसकते हुए!

जिस तिनके के सहारे राजकुमार प्रेम की लहरों में—तूफ़ानों की चोट खाते हुए—बह रहा था, वह तिनका भी आज उसके निबल हाथों से छूट रहा था। उसने कातर स्वर में कहा—"तो यह प्रथम मिलन ही मेरा अन्तिम मिलन है सुन्दरी!"

सुन्दरी भीत मृगी-सी काँपकर खड़ी हो गई। अन्तिम वाक्य की लड़खड़ाती हुई ध्वनि—वायु-प्रवाह में डूबता हुआ अस्फुट स्वर—'मंजरी' के कानों में गूँज गया—'अन्तिम मिलन है!'

आँसुओं के अन्तराल से 'मंजरी' ने राजकुमार की ओर देखा। उसे जान पड़ा, मानों राजकुमार के होठों में—उसकी आँखों में, उसके शरीर के रोम-रोम में, जैसे लिख गया हो—"अन्तिम मिलन है!"

माया की तरह इस वाक्य ने सुन्दरी को फाँस दिया। उसकी दृष्टि में जैसे लिख गया हो—'अन्तिम मिलन है!' शून्य में—पूनो के चाँद में, वायु में, वनस्पति के पत्ते-पत्ते में, प्रस्फुटित पुष्पों के प्रत्येक दल में, तृण-तृण में, अणु में—परमाणु में, जैसे किसीने लिख दिया हो—'अन्तिम मिलन है!'

सुन्दरी मन्दिर की ओर मुड़ी। वाक्य की ध्वनि आगे-आगे चली 'आह' बनकर; उसके एक-एक अक्षर पीछे-पीछे चले 'शाप' बनकर!

पीछे की ओर से एक भीमकाय पुरुष निकला और अशोक-वृक्षों के सघन अन्धकार में विलीन हो गया।

× × × ×

उसी रात, जब परज का समय हो रहा था—

श्रान्त स्वर्ण-दीपिकाओं की ज्योति से भगवान महाबलेश्वर की पाषाण-प्रतिमा प्रदीप्त तो थी; किन्तु वैसा प्रकाश न था। वीणा के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहारे सुन्दरी परज गा रही थी। गान का लक्ष्य था—"एक अज्ञात देश—अन्तरिक्ष के उस पार—जहाँ चिर-वसन्त का साम्राज्य है—जहाँ मिलन-ही-मिलन है, वियोग कोई जानता ही नहीं, सभी अनन्त आनन्द में आबद्ध—जहाँ अप्सराएँ गाती हैं, कलियाँ ताल देती हैं—जहाँ की सभी वस्तुएँ, अणु-परमाणु तक, नित्य हैं; अनित्य कोई भी नहीं।"

वह इतनी तन्मयता के साथ—इतनी श्रद्धा और प्रेम के साथ—गा रही थी कि अपनी सुध-बुध तक भूल गई—भूल गई कि गज-भर की दूरी पर ही क्रोधावेश में खड़ा है गेरुआ-वस्त्रधारी एक भीमकाय पुरुष!

गाना समाप्त हुआ। वीणा की शेष मूर्च्छना विशाल देवालय के सीमित वायुमण्डल में लहराने लगी। दीर्घाकृति पुरुष ने कुछ कर्कश स्वर में कहा—बेटी, प्रभु की सेवा करने की यह प्रणाली तो दूषित है। इस प्रकार की अधूरी पूजा तो स्वीकृत नहीं हो सकती।

सुन्दरी ने रुकते-रुकते पूछा—"प्रभु की सेवा में कौन-सी त्रुटि हुई है आचार्य?"

आजानुभुज पुजारी ने तर्जनी दिखलाते हुए कहा—विशुद्ध रूप से, आत्मा और शरीर दोनों से, प्रभु की सेवा करना तेरा कर्त्तव्य है, बेटी! केवल शरीर से ही प्रभु को तू सन्तुष्ट नहीं कर सकती। शरीर के साथ मन और आत्मा का योग भी अनिवार्य था; किन्तु अब तेरा आत्मसमर्पण व्यर्थ है, निष्फल है, तुच्छ है।"

सुन्दरी पीपल के पत्ते की तरह काँप गई। आँसुओं में तिरती हुई आँखों के सामने अन्धकार छा गया। बिखरती हुई आशाओं से उसकी दुर्बल चेतना ठोकरें खाने लगी। होश आने पर उसने बोलने की चेष्टा की—"इसका तात्पर्य गुरुवर? व्यर्थ है···निष्फल है···तुच्छ है—क्यों? क्यों?? क्यों??"

× × × ×

उसी रात, जब आसावरी का समय आया—

सुन्दरी ने झंकृत वीणा की ध्वनि में अपनी कोकिल-काकली को एकीभूत करने की पूरी चेष्टा की; किन्तु वह अन्त तक असफल रही। श्वास फूल गया। हृदय वेग से धड़कने लगा। अंग ढीले पड़ने लगे। शिशु की तरह गले से लिपटी हुई वीणा खिसक कर गोद में आ गई। उसे उठाकर उसने रक्खा भी नहीं—छुआ भी नहीं—देखा भी नहीं।

वह सजल नेत्रों से प्रतिमा की ओर, जी भरकर, देर तक देखती रही। फिर उसने समीप जाकर अञ्जलिबद्ध हो विनीत भाव से प्रार्थना की और पूछा—"बोलो भगवन्! एक बार मानव-कण्ठ से बोलो—"क्या—क्या मेरी सेवा से तुम सचमुच अप्रसन्न हो? आत्मसमर्पण क्यों निष्फल हुआ नाथ? बोलो, एक बार भी तो बोलो!! मेरे हृदय में हलचल-सी मची हुई है! निराशा की वेदना प्राणों में प्रविष्ट होकर प्रलय की सृष्टि कर रही है! प्रभो!!"

उसकी करुण पुकार से देवालय का हृदय भी जैसे द्रवीभूत हो उठा; निष्प्रभ दीपशिखाएँ हिल-डोलकर बुझ गईं! और, सुन्दरी? सुन्दरी तो प्रतिमा के चरणों में पड़ गई—मुर्झाते हुए फूल की तरह!!

× × × ×

उसी रात का शेष, जब मलय-पवन मन्दिर की ध्वजा के साथ खेल रहा था और उषा यह देख-देखकर हँस रही थी——

देवालय का द्वार खुला। पुजारी ने प्रवेश किया और पुकारा—'बेटी! अरे!!'

चिल्लाने की चेष्टा की; परन्तु कण्ठ न खुला, जिह्वा तालु में सट गई। देखा—भगवान की प्रतिमा बीच से फटकर दो खण्ड हो गई है और सोने की पुतली सुन्दरी 'अपनी मिट्टी की पुतली' को प्रतिमा के चरणों में छोड़ गई है!! *

* अँगरेज़ी से।

——स्वामी दयानन्द सरस्वती के शिष्य श्रीमान् शाहपुराधीश, सर नाहरसिंहजी बहादुर गत २४ जून को स्वर्गवासी हो गये। आपने श्रीमद्दयानंद-जन्म-शताब्दी के अवसर पर अपने वक्तव्य में ऋषि-दयानन्द की जीवनी-सम्बन्धी कई विचित्र बातें बताई थीं, तथा अपनी वह शुद्ध खद्दर की पोशाक दिखाई थी, जिसे पचास-साठ वर्ष पूर्व ऋषि ने आपके लिये तैयार कराया था। आपने काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा को भी प्रति वर्ष एक पुस्तक प्रकाशित करने के लिये एक अच्छी रक़म दी थी, जिससे 'सूर्य-कुमारी-पुस्तकमाला' निकलती है; आप 'सभा' के संरक्षक भी थे।——हिन्दी-रंगमंच-संघ (कलकत्ता) में सर्वप्रथम अभिनीत होनेवाले 'कन्या-दान' नामक नाटक का अभ्यास (रिहर्सल) नियमित रूप से किया जा रहा है और प्रयत्न किया जा रहा है कि महामना मालवीयजी महाराज के कर-कमलों से इस आरम्भिक अभिनय का उद्घाटन कराया जाय।

——जमशेदपुर (ज़िला सिंहभूमि, बिहार) के अग्रवाल-भ्रातृ-मण्डल ने हिन्दी के सुलेखकों, विशेषकर छात्रों और अध्यापकों, से अनुरोध किया है कि वे ३१ जुलाई तक अपनी-अपनी सर्वोत्तम रचनाएँ भेज दें; सर्वोत्तम रचना पर पुरस्कार दिया जायगा।——लाहौर की नवजात एलिफैण्टा-फ़िल्म-कम्पनी की सबसे पहली 'बोलती फ़िल्म' (अपरिचिता नर्त्तकी) के लिये हिन्दी के प्रसिद्ध कहानी-लेखक श्रीसुदर्शनजी ने संवाद और गाने लिखे हैं।——हिन्दी के राष्ट्रीय कवि पं० माधव शुक्ल द्वारा संस्थापित हिन्दी-नाट्य-परिषद् (कलकत्ता) के संयुक्त मंत्री श्रीकान्त ठाकुर ने नवीन उत्साह के साथ परिषद् का कार्य पुनः संचालित करने के लिये सब शुभचिन्तकों से अपील की है; क्योंकि परिषद् के प्रमुख कार्यकर्त्ताओं के जेल चले जाने से उसका कार्य स्थगित हो गया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता और विज्ञान

श्रीयुत "प्रियहंस"

लेहण्ट ने एक वाक्य लिखा है, जिसका अभिप्राय है कि कविता वहाँ से आरम्भ होती है, जहाँ विज्ञान का अवसान होता है—जहाँ पहुँचकर विज्ञान 'सत्य' के अधिक स्पष्टीकरण में असमर्थ हो जाता है। उसके अनुसार कविता का भाव-जगत् से सम्पर्क रहता है और उसमें ऐसी शक्ति होती है, जिसके द्वारा वह एक कल्पना-प्रसूत आनन्द की सृष्टि कर सकती है।

इस उपर्युक्त स्थापना का स्पष्टीकरण, उदाहरण द्वारा, अधिक सरलता से किया जा सकता है।

हम सैर के लिये निकले हैं। कई पार्कों और उद्यानों में से गुज़रकर एक सरसी के निकट जा पहुँचे हैं। पास ही एक आदमी खुर्पी लिये खड़ा है। सरसी में अनेक सुन्दर-सुन्दर फूल खिले हैं, जिनका नाम हमें मालूम नहीं। इसीलिये हमने उस खुर्पीवाले आदमी को बाग़वान समझकर प्रश्न किया—यह कौन-सा फूल है?

जवाब में उसने बतलाया—इसे कमल कहते हैं।

फिर बाद को इसी कमल के विषय में एक वनस्पति-विज्ञान के ज्ञाता से पूछा। उसने इसको "हैवसेंड्रिया मोनोगाइना" नामक पुष्प-श्रेणी में परिगणित कर दिया। कमल का यह वैज्ञानिक स्पष्टीकरण हो गया।

इसके पश्चात् एक सौन्दर्य-शास्त्र के ज्ञाता ने उसे "फूलों का राजा" कहकर संबोधित किया। इस कथन से हमें कमल की सर्वोत्कृष्ट शोभा का बोध होता है, और यहीं से हमारे काव्य की भूमिका बँधती है।

एक दिन एक कवि की रचना हमने पढ़ी। उसने लिखा था—"वह कमल नहीं, उसकी प्रेमिका का मुख है।" यहीं से हमें उस कमल के आकर्षण और उसके विशाल तथा सौन्दर्यमय रहस्य का अनुभव उपलब्ध होता है

अब हम क्रमशः 'कमल' विषयक स्पष्टीकरणों पर विचार करते हैं। सबसे प्रथम हमें "फूल" के विषय में चाक्षुष् ज्ञान उपलब्ध हुआ। तत्पश्चात् माली ने उस फूल का नामकरण कर दिया, जिसके द्वारा उसे "कमल" कहकर हम उसकी आकृति, रूप-रंग आदि का एक शब्द में समीकरण कर सके। फिर वनस्पति-विज्ञान के ज्ञाता ने उस "कमल" से एक ऐसी श्रेणी का हमें परिचय दिया, जिसमें इस कमल से मिलते-जुलते तथा कुछ-कुछ इससे भिन्न थोड़े-से और फूल भी परिगणित हैं। विज्ञानवेत्ता से इतना हमें और भी पता चल सकता है कि कमल की डंठी, उसकी पँखड़ियाँ और केसर आदि की रचना अन्दर से किस प्रकार की होती है। उसकी सहायता से, वैज्ञानिक यंत्रों के द्वारा छेदन करके, हम कमल का रचना-सम्बन्धी सूक्ष्म ज्ञान भी प्राप्त कर सकते हैं।

परंतु, इतना सब होने पर भी, उस माली का बतलाया हुआ या वैज्ञानिक द्वारा निर्दिष्ट किया गया कमल हमारा वह "कमल" नहीं है, जिसकी शोभा हमारी आँखों में बसी है, जिसके प्रति हमारा मन आकृष्ट हुआ है और जिसे हम प्यार करने लगे हैं। वैज्ञानिक के कमल-सम्बन्धी सूक्ष्म-से-सूक्ष्म विश्लेषण से भी हमें वह आनन्द नहीं प्राप्त हो सकता, जो हम उसकी सादगी, सौन्दर्य, माधुर्य और आकर्षण द्वारा उपलब्ध करते हैं।

इस प्रकार के सौन्दर्य के आस्वादन के लिये, अथवा कमल-शोभा-जन्य आनन्द की प्राप्ति के लिये, हमें कवि की शरण लेनी पड़ती है। वह अपनी प्रतिभा के बल पर, कल्पनामय नवीन ढंग से, कमल के दर्शन करता है, और तब जाकर अपने शब्दों द्वारा उस आनन्द की सृष्टि कर सकता है, जिसके हम अभिलाषी हैं। उसके अन्दर ऐसा दृढ़ विश्वास, सत्य भावना तथा स्फूर्तिमयी शक्ति है, जिनके बल पर वह अपनी आनन्दमयी अनुभूतियों का इतना सजीव चित्रण कर सकता है कि हमारे अन्दर ठीक वैसी ही अनुभूति का उन्मेष हो जाता है।

इसी प्रसंग के लिये 'मेथ्यू आरनाल्ड' ने संभवतः इस आशय के वाक्य लिखे हैं कि—"कविता एक महाशक्ति है, जो वस्तुओं के साथ सम्पर्क रखते हुए उनकी सम्पूर्ण नवीन और आन्तरिक भावना को हमारे अन्दर प्रबुद्ध कर देती है, तथा हमारे और उन वस्तुओं के बीच में रहनेवाले सम्बन्धों को उद्भासित कर देती है।"

आरनाल्ड का कहना है कि—"यह भावना भ्रमात्मक है या भ्रमात्मक सिद्ध नहीं भी हो सकती है, इन बातों का मैं अन्वेषण करना नहीं चाहता—न इस विषय में कुछ कहना चाहता हूँ कि इस भावना से हम 'वस्तु' के यथार्थ स्वरूप तक पहुँच पाते हैं या नहीं। मेरा वक्तव्य इतना ही है कि कविता हमारे अन्दर इस भावना को उद्बुद्ध कर देती है और यह उद्बोधन एक महाशक्ति का कार्य है। विज्ञान के स्पष्टीकरण से हमें वस्तुओं की उस आन्तरिक भावना की उपलब्धि नहीं होती, जो कविता के स्पष्टीकरण से होती है। आज लिनियस या कैवेण्डिश हमें जल, वनस्पति और प्राणिजगत् के उस अन्तर्निगूढ़ रहस्य की प्राप्ति नहीं करा सकते, जो हमें शेक्सपियर या वर्ड्सवर्थ करा सकते हैं।

इस प्रकार हमारे सम्मुख अब यह स्पष्ट हो गया कि विज्ञान की समाप्ति पर कविता का प्रारम्भ किस प्रकार माना जा सकता है—कविता और विज्ञान में क्या अन्तर है—या एक ही वस्तु के सम्बन्ध में वैज्ञानिक सत्य और काव्यजनित स्पष्टीकरण में क्या भेद है—और विज्ञान की अपेक्षा कविता का उत्कर्ष क्यों है।

मुद्रक—बजरंगबली गुप्त 'विशारद', श्रीसीताराम प्रेस, काशी। प्रकाशक—पं० प्रमोदशंकर व्यास, पुस्तक-मन्दिर, काशी।

In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सहेली'

बालक-बालिकाओं और गृह-रमणियों के लिए परम सुन्दर उपहार, शिक्षा की अपूर्व सामग्री और मनोरंजन का सर्वोत्तम साधन

अभी लोग विशेषांक से भी ग्राहक बन सकते हैं

'सहेली' के विशेषाङ्क पर सम्मतियाँ

श्रीवेंकटेश्वर-समाचार —

रंग रूप जो 'सहेली' ने पाया वह किसी दूसरी मासिक-पत्रिका के हिस्से में नहीं आया। हर बात में इसकी निराली बात है। आकार, टाइटिल, कागज, छपाई, ब्लाक, कहानी, कविता, लेख, सभी नई शान के साथ 'सहेली' की शोभा बढ़ाने को तैयार रहते हैं। 'सहेली' में कहानियाँ सदैव सचित्र रहती हैं। फिर यह तो विशेषाङ्क है। प्रत्येक लेख सचित्र है, प्रत्येक लेख सुन्दर है, प्रत्येक सुपाठ्य है और हृदयहारी है। कहानियाँ और कवितायें भी एक-से-एक बढ़-चढ़ कर हैं। विशेषाङ्क की जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। सम्पादन और सञ्चालन के लिए जितनी बधाई दी जाय, अपर्याप्त है। भरतमिलाप और बुद्धदेव का मोहत्याग—ये दोनों बहुरङ्ग वाले चित्र भी बड़े भावपूर्ण और मनोहर हैं।

विशाल-भारत—

'सहेली' विशेषकर महिलाओं का पत्र है, इसलिए उसमें अच्छे स्त्री-उपयोगी लेखों का बाहुल्य होना स्वाभाविक ही है। यह देखकर और भी प्रसन्नता है कि उसके लेखकों में महिलाओं की संख्या कम नहीं। प्रस्तुत विशेषाङ्क में सुन्दर, मनोरंजक तथा उपादेय सामग्री संग्रहीत की गई है। इसके लिए हम हार्दिक बधाई देते हैं।

इस विशेषाङ्क में अनेक सादे चित्रों के अतिरिक्त दो सुन्दर भावपूर्ण रंगीन चित्र भी हैं। छपाई-सफाई के लिए इस कथन में कोई अत्युक्ति नहीं है कि हिन्दी के बहुत कम पत्रों की छपाई-सफाई इतनी बढ़िया होती होगी जितनी 'सहेली' की है।

एजेण्टों को अच्छा कमीशन दिया जाता है। पत्र-व्यवहार करें। 'सहेली' के ग्राहक बनानेवाले पच्चीस फ़ी सदी कमीशन पाते हैं अर्थात् प्रत्येक ग्राहक से चार रुपए लेकर वे तीन रुपए यहाँ भेज सकते हैं और एक रुपया स्वयं ले सकते हैं।

वार्षिक चन्दा—४), छमाही चंदा २॥), नमूने की प्रति ।=)

ग्राहक बनने के लिए आज ही पत्र लिखिए।

हम हर प्रकार का काम—चाहे वह बड़ा ही कठिन हो अथवा बहुत सावधानी से छापा जाने वाला हो—बहुत ही सुन्दर छापते हैं। एक बार अपना कोई बढ़िया काम हमसे छपाकर परीक्षा कीजिए, सब प्रकार से आप सन्तुष्ट होंगे।

काम भेजकर तखमीना (इस्टीमेट) मुफ्त मँगाइए

व्यवस्थापक—'सहेली' कार्यालय, ५ प्रयाग स्ट्रीट, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोलती हुई भाषा और फड़कते हुए भावों का सबसे सस्ता सचित्र मासिक-पत्र

'युगान्तर'

दुर्भाग्य से हिन्दू-समाज में एक महाव्याधि घुस गई है। इस महाव्याधि का नाम है जात-पाँत अर्थात् जन्म के कारण किसी को ऊँचा और किसी को नीचा या अछूत मानना। हिन्दू-समाज की इसी महाव्याधि—जात-पाँत—का नाश करके उनमें समता और बन्धुभाव का प्रचार करने के लिये ही

युगान्तर

का जन्म हुआ है। यह ब्राह्मण और बनिए के जन्म-मूलक भेद को मिटाकर उन्हें रोटी-बेटी के प्रेम-सूत्र में बाँधकर सुसंगठित और शक्तिशाली बनाना चाहता है, क्योंकि जब तक जात-पाँत की बीमारी है तबतक शुद्धि, अछूतोद्धार, हिन्दूसंगठन और स्वराज्यप्राप्ति की चेष्टायें विफल हैं।

युगान्तर

का प्रत्येक लेख, प्रत्येक टिप्पणी, प्रत्येक कहानी नवयुवकों और नवयुवतियों में नई जान डालने वाली और उन्हें कर्त्तव्य-मार्ग दिखानेवाली होती है।

स्त्रियों के लिये

ख़ास तौर पर उत्तमोत्तम लेख रहते हैं।

आज ही

२) मनीआर्डर द्वारा भेजकर वार्षिक ग्राहक बनिये।

वार्षिक मूल्य—दो रुपये
नमूने का अंक—तीन आने

मैनेजर,
युगान्तर, लाहौर

आचार्य श्रीमहावीरप्रसादजी द्विवेदी
उपन्यास-सम्राट् श्रीयुत प्रेमचन्दजी बी० ए०
प्रोफ़ेसर महेशप्रसादजी मौलवी आलिम फ़ाज़िल
डाक्टर मंगलदेवजी शास्त्री, एम० ए०
श्री गंगाप्रसादजी चीफ़-जज
श्री स्वामी सत्यानन्दजी महाराज
राज्यरत्न श्रीआत्मारामजी
त्यागमूर्ति भाई परमानन्दजी
श्री नारायणस्वामीजी महाराज
आचार्य श्रीदेवराजजी
डाक्टर लक्ष्मणस्वरूपजी एम० ए०, डी० फ़िल०
आदि
सभी महानुभावों ने दिल खोलकर पसन्द किया है।

—चाँद—
—हंस—
—सहेली—
—ट्रीब्यून—
—रंगभूमि—
—आर्य्यमित्र—
—बालसखा—
—पतितबन्धु—
आदि
प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं की दृष्टि में तो यह एकदम 'क्रान्तिकारी पत्र' है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा-महाराजाओं के महलों से लेकर गरीबों की झोपड़ियों तक जानेवाली
एकमात्र सचित्र मासिक-पत्रिका

कविवर अयोध्यासिंहजी उपाध्याय
'वीणा' समय पर निकलती और पठनीय एवं गवेषणा-पूर्ण लेखों से सुशोभित रहती है।

साहित्याचार्य रायबहादुर जगन्नाथप्रसाद 'भानु'
'वीणा' में प्रायः सभी लेखों, कविताओं और कहानियों का चयन अच्छा होता है। सम्पादन कुशलता के साथ होता है।

वीणा

सम्पादक
श्रीकालिकाप्रसाद दीक्षित
'कुसुमाकर'
वार्षिक मूल्य ४) एक प्रति ।=)

साहित्याचार्य स्व० पद्मसिंहजी शर्मा
'वीणा' के प्रायः सब अंक पठनीय निकलते हैं।
सम्पादन बहुत अच्छा हो रहा है।

पं० कृष्णविहारीजी मिश्र
बी० ए० एल्-एल्० बी
भू० पू० सम्पादक 'माधुरी'
'वीणा' का सम्पादन अच्छा होता है। इसमें साहित्यिक सुरुचि का अच्छा खयाल रखा जाता है।

प्रकाशक — मध्य-भारत-हिंदी-साहित्य-समिति

मिलने का पता — मैनेजर, 'वीणा', इन्दौर, INDORE, C. I.

110530

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन पुस्तकों के पृष्ठ-चित्र
और
मूल्य आदि का दूसरों
से
मिलान करने से आप
देखेंगे कि

सस्तेपन की हद है !

मुफ़्त ग्राहक बनें !

हिंदी की सबसे सस्ती और
सबसे सुंदर मासिक पत्रिका

पृ. १४४, ५-६ रंगीन, अनेक सादे चित्र	**सुधा**	वार्षिक ५) छमाही ३) नमूना ।।)

की
सफलता और तुलसी-जयंती के
उपलक्ष में
केवल पाँच सौ ग्राहक
मुफ़्त बनाए जाएँगे

जो सज्जन ६) रु० की माला की पुस्तकें खरीदेंगे, वे छः मास और जो १०) रु० की पुस्तकें मँगाएँगे, वे एक वर्ष के लिये मुफ़्त ग्राहक बनाए जाएँगे। पर कुछ कमीशन नहीं मिलेगा और डाक-व्यय ग्राहक के जिम्मे रहेगा।

पुस्तकें इस सूची में से भी छाँटी जा सकती हैं। अन्य पुस्तकों के लिये बड़ी सूची मँगाइये।

गंगा-पुस्तकमाला का महिलोपयोगी सस्ता साहित्य

पुस्तक — लेखक	पृष्ठ	रंगीन चित्र	सादे	मूल्य
पत्रांजलि—अनुवादक, पं० कात्यायनीदत्त त्रिवेदी	८०	१	०	।-), ।≡)
भारत की विदुषी नारियाँ—संपादिका, श्रीमती कृष्णकुमारी	९६+४	१	०	।=), ।।)
नारी-उपदेश—स्व० गिरिजाकुमार घोष	९२	१	०	।=), ।।)
कमला-कुसुम—श्रीमती गिरिजादेवी	१५२+८	१	३	।।=), १=)
देवी द्रौपदी—कविवर श्रीरामचरित उपाध्याय	५४+६	२	०	।=), ।।।)
लक्ष्मी—श्रीगिरिजाकुमार घोष	७६+४	४	०	।=), ।।)
महिला-मोद—साहित्य-महारथी पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी	६८+८	१	१६	।), ।=)
जच्चा—हिन्दू-विश्वविद्यालय, काशी के कविराज श्रीप्रतापसिंहजी वैद्य	१५८+८	१	०	।।=), १=)
देवी सती—मुंशी ज़हूरबख़्शजी हिन्दी-कोविद	११६+४	२	०	।।), १)
वनिता-विलास—साहित्य-महारथी पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी	९०+४	३	१	।=), ।।)
गुप्त संदेश—(दो भाग) डॉक्टर युद्धवीरसिंहजी। छप रहा है, मूल्य लगभग				१)
भारतीय स्त्रियाँ—मू० ले०, श्रीमती महारानी साहिबा बड़ोदा ;	२८४+१६	१	१	१), १।।)
देवी पार्वती—मुंशी ज़हूरबख़्शजी हिन्दी-कोविद	१४२+८	१	५	।।=), १=)
नल-दमयन्ती—मुन्शी ज़हूरबख़्शजी हिन्दी-कोविद	१५२+४	१	०	।।=), १=)
सती सावित्री—अध्या० हरिप्रसाद द्विवेदी 'श्रीहरि'	१४२+४	१	०	।।), ।।।), १)
देवी सीता—मुंशी ज़हूरबख़्शजी हिन्दी-कोविद	२५४+८	२	१३	१), १।।)
देवी शकुंतला—श्रीहरिप्रसादजी द्विवेदी	१०२+४	२	२	।।), १)
स्त्रियों के व्यायाम—विद्यावाचस्पति पं० गणेशदत्त शर्मा गौड़	१७२+१२	१	३०	१), १।।)

बालकोपयोगी सस्ता साहित्य

पुस्तक — लेखक	पृष्ठ	रंगीन चित्र	सादे	मूल्य
सुघड़ चमेली—पं० रामजीदास भार्गव	३०	०	३	-)
भगिनी-भूषण—स्वर्गीय गोपालनारायणसेनसिंह बी० ए०	३०			-)
बाल-नीति-कथा—(दो भाग) मू० ले०, प्रिंसिपल ध्रुव	४६२+२०	२	०	२), ३)
गधे की कहानी—पं० भूपनारायणजी दीक्षित बी० ए०, एल० टी०	१२२+४	१	६	।।), १)
लड़कियों के खेल—श्रीगिरिजाकुमार घोष	७८+४	१	६	।-), ।≡)
नटखट पाँड़े—पं० भूपनारायणजी दीक्षित बी० ए०, एल० टी०	१९६	४	१०	१), १।।)
परोपकारी हातिम—मुंशी ज़हूरबख़्शजी, हिन्दी-कोविद	२०२+४	२	२	१), १।।)
इतिहास की कहानियाँ—मुंशी ज़हूरबख़्शजी, हिन्दी-कोविद	८२	१	३	।=), ।।)
विचित्र वीर—हास्यरसावतार पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी	१३२+१२	०	५	।।), १)
हँसी-खेल—श्रीजगमोहन विकसित	११८+८	०	४२	।।), १)
सुनहरी नदी का राजा—स्वर्गीय पं० ईश्वरीप्रसादजी शर्मा	५०+४	२	७	।=), ।।=)
भगवान् गौतम बुद्ध—स्वर्गीय पं० ईश्वरी प्रसादजी शर्मा	६४+८	१	०	।), ।=)
युधिष्ठिर—श्री कृष्णगोपालजी माथुर	११४+४	१	०	।।), १)
क़ाग़ज़ी करतब—श्रीयुत जी० पी० श्रीवास्तव	९६+८	०	१०	।।=), १=)
घरेलू कहानियाँ—कुमारी गोपालदेवी हिन्दी-प्रभाकर				।=)

गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, लखनऊ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

केवल विज्ञापन के काम 'सरस्वती-प्रेस' काशी में मुद्रित।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक-मन्दिर की अपनी

'जागरण'-ग्राहकों को पौन मूल्य में

दस पुस्तकें !

पेरिस का कुबड़ा—मूल लेखक—विक्टर ह्यूगो। अनुवादक—श्रीयुत दुर्गादत्त सिंह, बी० ए०, एल-एल० बी०। अत्यन्त आकर्षक एवं उपदेशपूर्ण फ्रेंच उपन्यास। ३)

आँधी—हिन्दी के परम यशस्वी कहानी-लेखक 'प्रसाद' जी की सरस-भावपूर्ण ग्यारह कहानियाँ। २)

हिन्दी की श्रेष्ठ कहानियाँ—संग्रह-कर्त्ता—'भारत'-सम्पादक पं० नन्ददुलारे वाजपेयी, एम० ए०। हिन्दी के १३ कलाकुशल कथाकारों की चुनी हुई १३ श्रेष्ठ कहानियाँ। १॥)

एक घूँट—हिन्दी के स्वनामधन्य नाटककार श्रीयुत जयशंकर 'प्रसाद'जी की एकांकी नाटिका। ॥)

नर-पशु—रूसी उपन्यास, मैक्सिम गोर्की-लिखित। प्रकाशित हो गया। १)

वे तीनों—मूल लेखक, मैक्सिम गोर्की। अनुवादक—पं० छविनाथ पाण्डेय, बी० ए०, एल-एल० बी०। अत्यन्त रोचक एवं शिक्षाप्रद रूसी उपन्यास। २)

धूप-दीप—पं० विनोदशंकर व्यास की लिखी हुई पाँच राजनीतिक कहानियाँ। ॥।)

बुढ़िया पुराण—श्री महावीरप्रसाद गहमरी-लिखित, यह पुस्तक स्त्रियों के लिये अपने विषय की अकेली है। ॥)

भूली बात—हिन्दी के सिद्धहस्त कहानी-लेखक पं० विनोदशंकर व्यास की युगान्तर-कारिणी कहानियाँ। १)

शराबी—हिन्दी के बड़े मस्त और ज़बरदस्त उपन्यास-लेखक श्री 'उग्र' जी का हड़कम्पी उपन्यास। २)

प्रकाशक—पुस्तक-मन्दिर, काशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाह-मन्दिर

सांसारिक आपत्तियों में डूबे हुए मनुष्यों के लिए यह उपन्यास ईश्वरीय सन्देश है। विपत्ति-काल में मनुष्य को किस प्रकार स्थिरचित्त होना चाहिए; इसका अत्यन्त सुन्दर वर्णन आपको मिलेगा।

स्त्रियों के लिए यह पुस्तक अमूल्य रत्न है। अपर्णा देवी का चरित्र पढ़कर प्रत्येक स्त्री अपना जीवन सफल बना सकती है। उसका आदर्श पति-प्रेम, एवं दारुण परिस्थिति में सर्वदा प्रसन्न रहते हुए पति को क्षणमात्र के लिए भी दुखी न होने देना वे अलौकिक गुण हैं, जिन्हें प्रत्येक भारतीय रमणी को हृदयङ्गम करना चाहिए। मूल्य १॥)

नीच

यह नाटक भारतीय समाज में जीवन-संग्राम का जीता-जागता चित्र है। हिन्दू-संस्कृति के स्तम्भ, वानप्रस्थ जीवन व्यतीत करनेवाले संन्यासी के अधरों से एक प्रेम का मधुर गान निकलकर इस नाटक के वायु-मण्डल में एक विचित्र प्रकार की मस्ती, सुषमा, श्री, देवत्व का प्रभाव डाले हुए है। यह नाटक प्रकृति, सत्य तथा मानव-हृदय के विकारों के युद्ध की छाया है। मूल्य केवल १) रु०

प्राणेश्वरी

ख्यातनामा कहानी-लेखक डॉ० धनीराम प्रेम का यह हास्यरसपूर्ण नाटक सिर से पैर तक मौलिक है। लन्दन के सैकड़ों नाटकों के व्यक्तिगत अनुभवों के बाद यह नाटक लिखा गया है। इसमें ऐसे-ऐसे सुन्दर गाने आपको मिलेंगे कि पढ़कर हृदय मुग्ध हो जायगा। बातचीत इतनी मनोहर, हास्यपूर्ण, मनोरञ्जक तथा मौलिक है कि हँसते-हँसते पेट में बल पड़ जायँगे। मूल्य लागत मात्र केवल ।।।)

मृदुदल

इस कृति के भीतर आपको निखरे हुए सौन्दर्य का बोध होगा। अनुभूति की सुकुमारता और मादकता, जीवन-मल को धो डालनेवाली वेदना की करुण विवृति, अन्धकार के ऊपर प्रकाश की विजय, कवित्वमयी भाषा के साथ मङ्गलमय भावों का सुन्दर समन्वय इसी पुस्तक में पावेंगे—और पाकर निहाल हो जायँगे। केवल एक कहानी पढ़कर आप आनन्द से गद्गद हो जायँगे। मूल्य केवल २।) रु०

अञ्जलि

यह उन अनमोल कहानियों का संग्रह है, जो आज तक हिन्दी-संसार में दुर्लभ थीं। इस संग्रह की प्रत्येक कहानी अत्यन्त रोचक, मधुर एवं अमूल्य है। जिस विषय को लेकर जो कहानी लिखी गई है, उसका उसमें सजीव चित्र खींचा गया है। किसी में दीनता की करुण पुकार भरी है तो किसी में वीर-रस की धारा प्रवाहित हो रही है। अधिक प्रशंसा न कर हम इतना ही कहना चाहते हैं कि ऐसी कहानियाँ आपने आज तक न पढ़ी होंगी। मूल्य ।।।)

ईसाई-बाला

यदि आप राष्ट्रीय एवं शिक्षाप्रद उपन्यास पढ़ना चाहते हैं तो एक बार इसे अवश्य पढ़ें। इसके कुछ पृष्ठ पढ़ते ही आप आनन्द से गद्गद हो उठेंगे। एक ईसाई युवती भारत की गुलामी से व्याकुल होकर किस प्रकार अपने भोग-विलासों को ठुकरा देती है और स्वातन्त्र्य-संग्राम में कूदकर किस प्रकार अनेकों यातनाएँ झेलती हुई अपने ध्येय को सिद्ध करती है—इसका सनसनीदार वर्णन पढ़कर आप रोमाञ्चित हो उठेंगे। शीघ्र ही मँगा लीजिए; केवल थोड़ी सी प्रतियाँ और शेष हैं। मूल्य लागत-मात्र ।।।)

मँगाने का पता—चाँद प्रेस लिमिटेड, चन्द्रलोक—इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सिर्फ़ कवर इंडियन प्रेस, लिमिटेड, बनारस-ब्रांच में मुद्रित

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Rani

Rani

Compiled
1999-2000

Rani

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri